महाकाव्यम्

डॉ. शिवदत्त शर्मा चतु

वेदः

चर्चामहाकाव्यम्

लेखक :

डॉ० शिवदत्तशर्मचतुर्वेदः

अध्यक्षः

साहित्यविभागस्य

संस्कृतविद्याधर्मविज्ञानसंकायः

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयः, वाराणसी

सम्पादक :

डॉ० विनोदराव पाठकः

साहित्याध्यापकः

श्रीरणवीर संस्कृत विद्यालयः,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयीयः, कमच्छा वाराणसी

प्रकाशक :

शारदा प्रकाशन संस्थान,

वाराणसी-२२१००१

प्रकाशक :
शारदा प्रकाशन संस्थान
शारदा भवन'
डी० ३६/४४, अगस्त्यकुण्ड,
वाराणसी-२२१००१ (उ० प्र०)

दूरध्वनि : ५६३२७

प्रथम संस्करण : १९८७

मूल्य : १५०/-

मुद्रक :
सुदर्शन मुद्रक
४९, उत्तर बेनिया बाग,
वाराणसी–२२ ००१
दूरध्वनि : ६५७१८

CHARCHA MAHAKAVYAM

By :

Dr. Shivdutt Sharma Chaturvedi
Head,

Department of Sahitya,
Sanskrit Vidya Dharma Vigyan Sankaya
Banaras Hindu University
Varanasi

FORWARDED FREE OF COST AND
WITH THE COMPLIMENTS OF THE
DEPARTMENT OF EDUCATION,
GOVERNMENT OF INDA, NEW DELHI.

Edited by :

Dr. Vinodrao Pathak
Sahityadhyapak,

Sri Ranvir Sanskrit Vidyalaya
Banaras Hindu University
Varanasi

Publisher :

Sharda Prakashan Sansthan

Varanasi

Publisher :
Sharda Prakashan Sansthan
SHARDA BHAWAN
44 Augustya Kund,
Varanasi 221001
Phone : 56327

Edition : 1988

Price—150/-

Printer :
Sudarshan Mudrak
42, Uttar Benia Bagh,
Varanasi-221001

पुरोवाक्

।। श्रीगुरुगणेशः ।।

अमन्दानन्दसन्दोहमकरन्दकरम्बिता ।
अल्पवल्ली नवार्थानां जयतात् कविभारती ।।

अथेदं प्रथमतया प्राकाश्यमुपनीयमानमभिनवं महाकाव्यं 'चर्चा-महाकाव्य'मित्यभिधया संस्कृतसाहितीसस्पृहस्वान्तानां मनास्यामोदयदुदयमयते ।

एतदुपनिबद्धा कविस्तत्रभवान् डा० शिवदत्तशर्मचतुर्वेद इत्याख्यातः साम्प्रतिकेषु नूतनेषु संस्कृतभारतीकविषु किमपि अम्लानमयातयामं नूतनप्रतिभाभास्वरञ्च पदमधितिष्ठतीति प्रमोदो नः ।

अयञ्च तत्रभवतां शिवसायुज्यमुपेयुषामशेषविद्यापगासङ्गमसागरायमाणानां दिङ्मण्डलमण्डनायमानयशोज्योत्स्नावितानानां महामहोपाध्याय श्रीगिरधरशर्मचतुर्वेदमहोदयानां तनयः तातचरणेभ्य एव सुगृहीत शास्त्रनयस्तथाऽपि सविनयः सहृदयधुरीणश्चेति प्रायेण परिचीयते विपश्चिदपश्चिमैः ।

'कार्यगुणाः कारणगुणानारभन्ते' इत्येषा भणितिरस्य विषये सर्वथा चरितार्थेति न सन्देहः । आनुवंशिकसंस्कारो हि बलवत्तरो भवति तेनैव प्रतिभासंस्कारो तदभिवृद्धिश्चेत्युभयं साधयितुं शक्यते । साहित्यव्याकरणादि शास्त्रेषु नानाविधप्रबन्धनिर्माणेषु सरसमधुरकाव्यगुम्फनेषु च निरर्गलोऽस्य रचनाप्रवाह इत्येतदीयकृतिपरिशीलनेन निर्णीयते ।

अनेन महानुभावेन पुरातन-नूतनान् विषयसन्दोहानक्षिलक्ष्यीकृत्य काचिन्मनोहारिणी आर्यावृत्तोपनिबद्धा पद्यतरङ्गिणी महाकाव्यात्मना परिणमिता जागर्ति ।

'सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः' इत्यादीनि प्राचां लक्षणाण्युपलक्षणप्रायाण्येव, अन्यथा रघुवंशादीनां महाकाव्यत्वं बाध्येत, तत्रहि सत्यपि रघोः प्राधान्ये तद्वंशीयानां नृपतिपुङ्गवानां साङ्गोपाङ्गम् वर्णनमपि दृश्यते, तावता तस्य न महाकाव्यत्वव्याघातः ।

अस्ति च महाकाव्यस्य बहुविषयावगाहितायां प्राचामपि सम्मतिः । तथा च भामहस्य भणितिः—

"न स शब्दो न तद्वाच्यं न स न्यायो न सा कला ।
जायते यन्न काव्याङ्गमहो भारो महान् कवेः ।।"

एवमाचार्यवाग्भटेनाप्यभाणि—

"अधीत्य शास्त्रण्यभियोगयोगादभ्यावसश्यार्थपदप्रपञ्चः ।
तं तं विदित्वा समयं कवीनां मनःप्रसत्तौ कवितां विदध्यात् ।।"

अनयैवोपदेशदिशा प्रवर्तमानोऽयं कविः प्रकृते चर्चामहाकाव्ये बहुविधेषु विषयेषु विद्वत्परिचयेषु च लेखनीं व्यापारयामास ।

आर्याच्छन्दस्तावत् गेयप्रायं श्रुतिमधुरश्च सचेतसामिति तेनैव पथा उपनिबद्धचमानोऽयं विषयः विन्यासवैशद्यमाबबन्ध । आर्याशतकपरम्परा प्राक्तनैः कविशेखरैरपि परिक्षुण्णा मान्यतामारुरोहेति नाऽविदितं विदुषाम् । गाथासप्तशतीकारो मुक्तकविधया सरसान् विषयानुपनिबध्नन् सर्वेषां चेतांस्यावर्जयामास ।

अलङ्कारशास्त्रे तदीयपद्यानामुदाहरणतया परिग्रहणमेव तेषां विशेषमुपदर्शयति, एवमेव गोवर्धनकवेरार्यासप्तशती सहृदयसमाजे लब्धप्रसरा । ततोऽर्वाचीनश्चूडान्तपाण्डित्यशाली विश्वेश्वरपण्डितोऽपि एकामार्यासप्तशतीं निबबन्ध, सा तु न तथा प्रसिद्धा, काश्यामेव मुद्रिता चाऽभवत् । इत्यार्योपनिबद्धकाव्यस्य काव्यत्वमहाकाव्यत्वव्यवहारे न कोऽपि प्रतिबन्धः प्रतिभाति । आर्यावृत्तविषयेऽप्यस्ति किञ्चिद्विवेचनीयम्—सुप्रसिद्धे तल्लक्षणे 'प्रथमं द्वादशमात्रास्ततो पञ्चदश पुनर्द्वादशमात्रास्ततोऽष्टादशेति तन्नियामकमुपलभ्यते ।' परमार्यभेदानां बाहुल्यादनन्तप्रकारो मात्रासन्निवेश-

इति तद्भेदप्रभेदेषु नानाविधाः प्रकारा अन्तर्भवन्तीति मात्राणां न्यूनाधिक्यं न दोषावहमिति प्राचीनैर्भट्टनारायण-श्रीभास्कररायप्रभृतिभिर्निरणायि स्वीयग्रन्थेषु। अतस्तया दृशा न कोऽपि वृत्तदोषोऽत्र परिभावनीयः सहृदयैः।

विषयसन्निवेशदृष्ट्या शिष्टाचारपरम्परामनुसरता कविना देवतासर्गादेव प्रारब्धो लेखनीव्यापारः। सरसमधुरैः श्रुतिमात्रेण चार्थप्रत्यायकैः शब्दैरुपगुम्फनं मनःप्रसत्तिमादधाति। प्रसादमाधुर्ययोर्यथास्थानं तृतीयस्यौजसोऽपि च गुणस्य ग्रहणादन्तरङ्गसौन्दर्यं परिपोष्यते। अलङ्काराश्च बलादनाकृष्टा रसानुगामिनश्चेति कुत्राऽपि न भारायन्ते।

एवं महाकाव्यत्वोचिता सामग्री सर्वाऽपि सन्निधापिता कविना प्रबन्धमहिमानमुत्तम्भयितुं प्रगल्भते।

गोस्वामितुलसीदास-भारतेन्दुप्रभृतीनां भाषाकवीनामपि वर्णनमाचरता निष्पक्षपाता दृष्टिरत्र परिशोधिता। विशिष्टानां विदुषां वैज्ञानिकानाञ्च परिचयचर्चया बहूपकृतं नूतनानां संस्कृतसेवकानामित्यपि नास्ति सन्देहः। यात्रादीनां व्यावहारिकविषयाणामप्युपादानं नवं पन्थानमभिलक्षयति, चरमे च भागे काव्यतत्प्रयोजनादीनां साहितीसम्भाराणां सरसमुपादानं मनोहरति।

एवमस्य नूतनस्य महाकाव्यस्य निर्मित्या भगवत्याः सुरभारत्या रत्नभाण्डागारमभिवर्धयन् दिष्ट्या वर्धते कविवरः श्रीशिवदत्तशर्मचतुर्वेदः। सहृदयाश्चास्य परिश्रममक्षिनिक्षेपैः साधुवादैश्च सफलीकुर्युरिति मे विश्वासः।

भगवत्या जगन्मातुः करुणाकटाक्षसुधया सिक्तः कविरेष चिरञ्जीवन् कुन्देन्दुबन्धुरं यशःपुञ्जं विन्दतु इति श्रीचरणयोर्निवेदयते।

गुरुपौर्णिमा, सं० २०४४ **बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते**

बीसवीं शती में संस्कृतकविताधारा एवं चर्चा महाकाव्यम्

काव्यरचनापद्धति शास्त्रीय विकासक्रम में अपना एक स्वतन्त्र वैशिष्टय रखती है, विविधविषयों में विद्वत्ता प्राप्त कर लेना सुकर हो सकता है, परन्तु कविकर्म के लिए पूर्व संस्कार ही उसे कवि बना सकते हैं, इसलिए तो यह प्रसिद्धि है कि—"काव्यं तु जायते जातु कस्यचित् प्रतिभावतः।"

महाकवि कालिदास, बाण, माघ, भारवि, श्रीहर्ष सदृश प्राचीनकवियों के विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नही है, क्योंकि ये कविगण हम सबके आदर्श रहे है। आचार्य मम्मट ने भी कविशिक्षा के प्रसंग में 'काव्यज्ञशिक्षयाभ्यासः' ऐसा कहा है।

आज बीसवीं शताब्दी में भी वही काव्य की अजस्रजारा उसी रूप में अविरल चली आ रही है। संस्कृत कविता की परम्परा सम्पूर्ण भारत में कुछ न्यूनाधिक्य रूप में देखने को आज भी मिलती है। परन्तु हम विशेषरूप से वाराणसी, जयपुर, ग्वालियर एवं मध्यभारत के कुछ अन्य भागों को वाग्देवी के प्रसाद से विशेष प्रभावित देखते हैं। प्राचीन पत्रपत्रिकाओं में सूक्तिसुधा, मित्रगोष्ठी, सुप्रभातम्, सहस्रांशु, सूर्योदय, संस्कृतरत्नाकर इत्यादि पत्रिकाओं के प्रकाशन से तात्कालिक भारतीय प्रतिभाओं को एक स्वस्थ मार्गनिर्देशन मिलता रहा, ऐसा उनका मूल्यांकन करने पर हम समझ सकते हैं। प्राचीन कवियों में जयपुर के श्रीकृष्णरामकवि, श्रीहरिवल्लभकवि तथा वाराणसी के म० म० गंगाधर शास्त्री, म० म० रामशास्त्री, म० म० लक्ष्मणशास्त्री, म० म० रामावतार शर्मा, म० म० देवीप्रसाद चक्रवर्ती, म० म० नारायण शास्त्री खिस्ते प्रभृति विद्वद्शिरोमणियों का अवदान अविस्मरणीय है। इन मूर्धन्य मनीषियों का युग एक संक्रमणकाल था, जहाँ प्राचीन परम्परा के साथ नवीन परम्परा भी जुटी रहती थी, म० म० लक्ष्मण शास्त्री तैलंग ने तो शेक्सपीयर के सभी नाटकों का पद्यानुवाद तक किया था, म० म० नारायण शास्त्री खिस्ते ने काशी के तात्कालिक

कीर्तिस्तम्भरूपी संस्कृत के विद्वानों पर गद्य-पद्यात्मक चम्पू रूप में 'विद्वच्चरित-पञ्चकम्' लिखकर महान् उपकार किया। इतना ही नहीं अपितु अंग्रेजशासकों में भी कतिपय संस्कृत सेवापरायण शासक थे जिन्होंने अपनी भाषाके माध्यम से संस्कृत की रचनाओं का आदान-प्रदान किया।

संस्कृत में काव्यरचना के लिए किसी भी विषय का द्वार बन्द नहीं होता। उदाहरण स्वरूप हम काश्मीरके क्षेमेन्द्र को ही देखे तो उनकी रचनाओं में समाज के सर्वाङ्गीण विकास को हम देखते हैं, उनमें कवित्व का समन्वय दृष्टिगोचर होता है। गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज, वाराणसी के तत्कालीन प्रिन्सिपल डॉ० ग्रिफीथ साहब ने तो रामायणका आंग्लभाषा में अनुवाद किया था उसका प्रमाण आज भी हम सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के रूप में परिवर्तित उस कॉलेज के परिसर की भित्तियों पर उत्कीर्ण श्लोकों से जान सकते हैं।

"तमसा तटकोकिलेन यत् चरितं कूजितमूर्जितं हरेः।
तदिहैव सुखं निषीदता ग्रिफीथेनांग्लगिराप्यगीयत ॥"

इस प्रकार की अनेक रचनाएं है जिनसे विदेशी शासक बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने यहां के उस समय के कवियों की रचनाओं को सादर स्वीकार कर अपनी भाषा में उसे प्रसिद्ध किया।

संस्कृत में पद्यरचना के क्षेत्र में इसी शताब्दी में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, म० म० नारायण शास्त्री खिस्ते तथा तत्कालीन अन्य विद्वानों ने नये प्रयोग का प्रारम्भ किया। यह एक स्वतन्त्र बात है कि आजकल के प्राचीन विद्वानों की दृष्टि में प्राचीनकाव्यरचना शैली में शब्दशय्या, अर्थगाम्भीर्य, नोंक-झोक की प्रबलता थी, ऐसा उनका मत है परन्तु युग-परिवर्तन के साथ-साथ विचारों में तथा रचना-शैली में, काव्य के विन्यास में बहुत उतार-चढ़ाव आ जाता है लेकिन हम देखते हैं कि बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में नई-नई नए युग की रचनाएँ हो रही है, और पूर्वापेक्षा आज विशेषरूप से संस्कृत के कवियों के सम्मेलन, संस्कृत की पत्र-पत्रिकाओं में आधुनिक रचनाओं का प्राचुर्य हो रहा है, जिससे आपामर जनता में भी संस्कृत कविता के प्रति एक आकर्षण उत्पन्न होता प्रतीत हो रहा है। यह आज

की नई प्रतिभाओं की ही देन है। आज काव्य रचना के क्षेत्र में प्रोफेसर बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते, पं० वसन्त त्र्यम्बक शेवडे, प्रो० श्रीधर भास्कर वर्णेकर प्रो० श्रीनिवास रथ आदि अनेक महनीय कविगणों ने पर्याप्त रूपसे आधुनिक कविता को प्राचीन-नवीन सज्जा के साथ समलंकृत कर आगे आने वाली परम्परा के लिए एक आदर्श प्रस्तुत किया है।

इसी प्रसङ्ग में उल्लेखनीय है डॉ० शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी का काव्य क्षेत्र में अवदान। आचार्य श्रीचतुर्वेदीजी का आनुवंशिक संस्कार प्राचीन एवं नवीन शैली के मूर्धन्य विद्वान् पिताश्री म० म० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी जी की छत्रछाया में पल्लवित एवं पुष्पित हुआ है। इसीलिए श्रीचतुर्वेदीजी की रचना में दोनों का संगम देखने को मिलता है। विशेषकर कविता के क्षेत्र में और वह भी अतिसरल सामान्य संस्कृत के जानने वाले लोगों के मन को आल्हादित करने वाली ऐसी रचनाओं से आपकी कृति सर्वथा यशस्करी हुई है। डॉ० शिवदत्तशर्मा चतुर्वेदी जी की रचनाओं को यदि हम "आधुनिक शय्या" या "नवीन विधा" कहे तो अनुचित नहीं होगा। उसमें भी उन्होंने आर्याच्छन्दों का ही प्रयोग किया है। प्राचीनकाल में 'गाथा सप्तशती' 'आर्यासप्तशती' नामक ग्रन्थों में आर्यानिबद्ध रचनाएं ही मिलती हैं एवं महाराष्ट्र के सन्त मोरोपन्त (मयूरपन्त) कविने भी आर्याच्छन्दोबद्ध विपुल रचनाएं की है। यद्यपि उक्त आर्याप्रमुखग्रन्थों का विषय प्राचीन विषयों का उपपादन मात्र ही रहा है।

परन्तु आचार्य चतुर्वेदी जी ने प्रकृत 'चर्चामहाकाव्यम्' में आधुनिक विषयों के साथ ही साथ प्राचीन परम्परा का भी यथास्थान समुचित निर्वाह किया है। आर्याच्छन्द के विषय में किसी प्राचीन कवि की उक्ति समीचीन ही प्रतीत होती है।

सरसा साऽलङ्कारा सुपदन्यासा सुवर्णमयमूर्तिः।
आर्या तथैव भार्या न लभ्यते पुण्यहीनेन ॥"

यदि हम यह कहें कि साम्प्रतिक युग में आर्योपनिबद्ध ग्रन्थ रचना विधा की उपेक्षा की गई हैं तो कोई अत्युक्ति न होगी। परन्तु प्रस्तुत लेखक ने अपनी काव्यकला की तूलिका से इसे विपुल रूप से समलङ्कृत कर महान् उपकार किया है।

कृति के प्रारम्भ में प्राचीन परम्परा का अनुगमन करते हुए कविबर ने देवपूजा सर्ग लिखा, जिसमें देवताओं की महत्ता, भक्ति व श्रद्धा का विशेष स्थान है, दूसरे जगदम्बा सर्ग में चैतन्य की अधिष्ठात्री भगवती शक्ति का स्तवन किया गया है। इसके बाद भगवान् श्रीकृष्ण की अलौकिकता तथा उनके असीम सामर्थ्य का वर्णन किया है। इसके साथ ही वृन्दावन वर्णन तथा सामाजिक एवं शास्त्रीय दृष्टि से उपयुक्त शब्द शैली में गोमाता का भी उपपादन किया है। पश्चात् मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र जी का स्तवन और उनकी विशेषताओं को कवि ने सुललित पदावली में प्रस्तुत कर भक्त जन मानस को आह्लदित किया है। अग्रिम सर्ग में आदि कवि वाल्मीकि एवं गोस्वामि तुलसीदास का सजीव वर्णन प्रस्तुत किया है। इतना ही नही आधुनिक हिन्दी युग के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र उसके बाद अपने पूज्यपिता म० म० गिरधर शर्मा चतुर्वेदीजी की असाधारण विद्वत्ता तथा संस्कृत जगत् में उनके अवदानों का प्रतिपादन है। इसी व्यक्तित्व एवं कृतित्व की शृंखला में आधुनिक युग के महामनीषी म० म० गोपीनाथ कविराज जी के नमनीय गुणों को चित्रित किया हैं। अनन्तर जयपुर के प्रख्यात् कवि भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, चन्द्रधरशर्मा गुलेरी, महान् वैज्ञानिक सी० वी० रमण, भारत रत्न तथा स्वतन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद, आधुनिक युग के विचारप्रवर्तक कार्ल मार्क्स आदि को सादर स्मरण करते हुए उनके जीवन के विविध पक्षों को काव्यमाला की इस शृङ्खला में कवि ने सुपदन्यासपूर्वक गुम्फित किया है।

ग्रन्थ के अन्त में कवि ने विभिन्न स्फुट और वर्तमान में चर्चित ऐसे विषयों का संकलन सुन्दरतम रीति से प्रस्तुत किया है। जैसे नारीशिक्षा सर्ग, शोध सर्ग इत्यादि। इसके बाद साहित्य शास्त्र की रचनात्मक शिक्षा के लिए मम्मट आदि प्रमुख आचार्यों की रचनाशैली को अतिसंक्षेप व सरल ढंग से प्रस्तुतकर काव्य शास्त्र के निष्कृष्टतत्व को संक्षेप में समझाने का मार्ग दिखलाया है। अन्ततः मनः प्रसादन हेतु **'मधुरेण समापयेत्'** इस सुमधुर वाक्य को दृष्टि में रखते हुए हास्य रस के रचना के भी कतिपय सर्ग इस महनीय 'चर्चा महाकाव्य' में सन्निवेशित है। प्रकृत महाकाव्य में कवि ने महाकाव्यों में प्रचलित प्रथम सर्गः, द्वितीय सर्गः

इस विधा को तत्तत् सर्गस्थ विषयवस्तु के नाम से सम्बोजित कर उसी नाम से सर्ग बन्ध का प्रणयन किया गया है ।

डॉ० शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदीजी की लेखन शैली सर्वजनोपयोगी, सुबोध एवं प्रसादगुणयुक्त है, इनकी विशेषता यह है कि इन्होंने कहीं भी किसी भी विषय में दुराग्रहपूर्वक अपने मत का उपस्थापन नहीं किया है ।

इस प्रकार वर्तमान युग के अनुरूप लेखक का उपहार नवयुग के जिज्ञासु, रसिकों एवं समालोचकों के लिए विशेषकर काव्यरचना के क्षेत्र में प्रविष्ट छात्रों के लिए एक उत्साह-वर्धक मार्गदर्शक 'रत्न' सिद्ध होगा ऐसा मेरा विश्वास है ।

मेरा सुधीवर्ग से, समीक्षकों, गुणग्राहकों एवं विद्यार्थियों से अनुरोध है कि इस कृति का अनुशीलन करते हुए लेखक के श्रम को सार्थक करें और संस्कृत वाङ्मय की अभिवृद्धि में महनीय योगदान करें ।

रथयात्रा, सं० २०४४ **विनोदराव पाठक**

चर्चामहाकाव्यस्थ

सर्गक्रमः

विषयः	पृष्ठसंख्या
१—देवपूजासर्गः	१
२—जगदम्बासर्गः	१३
३—श्रीकृष्णसर्गः	२५
४—वृन्दावनसर्गः	३३
५—गोसेवासर्गः	४५
६—श्रीरामचन्द्रसर्गः	५७
७—वाल्मीकिसर्गः	६९
८—गोस्वामितुलसिदाससर्गः	७४
९—भारतेन्दुसर्गः	८६
१०—म०म० गिरधरशर्मचतुर्वेदसर्गः	९२
११—म०म० गोपीनाथकविराजसर्गः	१०४
१२—कविशिरोमणिसर्गः	११०
१३—श्रीचन्द्रधरशर्मगुलेरिसर्गः	११६
१४—सी० वी० रमणसर्गः	१२८
१५—श्रीराजेन्द्रप्रसादसर्गः	१४०
१६—कार्लमार्क्ससर्गः	१४६
१७—विद्यासर्गः	१५८
१८—यात्रासर्गः	१७०
१९—काव्यप्रयोजनाध्ययनसर्गः	१८२
२०—काव्यकारणसर्गः	१९४
२१—शोधसर्गः	२०६
२२—नारीशिक्षासर्गः	२१८
२३—यावत्-तावत्सर्गः	२२४
२४—हा हा हू-हूसर्गः	२३६

देवपूजासर्गः

[१]

सुखसंसारानुभवं कर्तुं देवाः समाराध्याः ।
तेषामेवौदार्यैः सुखसंसारः समायाति ॥

[२]

देवाः सुसूक्ष्मजगतां नियामकाः सन्ति नूनं ते ।
सर्वविधं सौन्दर्यं दातुं सामर्थ्यसंयुक्ताः ॥

[३]

देवानां सत्कृपया सर्वे विषयाः समीहिता ये स्युः ।
सत्वरमहमहमिकया सर्वं रूपं प्रदर्शयन्त्येव ॥

[४]

देवानां पूज्यत्वं येषां बुद्धौ समायातम् ।
तेषां कर्मणि नितरां सौकर्यं जायते सर्वम् ॥

[५]

देवाः सन्ति समन्तात् प्रभावमालाभिरापूर्णाः ।
तेषां कृपाकटाक्षेष्वाऽस्ते कल्याणमयधारा ॥

[६]

अस्माकं पूर्वतमैः पुरुषैर्देवाः समाराद्धाः ।
सर्वं कार्यं तेषां निर्विघ्नं साधु संजातम् ॥

[७]

जीवनमथ संसारे सर्वैः कष्टैरभिव्याप्तम् ।
देवानां श्रद्धातो भवतितरां श्रेष्ठतायुक्तम् ॥

[८]

भूमीयं धन्याऽऽस्ते देवानां मन्दिराणि यत्पृष्ठे ।
जीवनसुखसञ्चारे श्रद्धासर्वस्वभूतानि ॥

[९]

देवकृपया नूनं सर्वः क्लेशो विदूरितो भवति ।
तेभ्यः प्रणाममात्रात् शोभा सर्वा समीहिताऽऽयाति ॥

[१०]

संसारे देवानां सर्वाऽभीष्टप्रदं स्थानम् ।
सम्यक् संस्थितमाऽस्ते तेनैवेयं सुरम्यपरिपाटी ॥

[११]

देवाः सदा प्रणम्याः सर्वेष्वपि देशकालेषु ।
सर्वास्वपि च समन्ताच्छोभनघोरास्ववस्थासु ॥

[१२]

देवानां परिचर्चा शब्दमयी सेयमर्चना तेषाम् ।
नाना जन्मसमर्जितपुण्यमयी काऽपि रेखाऽस्ते ॥

[१३]

देवा एव नितान्तं संसारे सर्वसिद्धीनाम् ।
सम्यग्वितरणसिद्धास्ते वन्द्याः सर्वभावेन ॥

[१४]

सर्वासां शक्तीनामाकारा एव ते देवा; ।
सम्यग् सुपूजिताः स्युर्मनसा वाचाऽथ कायेन ॥

[१५]

देवाः सेवासुलभास्सेवेयं सर्वभावेन ।
तेभ्यः समर्पणं तत् प्रसादमालासमाविष्टम् ॥

[१६]

देवानां महिमानः सन्त्येतास्त्रिभुवनव्याप्ताः ।
सर्वविधं सत्कार्यं देवा एवाऽनुगृह्णन्ति ॥

[१७]

निखिलः प्राणिसमूहः स्थूलां दृष्टिं विधारयत्येताम् ।
प्राणे रहस्यभूतं जानन्त्येते च दर्शिनो देवाः ॥

[१८]

देवानां सम्बुद्धौ वेदानां मन्त्रमालेयम् ।
आसृष्टेराप्रलयं समुल्लसन्ती चिराल्लब्धा ॥

[१९]

सर्वेषां भूतानां गूढं रूपं विधारयन्तोऽमी ।
विश्वविधारितसुषमासाम्राज्यानां प्रकल्पका देवाः ॥

[२०]

शोभितशोभाभारैर्विभवैरापूर्यमाणानाम् ।
देवानां संस्मरणं कल्याणानां प्रदायकं लोके ॥

[२१]

दिनमणिरेष समुदितो देवानीकस्वरूपाणाम् ।
सर्वविधसिद्धविद्याभाण्डाराणां गृहं भव्यम् ॥

[२२]

चिन्मयतासम्प्राप्तिर्जयितैवाऽथ देवसेवातः ।
सुप्ताश्चैते शुभ्रा भावाः सद्यस्तरंगिता दृष्टाः ॥

[२३]

देवानां सा काचिद् दृष्टिः पतिता यदा जन्तौ ।
पूर्णतमे साम्राज्ये सम्यक् संस्थापितं कुरुते ॥

[२४]

को वा जानीयादथ देवानां रूपमद्भुतं तदिदम् ।
ते चेत् कृपां स्वकीयां दद्युः किमसम्भवं तत्र ॥

[२५]

मानव एव यदा वा शरणं संयाति देवानाम् ।
ते च प्रसन्नभावे संयाताः किं न यच्छन्ति ॥

[२६]

तेषामथ देवानां प्रसादमासाद्य मनुजोऽयम् ।
सर्वानकल्पितांस्तान्संभारान्धारयत्येव ॥

[२७]

संसृतिकण-कण-मध्ये देवानां सा प्रभावपरिपाटी ।
देवाराधनगीतैः सततं नूनं विभावनीयाऽस्ते ॥

[२८]

देवानामथ मनुजैः स्नेहः परिपूर्णतां प्राप्तः ।
कामपि दिव्यां दीप्तिं विलासयति कल्पनाकाम्याम् ॥

[२९]

मानवशरीरमात्रे विलासमायान्ति ते देवाः ।
तेषां कृपाप्रसादात्संप्राप्तेयं शरीरसम्पत्तिः ॥

[३०]

अङ्गोपाङ्गानां यत्संगठनं मानवे दृष्टम् ।
देवा एव नितान्तं तत्रैते कारणीभूताः ॥

[३१]

वाणीयं सम्प्राप्ता मन्जुविचाराभिरामरमणीया ।
देवानामेवैषा नितरां धार्या कृपालहरी ॥

[३२]

यत्र नरे श्रेष्ठत्वं विलोकितं पूर्णरूपेण ।
तत्रैवेदं तेषां देवानां दर्शनं जातम् ॥
यत्राऽपि च सन्मनुजे प्रभावदीप्तिः समाद्रियते ।
देवा एव समन्तात्तत्रैते कारणीभूताः ॥

[३४]

सर्वा विचारधारा बुद्धौ या चालयति सर्वम् ॥
तस्याः प्रेरणकर्मणि संलग्नास्ते निरन्तरं देवाः ।

[३५]

आकस्मिकं च घटनाचक्रं घटते पुरोऽस्माकम् ।
तत्सर्वं सुविचरितमास्ते तस्य प्रवर्तका देवाः ॥

[३६]

आपाते रमणीयं परिणामे दुःखदायकं यदिदम् ।
तत्रापि तत्वमयतासंपूर्णा सन्ति ते देवाः ॥

[३७]

आवाहनं च पूजनमथ च विसर्जनमथैतेषाम् ।
कर्मणि कर्मणि दृष्टं तत्सर्वस्य प्रकल्पका देवाः ॥

[३८]

सूक्ष्मे जगति निविष्टाः स्थूले रूपेऽपि सन्दृश्याः ।
सर्वैश्वर्यसमेताः संपूज्या एव ते देवाः ॥

[३९]

अधिगतयाथातथ्याः सर्वाभीष्टप्रदातारः ।
नानाविधसंभारैः पूजितकायाश्च ते देवाः ॥

[४०]

नन्दितवैभववन्दितकामांकुरवर्धनेषु संलग्नाः ।
नानाकर्मविधाने मनुजानां प्रेरका देवाः ॥

[४१]

पर्वतनदीसमुद्रोद्यानवनानां च तीर्थानाम् ।
सर्वेषां रूपाणामभिमानिन एव ते देवाः ॥

[४२ ४३]

आस्तिकनास्तिकधारा संचालनवर्धनादिसद्भावे ।
सदसत्तादीप्तीनां समविषमनियामका देवाः ॥
कालत्रितयाऽनन्त्ये नाना सुषमा समारूढाः ।
अनुनम्यन्ते देवाः सुन्दरतायां समासीनाः ॥

[४४]

अरुणोदयशुभवेलायामतिशयभानसम्पन्नाः ।
पुण्यैरेते मिलिता ध्यानस्थैः सत्वरं देवाः ॥

[४५]

विविधर्तुमण्डिता अपि पुण्यैर्लभ्या मनुष्यमात्रेण ।
सच्चिन्मयताभरिता आनन्दे संस्थिता देवाः ॥

[४६]

मन्त्रमयी सा वाणी यानाह्वयते च कल्याणी ।
ज्योतिर्यानारूढाः कृपया संयान्ति ते देवाः ॥

[४७]

वेदे पुराणनिवहे काव्ये नाट्ये विशालसाहित्ये ।
देशे तथा विदेशे देवानां लोक्यते महिमा ॥

[४८]

गीतायां स्पष्टतया दैवो भावो विवेचितो दृष्टः ।
मानससंचयमध्ये ते देवा जागरूकाः स्युः ॥

[४९]

यत्सात्विकं स्वरूपं मानसमध्ये तरंगितं जातम् ।
देवा एव नितान्तं तत्रैते कारणं जाताः ॥

[५०]

आसुरभावे द्वन्द्वो देवैः सह जायते विपुलः ।
आसुरभावो बाध्यो देवैर्युद्धे भवत्येव ॥

[५१]

गहनान्धकारपटली कामं संजायतां नाम ।
क्षीणापि दीप्तिरेखा सर्वं तद्वै विलोपयत्येव ॥

[५२ ५३]

तद्वत्कामं सर्वश्चासुरभावः स्वमायया निखिलः ।
व्यक्तित्वं संवृणुते पुनरपि देवाः समीपस्थाः ॥

रक्षन्त्येव समान्तान्मनुजं कृपया परामृष्टाः ।
आसुरभावानुभवो देवानां दार्ढ्य भावनायैव ।।

[५४]

आसुरभावो न स्याद् यदि विश्वस्मिन् सुविस्तीर्णे ।
परितः प्रकाशमाना अपि देवा नानुभूयेरन् ।।

[५५]

यद्येवं च कदाचित् सूर्यस्याऽस्तंगमो न स्यात् ।
नूनं सूर्यमहत्वं दृष्टौ सर्वं विलुप्येत ।।

[५६]

सेयं विरुद्धधारा सर्वा सम्पोषयत्येव ।
नित्यं तं महिमानं यत्कृपया जायते विश्वम् ।।

[५७]

यत्र प्रणामधारानम्रत्वं जागृयान्नाम ।
सर्वत्र तत्र देवाः समन्विता मार्गमादिशन्त्येव ।।

[५८]

देवा एव नितान्तं समुन्नतेः कारणीभूताः ।
यैवोन्नतिः प्रलब्धा सर्वा तेषां कृपाभूता ।।

[५९]

देवान्विहाय नास्त्येवोन्नतिरेषा कदापि संसारे ।
सर्वा च सा समृद्धिर्देवानामेव दानमुन्नेयम् ।।

[६०]

तेषां पूर्णसमर्पणबुद्ध्यैवाऽस्ते परा पूजा ।
किञ्चिदिवाऽन्तरभावे विलुप्यते रम्यतासरणिः ।।

[६१]

लोके वेदे स्थावरजङ्गमविश्वे पुरोऽथ पश्चाद्वा ।
देवानां तन्मङ्गलमूलं रूपं परिस्फुरति ।।

[६२]

प्रत्यक्षं ते सर्वे सर्वेषां सर्वदाऽऽयान्ति ।
किन्तु प्रणाममयतासंतुष्टिर्दर्शने हेतुः ॥

[६३]

प्रत्यक्षा अपि चैते पदार्थसार्थाऽन्यचेतसा नैव ।
सम्यग्द्रष्टुं शक्याः किम्पुनरेते सुसूक्ष्मतमरूपाः ॥

[६४]

देवाः प्रत्यक्षा स्युः कृपा न चेत्स्यात्तदीयैव ।
भक्तानां पुनरेते सन्त्येवाद्यापि सम्मुखे सुस्थाः ॥

[६५]

देवानां सेवेयं स्वात्मोन्नतये चिरं ध्येया ।
देवानां सेवातः कोऽपि कथं दूरमागच्छेत् ॥

[६६]

येषामखिलं स्वीयं ब्रह्माण्डस्थं विलोक्यते रूपम् ।
तेषामाज्ञा सर्वा संसारे संप्रतीक्षमाणाऽस्ते ॥

[६७]

ते भक्तिमात्रलभ्याः श्रद्धाधाराश्चिराद्दृष्टाः ।
श्रद्धातपःप्रभावात्तेषां प्रत्यक्षदर्शनं भूयात् ॥

[६८]

देवाः के वा ते स्युर्ये नैवाद्यापि दर्शने याताः ।
हृद्देशे संस्फूर्तौ ये प्रकटाः सन्ति ते देवाः ॥

[६९]

'देवा' इति शब्दोऽयं परमप्रेमाऽमृतैर्भरितः ।
प्रेम्णः प्रोच्छलितत्त्वे मुखे समायात्यहो देवाः ॥

[७०]

विमलमनोवाक्कायैर्वाक्यामृतनिर्भरे काले ।
यत्र प्रयाति दृष्टिस्तत्रैते संस्थिता देवाः ॥

[७१]

संगीताऽमृतनिर्झरधाराबन्धे सुसंचाराः ।
सर्वनमस्काराऽवलिमध्येऽत्रैते स्थिता देवाः ॥

[७२]

देहेन्द्रियेषु मानसमध्ये बुद्धौ स्थिता देवाः ।
कमनीयं संसारं सर्वेभ्यो दर्शयन्त्येव ॥

[७३]

इह यद्यत्कमनीयं दृश्ये - दृश्ये समुल्लसितम् ।
भारतवर्षर्षीणां दृष्टौ नान्यत् परं देवाः ॥

[७४]

घोरतरं विद्रूपं दुःखाकरमस्ति यच्चैतत् ।
सा सर्वाऽसुरसरणिर्दुर्दान्ता दृश्यते हन्त ॥

[७५]

एतच्छरीरमास्ते देवासुरयुद्धभूमिः सा ।
प्रतिपदमनुभवमार्गे संयाता को न जानीयात् ॥

[७६]

अनुपदमेव समेषां काम्योऽसौ देवताविजयः ।
सर्वं सुखमयरूपं कस्तावन्नाभिवाञ्छेत ॥

[७७]

स्वीयं सुखं च यदिदं तेषां वा मारकं जातम् ।
सा सर्वाऽसुरगाथा तत्रोन्नतकन्धरा दृष्टा ॥

[७८]

दैवश्चासुरभावः सर्वः संग्रन्थितश्चित्ते ।
अनुभवपथमारूढः प्रमाणमन्यत् किमत्र वा देयम् ॥

[७९]

यदिदं मनो मदीयं विस्तारेषु स्थितं जातम् ।
देवानामेवैषा व्याख्या काचित् स्फुटीभूता ॥

[८०]

देवानां प्राबल्ये विपरीतानां प्रधर्षणीयत्वे।
जीवनकालोऽप्रतिमः क्षणवद् व्यतियापितो भवति ॥

[८१]

आसुरभावाम्भोधौ निमज्जिताः सन्ति ये पुरुषाः।
पर्वततुल्यः कालस्तेषां स्वल्पोऽप्यनुभवे यातः ॥

[८२]

एते देवाः परितो राराजन्ते सुशोभिताः सुलभाः।
संदर्शनसंक्षमता यदि जन्तौ जागृता भूयात् ॥

[८३]

आयाता चेद् दृष्टिर्देवानां सत्कृपापूर्णा।
जीवनकाले सेयं विलासभाषा समुल्लसिता ॥

[८४]

देवा ज्योतिर्मार्गे गमनागमनं प्रकुर्वन्तः।
क्षणमात्रेण समस्तं विश्वभ्रमणं समापयन्त्येव ॥

[८५]

शिशुकाले कैशोर्ये यौवनकाले च वार्धक्ये।
देहादूर्ध्वं सर्वे देवा एते स्थिता एव ॥

[८६]

एतत्पर्यावरणं देवानां सूक्ष्मतमरूपे।
यन्त्राणां विज्ञानैरपि नो लभ्यं सुसूक्ष्मत्वात् ॥

[८७]

कोटिमितास्तेदेवा लक्षार्बुदरूपसंयुक्ताः।
पुनरप्येको देवस्सर्वा तस्यैव दृश्यते लीला ॥

[८८]

मान्यतमे संसारे मान्यानां सरणिरेषाऽस्ते।
ते निखिलेऽस्मिन् विश्वे नमन्ति देवान् सदैव सम्पूज्यान् ॥

[८९]

प्राणस्पन्दनसरणिर्येषां कृपया समुच्छलिता ।
ते मानससाम्राज्योल्लासितसद्वैभवा देवाः ॥

[९०]

देव्यो देवा वैषा नैवाऽस्ते भेदधारणा कापि ।
जगतां माता देवी जगतां पितरस्तथा देवाः ॥

[९१]

सर्वं मिथ्याभूतं देवानां विरहवेलायाम् ।
सर्वं सत्यं तथ्यं यत्रैवाऽमृतभुजो देवाः ॥

[९२]

कर्मणि कर्मणि सौख्यं शान्तिसमृद्धिं प्रकुर्वन्तु ।
पूज्यतमास्ते देवाः पूजां स्वीयां प्रयच्छन्तु ॥

[९३]

देवानां करुणायाः सम्प्राप्तौ दिव्यताऽऽयाता ।
जन्मेदं सफलत्वे पादान्यासात्मकं तदा जातम् ॥

[९४]

देवाः केवलमेते विद्याशोभाप्रदानेषु ।
धनवैभवकल्याणप्रदानवेलासु सोल्लासाः ॥

[९५]

नित्यमनुभूयमाना देवानां सा कृपाधारा ।
वर्षणसुषमाभरिता कुरुते स्वर्गं करस्थितं सर्वम् ॥

[९६]

त्रैकालिकसत्तायां प्रभावमालाविभावपरिपूर्णाः ।
देवा एते नित्यं निजभावं रक्षयन्त्येव ॥

[९७]

मान्यतमानां मान्यास्ते देवा जीवनेऽस्माकम् ।
सततं पूजनमयतां स्वीयां सर्वां प्रयच्छन्तु ॥

[९८]

देवानां सेवातः सम्पूर्णत्वं समायातम् ।
दूरयति चाल्पभावं भूमाभावः समुल्लसति ।।

[९९]

जन्तौ जन्तौ सुखमयसंसारोद्घाटने याताः ।
देवाः सदा प्रणम्याः परितः सर्वत्र संस्थितिस्तेषाम् ।।

[१००]

बद्धाञ्जलयः सर्वे सृष्टौ जाताश्च जन्तवो नूनम् ।
देवानां सेवायां संलग्नाः पूर्णरूपेण ।।

[१०१]

भारतसंस्कृतिशोभा येषामाधारभूतानाम् ।
सेवायां संलग्ना ते देवाः सर्वदा वन्द्याः ।।

[१०२]

देवानां सेवायां शतकमिदं निर्मितं मयका ।
शिवदत्तेन तदेतत्तेषां सद्यः प्रसन्नतां देयात् ।।

जगदम्बासर्गः

[१]

जगतां सेयमधीशा जगदम्बा नम्यते सर्वैः ।
देवैस्तथा मनुष्यैर्ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तैः ॥

[२]

सृष्टीनां निर्मात्री संहर्त्री या यदृच्छया सततम् ।
सर्वगुणकर्मलीला सैषा सर्वेश्वरी जयति ॥

[३]

दुर्गा शिवा मृडानी शर्वाणी पार्वती तारा ।
पीताम्बराऽथ त्रिपुरा धूमा काली च सिद्धिदात्रीयम् ॥

[४]

महिषासुरप्रमथिनी शुम्भनिशुम्भोद्धता दलिनी ।
परमैश्वर्यं वितरति परमोदारैः कटाक्षसञ्चारैः ॥

[५]

तस्याः स्मरणं तस्याः कृपां विना नैव सम्भवति ।
तां सर्वभाग्यलभ्यां परमोदारां प्रणौमि देवेशीम् ॥

[६]

स्मृतिमात्रं वा तस्या वितरति सौभाग्यपरिपाटीः ।
साक्षाद्दर्शनलाभो ब्रह्मादीनां कदाचित् स्यात् ॥

[७]

सेयं सर्वोदारैश्वर्यैः सततं कृपाशीला ।
यस्मिन् जन्तौ स्निह्यति सोऽयं सर्वेश्वरो भवति ॥

[८]

मन्दाराद्यैर्वृक्षैरनन्ततायां सुसेव्यमानेयम् ।
भुवनत्रितयाऽनन्त्ये विचरति चित्रान्विता सततम् ॥

[९]

नानाश्चर्यसमृद्धैर्देवैः सततं समाराद्धा ।
वितरति सत्सौभाग्यं भक्तिभराऽन्दोलिता नित्या ॥

[१०]

संसाराख्ये चित्रे रंगान् सञ्चारयन्तीयम् ।
विभ्राजते नितान्तं परमोदाराभिरामरमणीया ॥

[११]

देवी शिलामयीयं दुर्गा दुर्गेश्वरी जयति ।
जगतां विश्वासानामाधारा या निराकारा ।

[१२]

सर्वाकारमयी सा परमाऽराध्याऽखिलैर्वन्द्या ।
नम्रतरे जनवृन्दे वितरति सद्भक्तिमीशानी ॥

[१३]

निखिलकलासंकायाऽधारा भ्रान्तेर्विलोपयित्रीयम् ।
परितोऽपि दिव्यभावान् विकिरन्ती सन्ततं जयति ।

[१४]

आगमनिगमनिवेदितसर्वस्वा या परं ज्योतिः ।
पश्यन्ती च परा या मध्या वा वैखरी वापि ॥

[१५]

कमला पद्मा लक्ष्मीर्हरिप्रिया विश्वमातेयम् ।
वन्द्या जगतां धन्या जीवानां मोहिनी नम्रा ॥

[१६]

नानाकोटिब्रह्माण्डाविर्भावैस्तिरोभावैः ।
सततं क्रीडनशीला शुभदात्री जायतां नित्यम् ॥

[१७]

शत्रुविदारणकार्ये ब्रह्माद्यैः संप्रपूजिता सेयम् ।
स्वीयाऽट्टहासशब्दैर्विदारयति शत्रुहृत्पटलीः ॥

[१८]

दुर्दान्तदैत्यनिवहैरापूर्णा युध्यमानेयम् ।
सर्वेषां वधशीलाऽप्यन्ते तेषां सुखं तनुते ॥

[१९]

युद्धे शस्त्रैः पूता असुरा दिव्येषु लोकेषु ।
नीता यया नितान्तं जननीभावो नु तत्रापि ॥

[२०]

कालत्रितये यस्या निर्द्वन्द्वो वा प्रभावमयमहिमा ।
तारयति कष्टनिवहैर्देवान् मनुजान् ऋषीन् भक्तान् ॥

[२१]

आध्यात्मिकाऽधिदैविकभौतिककष्टान् विदूरयन्तीयम् ।
जगतां जननी धन्या प्रबोधयन्ती सुतान् सर्वान् ॥

[२२]

अर्धं निष्क्रान्तं तं महिषं पुनरर्धमादिशती ।
वीरैर्भावैर्वन्दितरूपा साऽस्ते जगन्माता ॥

[२३]

मधुकैटभप्रमाथे निद्रारूपं विदूरयन्ती स्वम् ।
नारायणाय युद्धं सन्दिशती स्वं तिरश्चक्रे ॥

[२४]

हुंकारेण समस्तं बलमाराद् भस्मकुर्वती सेयम् ।
धूम्राक्षं धूम्रमयं कुरुते सेयं जगन्माता ॥

[२५]

नानाऽसुरसंघातोत्पादकतां धारयन्तं वा ।
तं रक्तबीजमसुरं पञ्चत्वं गमयती धन्या ॥

[२६]

नित्यस्पन्दनरूपा त्रयीमयी चेतनाधारा ।
नाना सत्कार्याणां प्रवर्तिका शोभनं कुरुते ।।

[२७]

जीवनकाले या सा मातुर्लभ्या कृपामयी धारा ।
यामाराध्य सुसफलं जीवनमेतत्सुदुर्लभं लोके ।।

[२८]

यत्र च चकिताः सन्तः परां भजन्तेऽथ योगमयदीप्तिम् ।
सर्वे काले देशे लोकानां शिक्षणे दक्षाः ।।

[२९]

जगदम्बायाः करुणा निखिलबलं सर्वजीवानाम् ।
यत्सविधे च विनम्राः सर्वे ब्रह्मादयो देवाः ।।

[३०]

याचन्ते तां करुणां निखिलैश्वर्यैः परिव्याप्ताम् ।
तां सर्वलोकजननीं बालां यौवनवतीं धन्याम् ।।

[३१]

तया प्रदत्तैर्विभवैः पूजनमपि तत्प्रकुर्वते नित्यम् ।
सा चाधिकां समृद्धिं नित्यं प्रददाति भक्तेभ्यः ।।

[३२]

तंत्रे पूजा यस्या नानारूपे समुल्लसिता ।
मन्त्रमयी यन्त्रमयी यन्मूर्तिः सिद्धसेविता जयति ।।

[३३]

शाक्ताद्वैते द्वैते दर्शनमयताप्रकाण्डसाहित्ये ।
यन्महिमा विख्यातो लोके सर्वप्रचारमायातः ।।

[३४]

ज्ञाने विज्ञाने वा लोके वा पारलौकिके सर्वे ।
यस्याः प्रभावगाथा दिव्यतमास्ता विभाविता लोकैः ।।

[३५]

केनोपवर्णनीयं के शब्दास्तत्र के चार्थाः ।
सान्तं सर्वं वर्णनमेतत्किं जायते ह्यनन्तायाः ॥

[३६]

देव्याः कलाभिरामैः संपूरितसर्वविश्वायाः ।
काले कलितां कलनामधरीकुरुते प्रभावपरिपाटी ॥

[३७]

मान्यतमानां मान्या या च वदान्या वदान्यानाम् ।
निखिलेश्वरी प्रणम्या पूर्णतया स्वात्मतर्पणायाऽपि ॥

[३८]

नवरात्रेष्वथ यस्या दर्शनपूजनमयी शोभा ।
त्रैलोक्येषु विलसिता देव्याः प्रीतिं सुपुष्णाति ॥

[३९]

नवरात्रावलिकाले नाना संभारसारसर्वस्वैः ।
सन्दर्शनं च यस्याः प्रतिमानां प्रीतिमावहते ॥

[४०]

सर्वत्र समाराद्धं सप्तशतीस्तोत्रमेतस्याः ।
जगदम्बाया भक्तिं द्रढ़यति सर्वं प्रयच्छति च ॥

[४१]

कीलककवचस्तोत्रं नवार्णमन्त्रेण सम्पुटितम् ।
मलिनमनोवाक्कायं शश्वद्दिव्यं समातनुते ॥

[४२]

येषां शिरस्सु खेलति जगदम्बायाश्चरणरेणुः ।
स्वीये काले तेषामुच्चतमत्वं सुविख्यातम् ॥

[४३]

जगदम्बाचरितानां स्मृतिरथ यान् हर्षगद्गदान् कुरुते ।
निखिलेऽस्मिन् भूवलये ते नूनं वन्दनीयतमाः ॥

[४४]

ते सात्त्विकोन्नतीनां शिखरे - शिखरे चरन्तोऽपि ।
निर्लिप्ताश्च नितान्तं हृदये जगदीश्वरीचरणलग्नाः ।।

[४५]

सर्वाऽमोघकृपायाः सिन्धोर्विन्दुं वितीर्यैव ।
या सज्जनान्विधत्ते सर्वोत्तमवैभवैर्लसितान् ।।

[४६]

या सर्वकालसुलभा भक्त्यान्दोलितमनोऽत्रिभवैः ।
हृत्सिंहासनसंस्थां तां दृष्ट्वा सुकृतिनोऽथ कृतकृत्याः ।।

[४७]

ब्रह्मादिस्तम्बान्ते ब्रह्माण्डे या ममत्त्वसंयुक्ता ।
उत्पादयते रक्षति रूपान्तरतां च कारयते ।।

[४८]

जन्मनि - जन्मनि निखिलाऽऽधारा सन्तिष्ठते नियता ।
जन्मनि - जन्मनि जन्तुस्तत्क्रोडे क्रीडतेऽपैति ।।

[४९]

माता सरस्वती सा ब्रह्माणी ब्रह्मभाग्येशी ।
धन्यश्चासनरूपः सन्मानसराजहंसोऽस्याः ।।

[५०]

अन्धं तमसा व्याप्तं यया विनाऽऽस्ते जगज्जालम् ।
सर्वाधिष्ठात्रीयं केन्द्रीभूता प्रकाशानाम् ।।

[५१]

देवीचरित्रमध्ये चरमचरित्रेषु चित्रिता नित्या ।
धूम्रं चण्डं मुण्डं शुम्भनिशुम्भौ विदारयामास ।।

[५२]

तं रक्तबीजमसुरं नियताद्भुतभावमारूढम् ।
विस्तीर्णं स्वं वदनं कृत्वाऽसौ चर्वयामास ।।

[५३]

मानव-दानव-विनता प्रणतानिखिलैश्च कोटिभिर्देवैः ।
जडचेतनमयजगतामाधारा सा परेशानी ॥

[५४]

याऽक्षरमालारूपा या च पराऽऽद्ये चतुष्टये व्याप्ता ।
वाणी वीणापाणिर्वन्दितविभवा वदान्यताऽऽराध्या ॥

[५५]

सरिगमपधनिससरिताप्रवाहमालाऽऽकुला देवी ।
हृदयमिलिन्दकमलिनी सौरभमत्यद्भुतं तनुताम् ॥

[५६]

या कुन्देन्दुतुषारैर्हारैरत्यन्तधवलाभा ।
शुभ्रमरालाऽऽसीना स्फाटिकवीणासमाराध्या ॥

[५७]

त्रिभुवनसारा तारा नीला चेयं सरस्वती जयति ।
नन्दनविचरणशीला कविताकान्ता सदा शान्ता ॥

[५८]

नाना नृत्योन्मेषैस्तौर्यत्रिकसंविधानैर्या ।
नारदतुम्बरुसहितैर्देवैराराधिता देवी ॥

[५९]

अस्मिन् काले येयं नव्या वैज्ञानिकी धारा ।
नाना साधनसहिताऽनन्ते रूपे सुविस्तीर्णा ॥

[६०]

यामालम्ब्य मनुष्योऽद्यत्वे जातो जगज्जेता ।
यामासाद्य क्रामति पाताले चान्तरिक्षेऽपि ॥

[६१]

सा निखिलाऽपि समुन्नतिरास्ते यस्याः कटाक्षसंरम्भे ।
तदिदं रहस्यजातं ये वा जानन्ति ते धन्याः ॥

[६२]

जगदीश्वरीकृपातो यातो मनुजः समुन्नतिं परमाम् ।
यां विस्मृत्य मनुष्यो भयसंयुक्तो भवत्येव ॥

[६३]

सेयं त्रिकालसिद्धा साक्षाद्देवी महामाया ।
शश्वत्सुताऽपराधान् सहते नित्यं प्रसन्नाऽऽस्या ॥

[६४]

दुर्दान्तैरपि पूज्या देवर्षिभिरस्ति पूजनीयतमा ।
सर्वैर्विरुद्धमतिभिस्सेवितकाया महामाया ॥

[६५]

खड्गप्रभासमूहैरज्ञानं युद्धशीलानाम् ।
या नाशयति नितान्तं स्वीयं रूपं च दर्शयते ॥

[६६]

दुर्दान्तशत्रुसंघेऽप्येषा सततं कृपां कुरुते ।
शस्त्रविदारितकायानेतान् लोकान् प्रयच्छति या ॥

[६७]

याऽलौकिकाऽपि सततं व्याप्ता सर्वेषु लोकेषु ।
पुनरपि लोकातीता लीला यस्या विलासमायाता ॥

[६८]

त्रैलोक्यशुद्धचरितै ऋषिभिर्मुनिभिस्तथा च देवाद्यैः ।
यच्चरणधूलिकणतासम्प्राप्तिर्भाग्यलभ्याऽऽस्ते ॥

[६९]

जड़चेतनसंसारे या काचित् शक्तिरूपता दृष्टा ।
सा सर्वाऽपि वरेण्या देव्येवेत्यादि ऋषिराह ॥

[७०]

यद् भक्तिमयीरचना मूकं मुखरं समातनुते ।
मूर्खं बृहस्पतिसमं कुरुते यस्याः कटाक्षसंपातः ॥

[७१]

कैलासाचलसदृशेऽरावलिशिखरे सुदर्शनं ददती।
कैलादेवी भक्तैर्वन्दितविभवा जयत्येषा॥

[७२]

पीताम्बरा भगवती दतिया क्षेत्रे प्रतिष्ठिता वरदा।
धूमावती च देवी तत्रस्था पावयति लोकान्॥

[७३]

विन्ध्याचलमध्यस्था सा नित्यं विन्ध्यवासिनी देवी।
दर्शयते निजरूपं श्रीकृष्णस्याग्रजा माता॥

[७४]

भक्ति

सर्वसमीहितचरणा भक्तेर्मन्दाकिनीं धाराम्।
सेयं प्रवाहयन्ती देवी जगदम्बिका सेव्या॥

[७५]

निष्किञ्चनेऽपि भक्ते या यच्छति दिव्यवैभवं सततम्।
निष्किञ्चनतामथवा बहुमन्यन्ते चिराद् भक्ताः॥

[७६]

हृदये नन्दनकाननमसमं संचारयन्तीयम्।
मानसपरिसरतटिनीकूले तान् कल्पपादपान् सूते॥

[७७]

सम्पत्तयो विपत्तय एता लभ्याः कृपान्वयैर्यस्याः
व्यतिरेकैश्च नितान्तं देवी सा कैर्न वा नम्या॥

[७८]

मातर्मानसमध्ये मोहौ मधुकैटभौ हत्वा।
सद्यो मां परिपालय हन्ये नो यावदेताभ्याम्॥

उत्प्रेक्षा

[७९]

बुद्धिं मानसमिन्द्रियसंघं संव्याप्य तिष्ठन्तम्।
क्रोधाख्यं महिषासुरमुन्माथय सत्वरं मातः॥

[८०]

तौ काम प्रतिरूपौ शुम्भ निशुम्भौ मनसि तिष्ठन्तौ ।
सर्वोपद्रवजनकौ सपरिकरं दारय कृपया ।।

[८१]

मायामयरूपाणां गणना नाऽस्त्येव चैतेषाम्
केवलमेकैव त्वं सर्वेषामप्यभिज्ञासि ।।

[८२]

नाहं जाने चैतान् सूक्ष्मे देहे स्थितानसुरान् ।
मूलाघातं ये वै कुर्वन्तो मोदमायाताः ।।

[८३]

एतैरसमर्थः सन् त्वां हे जगदीश्वरीं याचे ।
एतान्नाशय कृपया मातर्मेऽन्तः स्थितानसुरान् ।।

[८४]

बुद्धिं श्रद्धां भक्तिं मानसमध्ये द्रुतं देहि ।
दाने तु काऽपि बाधा ते न स्याद्दानशीलायाः ।।

[८५]

अनुप्रासः

तान्तक्लान्तनितान्तोन्मथितस्वान्ते कृपाऽमृताऽलेपम् ।
कुरुते जगदम्बेयं भक्तिविनम्रैस्तु निर्ध्याता ।।

[८६]

नाना देशे काले पात्रे दीप्तिं प्रकुर्वती सेयम् ।
नित्यं प्रणाममात्रे सर्वां शोषयति मलपटलीम् ।

[८७]

स्वीयमनन्यं भक्तं निवेशयन्ती समुन्नतः शिखरे ।
आदेशयति यथेच्छं तस्मै सौभाग्यसंभारान् ।।

[८८]

अमरीकबरीगन्धभ्रमरीमुखरीकृतप्रान्तौ ।
चरणावरुणौ कुङ्कुममणिप्रभारञ्जितौ जयताम् ।।

[८९]

सत्सौरभसाम्राज्योल्लासितविभवे मणिद्वीपे ।
सौभाग्यानां धारा दिव्या काचित्प्रवाहिता सततम् ॥

[९०]

नाना नवोपकरणैर्मण्डितकाया जगन्माया ।
यत्किञ्चिदर्पयन्तं वितरति नानोपकरणानि ॥

[९१]

अशनं वसनं पानान्यावासा दिव्य यानानि ।
स्वप्नेष्वपि दुर्लभतां गतानि वर्षन्ति यत्कृपया ॥

[९२]

गार्हस्थ्यस्य च शकटं बोढुं ससुखं वितीर्णशक्तिर्या ।
वैभवपूर्णं कुरुते कन्यादानोत्सवं काले ॥

[९३]

सकुटुम्बं या नित्यं संवर्धयते निजं भक्तम् ।
एतादृशी हि ममता पूर्णा माता न कैर्नम्या ॥

[९४]

वाचां विस्तारं या यच्छति सद्भक्तिसन्तुष्टा ।
भक्तश्चकितं कुरुते वाचां सद्वैभवैर्विश्वम् ॥

[९५]

ज्ञानं विनिर्मलं या ददाति विभ्रमविलोपकं नित्यम् ।
यत्संप्राप्य समाधिर्भक्तः कृतकृत्यतां यातः ॥

[९६]

नानाऽकारविलासैर्विमोहयत्येव संभ्रान्तान् ।
सन्तः पूतनिकायाश्चैकां ध्यायन्ति निखिलां ताम् ॥

[९७]

देवी जगदुद्याने सौरभमत्यद्भुतं ददती ।
नाना जन्मोपार्जितदुर्गन्धि दुरयतु तूर्णम् ॥

[९८]

विजया विजयं दद्याद्विजयः सर्वस्य काम्योऽयम् ।
सांसारिकसंग्रामे विजयं को नाभिवाञ्छते नित्यम् ॥

[९९]

आस्तां तावत्सर्वं किं स्यादेतैर्मुधाऽलापैः ।
स्वात्मनि यः सुतभावस्तं सैवाऽलोकते नित्यम् ॥

[१००]

नवरात्राऽरम्भे यत् प्रारब्धं काव्यमेतावत् ।
संपूर्णं तज्जातं विजयादशमी स्थिताऽद्यत्वे ॥

[१०१]

चतुरधिकाऽशीतितमे एकोने विंशशतकेऽस्मिन् ।
खिृस्ताब्दीये विजया प्रसादपूर्णं शतककाव्यम् ॥

[१०२]

जगदम्बायाः शतकं स्तुतिरूपं निर्मितं मयका ।
शिवदत्तेन समस्तं प्रीत्यै भूयान्महेशान्याः ॥

१०२+१०२=२०४

३—श्रीकृष्णसर्गः

[१]

श्रीकृष्णः शरणं मम भारतभाभास्वरो भगवान् ।
गुरुवर्यो लोकानामधीश्वरः पालको गोपः ॥

[२]

सर्वजगत्प्रभुरसमः साक्षात्पूर्णः कलानाथः ।
आनन्दानां कन्दो वन्द्यो जगतामनिर्देश्यः ॥

[३]

आनन्दमात्रनिष्ठः सर्वाऽनन्दस्वरूपोऽसौ ।
श्रीकृष्णचन्द्रभगवान् मानवता तारको भूयात् ॥

[४]

यस्यकृपाकटाक्षैरद्याप्यसमा कला नित्यम् ।
चेतसि नवतामयतां संस्फूर्ति संविलासयत्येव ॥

[५]

कारागारे नितरां निविडे प्रच्छन्नतमराज्ये ।
प्रकटीभूय नितान्तं हर्षं भरयाम्बभूव भूवलये ॥

[६]

वर्षतु देवोऽस्मदुपर्याशां सञ्चारयन् मधुराम् ।
गोपीमोहनमन्त्रो, राधाऽऽराधितपदः प्रभुः कृष्णः ॥

[७]

एषोऽस्मि दीनहीनो लीनो विषयेषु निन्द्येषु ।
देवेशस्य कृपायाः पात्रत्वं कुत्र वा चाऽस्ते ॥

[८]

पुनरपि करुणागारं सर्वान्तर्यामिनं कृष्णम् ।
याचे जगदानन्दं मलिनमतिः शुभ्रताऽवाप्त्यै ॥

[९]

भगवन्, माधव सेवा तव नित्यं निर्मला जयति ।
यस्यां भावोन्मेषैरधिगतमेवाऽस्ति सर्वसाम्राज्यम् ॥

[१०]

माधवसेवाविमुखो सर्वो दीनो भवत्येव ।
तत्कृपयैव तदीया सेवा भाग्येषु लिख्यते कैश्चित् ॥

[११]

भगवन् भवान् नमस्यः कथमिव संजायसे नित्यम् ।
पुण्यप्रभावभाभिर्भरिता ये ते नमस्यन्ति ॥

[१२]

भगवन् कालियमर्दन चित्ते चित्ते विलोक्यते सर्पः ।
तत्कुरु मानसयमुनास्थितमेनं चरणताड़नैर्दूरे ॥

[१३]

श्रीकृष्णस्य शरण्यत्वं वा सर्वेऽपि याचन्ते ।
अचिरेणचरणरेणुं श्रीकृष्णस्याभिवाञ्छन्ति ॥

[१४]

त्वत्सेवकचरणानां धूलिभरैर्मस्तकं मिलितम् ।
सद्यः पवित्रितं स्यात् कथा तदीया पुनाति सर्वत्र ॥

[१५]

आबाल्याद् भगवन्तं श्रीकृष्णं यो भजन्नाऽस्ते ।
तस्याऽग्रिमास्ववस्थास्वपि नैर्मल्यं समायाति ॥

[१६]

श्रीकृष्णे नन्दनवनसाम्राज्योल्लासदायके दिव्ये ।
चेतो रमतां नित्यं भूयात् तस्य कृपापरीपाकः ॥

[१७]

भगवति भक्तिरनन्तैर्माधुर्यैर्लालिता जयति ।
यस्यां सम्प्राप्तायां सर्वं तुच्छायितं भूयात् ॥

[१८]

हे देव, मानसे मे विविधाः संकोचसञ्चाराः ।
नितरामनुप्रविष्टा दूरीकुरु तान् कटाक्षसम्पातैः ॥

[१९]

भगवति सर्वाधारे श्रीकृष्णे या प्रणामपरिपाटी ।
इयमेव धन्यधारा प्रवाहिता जीवने जन्तोः ॥

[२०]

ममता चेत् श्रीकृष्णे भगवति भवतीह धन्यतमा ।
तादृशजीवनसरणिः स्पृहणीया सर्वमान्यानाम् ॥

[२१]

श्रीकृष्णचरितचर्चामन्दाकिन्यां निमज्जने जाते ।
यद्वैभवं निकामं सम्प्राप्तं केन वर्ण्यतां तद्वै ॥

[२२]

श्रीकृष्णे हृद्देशे विराजिते या स्थितिर्भवति ।
तां सम्प्राप्तुं देवास्ते ते नित्यं विलोक्यन्ते ॥

[२३]

कला

षोडषकलावतंसो गोभिर्गोपालमण्डलीभिर्वा ।
संवलितः श्रीकृष्णो सर्वाङ्गे नः करोतु रोमाञ्चान् ॥

[२४]

श्रीकृष्णभक्तिसिन्धोर्बिन्दुं वा केवलं ध्यात्वा ।
सन्तः सुचरितलाभैरापूर्णाः सिन्धुतां याताः ॥

[२५]

सारथ्यं श्रीकृष्णः करोतु संसारसंग्रामे ।
विजयोऽस्माकं भूयात् बोभूयाद् बन्धनाऽभावः ॥

[२६]

वंशीनिनादलहरी सकृदपि कर्णे निपीता चेत् ।
श्रीकृष्णौष्ठपुटाभ्यां स्वरभरिता तत्किमवशिष्टम् ॥

[२७]

सकृदपि वाणी कृष्णे समर्पिता किं न वा देयात् ।
सा सिद्धिः सर्वेषां कामानां पूर्णरूपेण ।।

[२८]

कृष्णे कृष्णो वर्णः समन्वयः सर्व रंगानाम् ।
सर्वान् रंगानेकीकुर्मश्चेज्जायते कृष्णः ।।

[२९]

कृष्णे सर्वे रंगाः सम्मिलिताः सन्ति नित्यं ते ।
सर्वेषां रंगानां कृष्णादेवास्ति सम्भूतिः ।।

[३०]

रंगाऽभावो यत्र च विभासते सोऽप्यसौ कृष्णः ।
सन्दृश्यते पुरस्तात् नभसः कृष्णत्वमालोक्यम् ।।

[३१]

कृष्णे भगवति रूपाऽभावः सर्वैरनुध्यातः ।
तत्कृष्णत्वं भगवति श्रीकृष्णे श्रुतिभिराख्यातम् ।।

[३२]

कारागारीभूतः संसारोऽयं समाख्यातः ।
तत्र किमर्थं भगवान् प्रादुर्भवतीति चिन्तना चलति ।।

[३३]

तत्र तु जीवाः सर्वे बद्धाः स्वीयैश्च कर्ममयपाशैः ।
दुःखफलं ननु भोक्तुं जनिं लभन्ते, वदन्ति शास्त्राणि ।।

[३४]

भगवान् ननु कर्ममयैः पाशैर्दूरेऽप्यसंस्पृष्टः ।
कथमुद्भवति जगत्यां स्थाने प्रश्नस्तदुत्तरं विविधम् ।।

[३५]

कारागाराऽध्यक्षोऽपि तु बद्धान्वीक्षितुं काले ।
स्वेच्छावशतो गच्छति कारागारे तथैव यात्रेयम् ।।

[३६]

कारागाराध्यक्षो बद्धान् संपीडितान् जीवान् ।
परया कृपयाऽविष्टः संमोचयतीति तस्य सामर्थ्यम् ॥

[३७]

सर्वसमर्थो भगवान् श्रीकृष्णः कर्मसंसारे ।
कारागारे स्वेच्छावशतो नूनं समायातः ॥

[३८]

संमोचिता अनन्ता जीवास्तेन कृपाऽऽलेशैः ।
अद्यापि तस्य लीलाचिन्तनमेवं कृपां कुरुते ॥

[३९]

श्रीकृष्णचिन्तनानामानन्दोन्मादतत्त्वानाम् ।
सेयं प्रकाशधारा मूलाऽविद्यां विनाशयति ॥

[४०]

क्षणमात्रेण सुदाम्नो दारिद्र्यं दूरयन्कृष्णः ।
दूरीकरोतु कृपया सर्वं दारिद्र्यसंचारम् ॥

[४१]

जगदीश्वरो नु देयादीश्वरतां मे महीयसीं दिव्याम् ।
यद्विरह पापमयं जीवनमेतद्विनिन्दितं चाऽस्ते ॥

[४२]

श्रीकृष्णवाक्यधाराप्रकाशितं जीवनं भूयात् ।
यद्वशतः संसारे भक्तेर्मन्दाकिनी वहति ॥

[४३]

भगवान् श्रीकृष्णो ननु धन्यतरं जीवनं कुर्यात् ।
गोपालमण्डलीशो निखिलान्तःस्थस्तमोहारी ॥

[४४]

श्रीकृष्णः खलु नित्यं पूजां सम्भारभासुरां मनसा ।
संकल्पितां समन्तात् स्वीकुर्यात्तापमपहन्तुम् ॥

[४५]

सर्वेषां हि जनानां श्रीकृष्णः कर्षणं कुरुते ।
स्वीयैर्विविधै रूपैर्मोहनमन्त्रस्वरूपोऽयम् ॥

[४६]

नो तादृशः कलावान् पुरुषो दृष्टस्तथा ज्ञातः ।
येनार्जितकलया नो श्रीकृष्णाऽराधना विहिता ॥

[४७]

चित्रकलायां निपुणाश्चित्राणीमानि कृणस्य ।
निर्माय तूलिकभिर्धन्यतमास्ते भवन्त्यहो भाग्याः ॥

[४८]

स श्यामसुन्दरो ननु शुभ्रामसमां चमत्कृतिं दद्यात् ।
यस्याः शुभप्रभावो बाधां दूरीकरोति दुरितानाम् ॥

[४९]

मूर्तिकलायां कुशलः शिल्पी नैवाऽथ दृष्टः स्यात् ।
येन कृष्णाऽऽराधनधारा न स्यात्प्रवाहितामूर्तौ ॥

[५०]

कवयो न तादृशा स्युर्दौर्भाग्यैर्वा परामृष्टाः ।
श्रीश्यामसुन्दरोऽसौ न वर्णितो यैर्नवैर्वृत्तैः ॥

[५१]

ये ज्ञाने विज्ञाने परमे स्थाने विराजिता जाताः ।
तैर्वा भगवद्वाक्यान्यपि नूनं नैव त्यक्तानि ॥

[५२]

योऽसौ युद्धक्षेत्रे स्थितो हसन्नेव विज्ञानम् ।
गीताऽमृतस्वरूपं ददौ प्रणम्यो न कस्याऽऽस्ते ॥

[५३]

श्रीकृष्णोऽसौ भगवानानन्दानां प्रणेतास्ति ।
जगच्छरण्यः सोऽयं निखिलजगद्वन्दनीयोऽस्ति ॥

[५४]

इदमन्धं भूमण्डलमाखण्डलतुल्यधामभिर्लोकैः ।
विद्योतितं भगवतः कृपाकटाक्षस्य संचारैः ॥

[५५]

कवितापि तत्कृपायाः कणिकामात्रं चिरं लब्ध्वा ।
भवति नितान्तं सरसा मा भूद्वा तत्र पाण्डित्यम् ॥

[५६]

अविदितगुणलवलेशा कविता श्रीकृष्णनामसंवलिता ।
विद्योतितरसराज्या प्रभवति सर्वान् वशीकर्तुम् ॥

[५७]

सरसा सालंकारा संवलिता सर्वगुणयोगैः ।
अपि कविता नो वन्द्या हीना श्रीकृष्णनाममाधुर्यैः ॥

[५८]

श्रीकृष्णनाम घटिता पंक्तिर्वा तादृशं सूते ।
पुण्यं प्रभावममलं पाण्डित्यानां रहस्यमत्रैव ॥

[५९]

पीयूषपूरपूर्णा कविवर्याणां हृदयसरसी ।
श्रीकृष्ण स्मृतिकमलं विकासयन्ती चिरं जयति ॥

[६०]

यत्रैवास्तेकृष्णस्तद्वै वृन्दावनं भव्यम् ।
आनन्दानां निखिला धारास्तत्रैव खेलन्ति ॥

[६१]

श्रीकृष्णे वरिवस्या प्रभवति सर्वान् वशीकर्तुम् ।
वल्ली साऽपि च वन्द्या या वितता कृष्णमन्दिरे दिव्ये ॥

[६२]

धन्यतमास्ते दिवसा येषु समाराधितो भवेत् कृष्णः ।
निखिलाश्चान्ये दिवसाः एतेषां भूमिकारूपाः ॥

[६३]

वन्द्या कृष्णमयी सा धरणिस्तच्चरणधूलिचित्रमयी ।
एकैकशस्तु देवाः सर्वे यां वै नमन्त्येते ॥

[६४]

अवसरसहस्रलभ्या श्रीकृष्णे भक्ति धारेयम् ।
जयति नितान्तं काम्या श्रेयोरूपा परा शक्तिः ॥

[६५]

मा मा माधव गच्छेत्यश्रुपरिच्छिन्ननेत्रालिः ।
स्वप्ने कृष्णं दृष्ट्वा तन्मयशब्दावलिर्जयति ॥

[६६]

स्मेरास्ये श्रीकृष्णे चरमोत्कण्ठा पिपासा या ।
भक्तिमयी कालिन्दी नित्यं परितोषदायिनी वहतु ॥

[६७]

श्रीकृष्णनाममन्त्रो हृद्देशे जागृयात् सततम् ।
दारिद्र्यं सर्वविधं समूलमुच्छेतुमद्य संपूर्णम् ॥

[६८]

अद्यैव कृष्णचरणे मम मानसराजहंसोऽयम् ।
कोमलतमसाम्राज्ये वासं कुर्यात् परमरम्ये ॥

[६९]

विलपामि कृष्णरूपैरेभिर्नित्यं परामृष्टः ।
श्रीकृष्णस्य निकामं नामावलिमेव सन्ध्यायन् ॥

[७०]

प्रतिभाप्रभाप्रकर्षो नानाविधकाव्यकलनासु ।
श्रीकृष्णस्य कृपाया लेशेनैवोदियान्नाम ॥

[७१]

कृष्णस्य दास्यभावाद्देवी दिव्या सरस्वती साक्षात् ।
लेखनकर्मणि सततं संतोषेण प्रकाशिता भूयात् ॥

[७५]

अद्यापि वासनानां सुचिराऽभ्यस्तास्ति परिपाटी ।
भगवांस्तत्र च नित्यं स्वीयं सन्निध्यमाधेयात् ॥

२०४+७५=२७९

४—वृन्दावनसर्गः

[१]

सर्वेषां सौख्यानां सारामृतसारसर्वस्वम् ।
श्रीकृष्णकीर्तनीयं धन्यं वृन्दावनं धाम ॥

[२]

निखिलब्रह्माण्डानामाध्यात्मिकमूलभूतं यत् ।
विलसति यमुनातीरे तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[३]

गेहे गेहे राधाकृष्णमयं मानसं यत्र ।
अधरीकुरुते स्वर्गं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[४]

सर्वेऽप्यत्र चरन्तः सन्तः सच्चिन्मयाकाराः ।
कृष्णाऽनन्दनिमग्नास्तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[५]

राधामाधवलीलाचरितानां गायनं यत्र ।
सायुज्यमोक्षालाभं वितरति वृन्दावने धाम्नि ॥

[६]

नाना जन्मोपार्जितपुण्यैर्यद् दर्शनं लभ्यम् ।
श्रीकृष्णचरणरेणुर्विलसति वृन्दावने धाम्नि ॥

[७]

देवा नित्यं यात्रां कृत्वा यत्र प्रमोदन्ते ।
सर्वान् सर्वं यच्छति तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[८]

तरणितनूजातरणे तारावलिरत्र दृश्यते निखिला ।
दिनमणिरपि निजतनयाभाग्यं धन्यं सदा मनुते ॥

[९]

एषा तमालनीला कदम्बवृक्षैः परिव्याप्ता ।
वनपंक्तिरपि नितान्तं सद्‌भक्तानां विनोदमातनुते ॥

[१०]

श्रीकृष्णचरणरेणुप्रसादपरिपक्वतां याताः ।
सन्तो यत्र रमन्ते न काऽपि वाञ्छाऽपराथ तच्चित्ते ॥

[११]

करुणामयनारायणभूर्येषां मानसे पदं धत्ते ।
मुक्तिर्वा भुक्तिर्वा तेषां दासायते सर्वम् ॥

[१२]

वृन्दावनयात्रायां यमुनामध्ये निमज्जनं येषाम् ।
ते वै निरञ्जनपदं देहेऽस्मिन्नेव सम्प्राप्ताः ॥

[१३]

लोकाः सर्वेऽप्यथ ते सर्वे ते लोकपाला वा ।
कैङ्कर्ये तिष्ठन्तो यत्राऽहोभाग्यतां यान्ति ॥

[१४]

पाराशर्यनिगदितं भागवतं नाम पीयूषम् ।
कर्णैराचामन्तो धन्या नूनं परं धन्याः ॥

[१५]

श्रीपद्मनाभगाथामृतपानेन प्रमत्तानाम् ।
अग्रे निखिलं तृणवत् संजातं वैभवं सुरेन्द्राणाम् ॥

[१६]

विहरति यत्र विहारी वृन्दारकवन्दनीयपदरेणुः ।
भक्तानां हृन्मध्ये मधुरं मधुरं समालपति ॥

[१७]

यत्र पुरातन चिह्नान्यद्याप्यायान्ति लोचने तेषाम् ।
येषां निर्मलमानसमध्ये नारायणो लसति ॥

[१८]

नित्यनवीना सरणिर्भक्तानामुल्लसति यत्र ।
प्राक्तनमप्यति-नूत्नं तदिदं वृदावनं धाम ।।

[१९]

शंकरभगवत्पादैः श्रीमद्रामानुजाचार्यैः ।
प्रभुवरवल्लभवर्यैः सेवितमेतच्चिरं धाम ।।

[२०]

मध्वाचार्यवरेण्यैर्मधुसूदनवन्द्यपादैर्वा ।
श्रीगौरांगमहाप्रभुसेवितमेतच्चिरं धाम ।

[२१]

सर्वैर्धर्माचार्यैर्विद्वद्वर्यैस्तथा च दार्शनिकैः ।
वैभवमत्र विलोकितमास्ते विपुलं तथा नित्यम् ।।

[२२]

षोडषकलाऽवतंसः श्रीकृष्णो यत्र योगेशः ।
संक्रीडते निकामं तदिदं वृन्दावनं धाम ।।

[२३]

श्रीराधायाश्चरणे निपतति तस्याः प्रसादमभिकांक्षन् ।
श्रीकृष्णो योगीश्वरवन्दितचरणश्चिरं यत्र ।।

[२४]

भगवत्या राधाया वैभवमत्रैव दृश्यते विपुलम् ।
त्रैलोक्यैक-स्वामी कृपाकटाक्षं समीहते तस्याः ।।

[२५]

यत्र हि युगलकिशोरप्रणयप्राङ्गणमयी भव्या ।
भक्तानां हृदयाब्जे धारा वृन्दावने जयति ।।

[२६]

चिरयुगलमपि तदेतच्चिरविरहं वा सहैव संभजते ।
संयोगविप्रलम्भे माधुर्यं नित्यमुल्लसति ।।

[२७]

सुचिरं कृतशर-सन्धिः साक्षाद्वा कामदेवोऽपि ।
भग्नं कुरुते स्वीयं धनुरद्यापि स्वभक्तिसंलग्नः ॥

[३८]

घोरेऽस्मिन् कलिकालेऽप्यतिशयभीतः कलिर्यत्र ।
दूरे तिष्ठन् प्रणमति भक्तजनानां चरणरेणूः ॥

[२९]

कलिवात्याऽवर्तेऽस्मिन् शकटासुरवत्प्रवर्धमानेऽपि ।
चिन्ता न काऽपि कार्या यतो मुकुन्दः समुल्लसत्यत्र ॥

[३०]

श्रद्धा विश्वासाभ्यां सम्पुष्टा भक्तिनवधारा ।
वृन्दाऽरण्ये निखिले लोकं सर्वं विनिर्मलं कुरुते ॥

[३१]

वृन्दावने प्रविष्टा मनुजाः पशुपक्षिणश्चान्ये ।
जीवा जडा अपि पुनर्धन्या धन्या न सन्देहः ॥

[३२]

पापप्रथाप्रशान्तिः श्रीकृष्णस्य प्रभासमवलम्बात् ।
क्षणमात्रेणैवाऽस्मिन् भूभागे सर्वसुलभास्ते ॥

[३३]

वत्सरसहस्रशतशतचलिता धारा कलिन्दकन्यायाः ।
श्रीयमुनाया लोचननिपात-मात्रेण तापमाहरते ॥

[३४]

लोकोत्तरसौगन्धिकमालाभिः पूज्यमानोऽत्र ।
विविधैस्तथोपचारैः श्रीकृष्णः प्रीतिमान् भवति ॥

[३५]

क्षणमात्रेण चरणयोर्ध्याने जाते मुकुन्दस्य ।
सर्वा क्लान्तिर्गच्छति जन्मसहस्रार्जिताऽपि वा सा स्यात् ॥

[३६]

वृन्दावनस्य सुषमासौभाग्यं वर्णयेत् को वा ।
व्यासः साक्षाद् भगवान् गद्गदभावं परं प्राप्तः ॥

[३७]

कारागारे श्रीमत्या देवक्या स्वां जनिं लब्ध्वा ।
पुनर्यशोदां गत्वा कृष्णो द्वैमातुरो जातः ॥

[३८]

श्रीचैतन्यमहाप्रभुरत्रागत्यात्मभावेन ।
श्रीकृष्णाख्ये तेजसि सततं सन्तिष्ठते लीनः ॥

[३९]

गोस्वामिप्रवराभ्यां श्रीरूपश्रीसनातनाभ्यां वा ।
तदिदं वृन्दारण्यं वैकुण्ठत्वेन सन्दृष्टम् ॥

[४०]

रसखानकाव्यरचना कालिन्द्याः कूलमुल्लिख्य ।
स्वीयाऽमरत्व-भावे नूनं संस्थापिता जाता ॥

[४१]

व्रजभाषाविनिबद्धं धन्यस्यैवाऽथसूरदासस्य ।
लोकातीतं काव्यं कस्य न चेतो हरति नित्यम् ॥

[४२]

वृन्दावनस्य शोभां कवयन् श्रीसूरदासोऽयम् ।
भाषा-काव्याऽकाशे सत्यं सूर्यः सुसञ्जातः ॥

[४३]

गणनातीताचार्यैर्भक्तैर्विद्वद्वरेण्यैर्वा ।
वृन्दावनसेवायामहमहमिकया प्रवृत्तमेवाऽसीत् ॥

[४४]

असितगिरेस्तुल्या यदि मसीभवेत् सिन्धुपात्रे सा ।
सा कल्पवृक्षशाखा यदि लेखिन्येव बोभूयात् ॥

[४५]

सकला चेयं पृथिवी पत्रस्थानं भवेत् प्राप्ता ।
वाग्देवी सा सर्वं कालं दद्याद् स्वलेखने धन्या ।।

[४६]

वृन्दावनगुणगणना तदापि नेयं समाप्तिमागच्छेत् ।
सर्वाऽमरैर्वरेण्यं तदिदं वृन्दावनं धाम ।।

[४७]

वृन्दावनं नवनवं नित्यं नवनवायमानतारुण्ये ।
विस्मितशोभं यमुना तरंगितं राजते भुवने ।।

[४८]

वृन्दावनस्य मध्यात् किञ्चिन्मात्रं कणं नीत्वा ।
धाता सृजते नूनं ब्रह्माण्डानां परम्परा निखिलाः ।।

[४९]

वृन्दारण्यस्वामी निखिलं रूपं विधारयति ।
स्वीयाऽराध्यां देवीं राधामाराधयति यत्र ।।

[५०]

राधयते या सर्वं मनोमुकुन्दस्य सा यत्र ।
नित्यं युक्ताऽप्येषा विरहे तपते मुकुन्दस्य ।।

[५१]

'हा माधव' इति निगदति राधा विरहाकुला यत्र ।
हे राधे'ति मुकुन्दोप्यतिशयविरहं तनोति युक्तोऽपि ।।

[५२]

प्रेम्णः परमाकाष्ठा योगवियोगौ समौ यत्र ।
परमात्मनोऽथ तस्य च तस्याश्चैवादिशक्तेर्वा ।।

[५३]

सेयं चरमाकाष्ठा प्रेम्णो रसराजतां याता ।
वृन्दावनस्य कुञ्जे रासं नित्यं समातनुते ।।

[५४]

संयोगविप्रलम्भौ सर्वैरन्यै रसैः परं पुष्टौ ।
त्रैलोक्यनाथरासे वृन्दारण्ये प्रसादमायातौ ॥

[५५]

श्रुतिरपि निगदति नित्यं रसस्वरूपं परं परामृशती ।
निश्चप्रचं तदेतत् स एव कृष्णो रसोऽस्त्येकः ॥

[५६]

इत्येव घोषयन्ती रासाऽख्यं तद् रहस्यसंस्पृष्टम् ।
वृन्दावनान्तरंगे सुषमासारं विबोधयते ॥

[५७]

वृन्दावनसंलापानन्दं सर्वस्वमुज्झित्य ।
विपरीते विरमन्तः सन्तो वा भाग्यहीना वा ॥

[५८]

करगतबदरीसदृशं सर्वं विश्वं समुल्लसति यत्र ।
वृन्दावनं तमेनं कोऽधन्यो नो निषेवेत ॥

[५९]

सर्वस्वं जीवानां भूलोके विद्यते विपुलम् ।
त्रैकालिकं मनोज्ञं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६०]

नानापुराणनिगमागमवर्णननैपुणीं यातम् ।
विश्वविमोहनशीलं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६१]

दुःखाऽगाधसमुद्रे निमज्जतामाश्रयीभूतम् ।
परमचमत्कृतिपुञ्जं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६२]

दुग्धं दधि नवनीतं धाराबद्धं समुच्छलति यत्र ।
साराऽमृतं च तदिदं सर्वं वृन्दावनं धाम ॥

[६३]

अधुना मधुमयभावोच्छलिताभिर्दिव्यलहरीभिः।
संयोजयति नितान्तं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६४]

विश्वप्रेमवशीकृतसंलापैः सत्कथाऽलापैः।
नित्यप्रवाहयुक्तं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६५]

स्वामिश्रीहरिदासो मोहिनि देवोऽपि राजते यत्र।
टटियास्थानं दिव्यं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६६]

आन्तरिकभावनानां साम्राज्यं विस्तृतं यत्र।
प्रीतिसमुद्रोन्मथितं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[६७]

विश्वविमोहनशीलं सर्वं कल्याणदं पुण्यम्।
देवैरहमहमिकया काम्यं वृन्दावनं धाम ॥

[६८]

देशविदेशोन्मेषप्रवाहधारासमाश्लिष्टम्।
श्रीकृष्णचरितचर्चा सुभगंवृन्दावनं धाम ॥

[६९]

कलिवात्याभिः संस्थितमतिदूरे सत्प्रभादीप्तम्।
दिव्याऽरण्यमुनीनां गमकं वृन्दावनं धाम ॥

[७०]

शान्तिसमेधितसुषमासम्पूर्णं सत्प्रतिष्ठितं दिव्यम्।
दिव्यावदानपूर्णं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[७१]

श्रीकृष्णचरणवन्दनमभिलाषीकृत्य संततं पतितैः।
ब्रह्योपेन्द्रमहेन्द्रैर्भरितं वृन्दावनं धाम ॥

[७२]

यत्राऽगत्य जनानां सञ्जातो ह्यान्तरोन्मेषः ।
गूढार्थदर्शकं तद् जयति तु वृन्दावनं धाम ॥

[७३]

सेवाकुञ्जसुसेवासम्मिलिता यत्र देवा वा ।
श्रीराधापरिचारकभूता वृन्दावने धाम्नि ॥

[७४]

सर्वोत्सवभूमिरियं नानाविधसौख्यमयदृश्यम् ।
सर्वैः क्षणैर्विचेयं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[७५]

श्रीमद्भागवतस्य च कथा सदा जायते यत्र ।
व्याख्यायन्ते श्लोकास्तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[७६]

यत्र परमहंसानां मोदितविभवाश्च सञ्चाराः ।
श्रीकृष्णचरणरेणुप्रकर्षयुक्ता विजायन्ते ॥

[७७]

अद्यापि सर्वविधतत्कलाविलासैः परिव्याप्तम् ।
सर्वाकर्षणशीलं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[७८]

कामगवी कामानां सर्वे वृक्षाश्च काममयदेहाः ।
संक्रमराजितगेहा यत्र तु वृन्दावनं धाम ॥

[७९]

मनसा वाचाऽगोचरसौभाग्यं यस्य सद्रूपम् ।
पर्वतराशिविभूषितमेतद् वृन्दावनं धाम ॥

[८०]

साङ्गः सायुधवर्गः परिवारैः कोटिभिर्युक्तः ।
श्रीकृष्णः कृतवसतिर्यत्र तु वृन्दावनं धाम ॥

[८१]

एतस्य कलामात्रं सर्वे वा नगरधौरेयाः ।
उपजीवन्ति नितान्तं तदिदं वृन्दवनं धाम ॥

[८२]

सर्वौषधाऽमृतमयी भूरियमाभाति परितोऽपि ।
नैकशतवार्षिका अपि सन्तो निभृता विराजन्ते ॥

[८३]

राधाकृष्णपदाम्बुजकिञ्जल्कोन्मादविस्मृतस्वान्ताः ।
सन्तो निर्जितकामास्तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[८४]

निखिलैश्वर्यं यच्छति यत्रत्या भक्तिमययात्रा ।
सर्वा समृद्धिसुलभा तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[८५]

यत्र च कलिन्दजायाः कूले विहरन्सदैव सन्मनुजः ।
भक्तावोतप्रोतस्तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[८६]

व्रजनाथो यत्र गतोऽनुमतो शिवनाथ विश्वनाथाभ्याम् ।
श्रीमत्सुरेशनमितस्तथा रमेशेण धन्यतां गमितः ॥

[८७]

भक्तेर्नवमन्दाकिनिधारायां ये निमज्जन्तः ।
विधिविलसितसौभाग्यास्तेषां वृन्दावनं धाम ॥

[८८]

नानाजन्मसमर्जितपुण्योपायेन यल्लभ्यम् ।
भूमीभूषणभूतं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[८९]

सर्वब्रह्माण्डानां मूलं गोलोकमयरूपम् ।
परमे व्योमनि संस्थं तदिदं वृन्दावनं धाम ॥

[९०]

काशीप्रयागसुभगा साऽयोध्याऽसौ जगन्नाथः ।
श्रीबदरीनाथोऽपि च सर्वे तत्रैव संस्थिता नित्यम् ॥

[९१]

सर्वेश्वरस्य रूपं समुज्ज्वलं यस्तु नीलमणिः ।
कोटिकचन्द्रकलायुतश्रीराधासंगतो यत्र ॥

[९२]

श्रीमद्बिहारिमन्दिरमध्ये सन्दर्शनस्य संस्फूर्तिः ।
भक्तिर्दासीभूत्वा सर्वानन्दान् विधारयति ॥

[९३]

श्रीरङ्गमन्दिरं तद् विपुलं सौवर्णिकैर्युक्तम् ।
स्थापत्ये साम्राज्योन्मेषो यत्राऽथ संस्फुरति ॥

[९४]

गोदामन्दिरमतिशयरम्यं शतशः प्रतिमसंयुक्तम् ।
दर्शकचेतोहरणे नव्यतमं भावमादिशति ॥

[९५]

अंग्रेजमन्दिरं तन्नूत्नं गौरांगभक्तिसंयुक्तम् ।
वेदान्तप्रभुपादे विशेषतो यत्र भक्तिरुल्लसति ॥

[९६]

पागलबाबामन्दिरमस्तीदं सुबहुमूर्तिभिर्युक्तम् ।
सर्वविधं सौभाग्यं लोचनयुगलस्य धारयति ॥

[९७]

श्रीमथुरास्थितजन्मस्थानं कृष्णस्य नूतनत्वे वा ।
विलसति नानाभास्वरसंभारैर्भूषितं विपुलम् ॥

[९८]

सेयं मथुरा नगरी सप्तपुरी परिगणितविभावाभा ।
श्रीवृन्दावनपार्श्वे श्रीकृष्णं ध्यायतीव हृदयेशम् ॥

[९९]

कोटिब्रह्माण्डानामुत्पादयिता च पालयिता ।
संहर्ताऽपि च तेषां जन्म स्वयं यत्र वा लेभे ॥

[१००]

कलियुगमेतद्यद्यपि कंसभयं शैशुपालभयम् ।
श्रीकृष्णे धृतकाये चिन्ताऽस्मान्दूरतस्त्यजति ॥

[१०१]

सर्वं सदा विनष्टं भविष्यतीति प्रतीतं नः ।
श्रीकृष्णस्तु स भगवान् सततं स्थास्यति न सन्देहः ॥

२७९+१०१=३८०

५—गोसेवासर्गः

[१]

परितोऽपि मे भवन्त्विति श्रीकृष्णेनाभिवाञ्छिता यासाम् ।
सन्निधिरेता नित्यं नवजीवनसंगता गावः ॥

[२]

वेदानामपि मध्ये यासां महिमा विराजते शुभ्रः ।
देवा अपि यासां वा वपुषि विराजन्ति ता गावः ॥

[३]

भारतसंस्कृतिमध्ये सबलनिषेकोऽभवद् यासाम् ।
ताः सर्वपूतकाया विश्वस्मिन् वन्दिता गावः ॥

[४]

कमनीयतमं रूपं मानुषवपुषो विराजते निखिलम् ।
यत्कृपया ता एताः पूज्यतमाः सन्ति नो गावः ॥

[५]

याज्ञे कर्मणि नित्यमेतद्देशस्य सर्वस्वे ।
यासां विना पदमपि नो गन्तुं पार्यते गावः ॥

[६]

पूततमेयं संस्कृतिरद्यत्वेऽपि प्रतिष्ठिता लोके ।
तत्र तु मूलं निखिलं ता एता मातरो गावः ॥

[७]

सर्वविधं मलजातं धार्मिक-कार्येषु संग्राह्यम् ।
तादृश्यस्ता एव हि संसारे मातरो गावः ॥

[८]

विश्वविमोहनमूर्तिर्यासां दूरीकरोति पापानाम् ।
पटलीं दर्शनमात्रे ता एताः सन्ति मातरो गावः ॥

[९]

रघुवंशमहाकाव्ये रघुगाथायां लसन्ति याः सुषमाः।
तत्राऽपि मूलसूत्रं ता एताः सन्ति मातरो गावः।

[१०]

सद्यो जाते बाले यासां दुग्धं सुधा भवति।
मानवसंकायेऽस्मिन् सर्वोपरि मातरो गावः॥

[११]

काव्यमये संसारे नवता याऽसौ विलोकिता भवति।
सर्वस्या अपि तस्याः समुद्भवा मातरो गावः॥

[१२]

निखिलायां मेदिन्यां सुषमा यासां सुगन्धिमातनुते।
नानावर्णविनिर्मितकायास्ता मातरो गावः॥

[१३]

यासां संरक्षार्थं राज्ञामासीद्धनं विपुलम्।
कायश्चाथ समेषां तेषां ता मातरो गावः॥

[१४]

यासां गुणगणनायां पाश्चात्यो जायते शेषः।
नवनवगुणगणभरितास्ता एता मातरो गावः॥

[१५]

मानोन्नतिर्यदीया विश्वस्मिन् सर्वतो वन्द्या।
मानवरक्तकणानां मध्ये ता मातरो गावः॥

[१६]

यासां दर्शनमात्रं पापानां लोपकं भवति।
शुद्धे भावोद्रेके ता एता मातरो गावः॥

[१७]

दिव्यपयोधरभूताश्चतुःसमुद्रा भवन्ति यासां ताः।
परितो महिमा पूर्णाः सत्यं सन्त्येव मातरो गावः॥

[१८]

छायेव महीपतयो यासां सेवासु संलग्नाः ।
वन्दितविभवैर्युक्तास्ता एता मातरो गावः ॥

[१९]

नद्यः पूततमास्ता यासां सुषमा समुद्भूताः ।
निर्मलरसमयधारा संयुक्ता मातरो गावः ॥

[२०]

सत्ये विश्वे रूपे यासां रूपाण्यनन्तानि ।
दृष्टान्येव समन्तात्ता एता मातरो गावः ॥

[२१]

मानुषमातुर्नियतं मलपरिरम्भस्तु नो कार्यः ।
मनुजेन, किन्तु कार्यस्तासां ता मातरो गावः ॥

[२२]

मानुषमातुर्मूत्रमस्पृश्यं स्नानसापेक्षम् ।
किन्तु यदीयं पेयं सत्यं ताः सन्ति मातरो गावः ॥

[२३]

यासां खुरगतपांसुः स्वर्गाणां दायको भवति ।
सर्वमभीष्टं यच्छति ता एता मातरो गावः ॥

[२४]

यासां श्रृंगविभूषा संसृष्टेर्मानचित्रमिव ।
ऋषिभिर्मन्त्रे दृष्टा ता एता मातरो गावः ॥

[२५]

सर्गस्थितिलयकर्ता कृष्णो गोपालतां गमितः ।
नो गण्योऽसौ महिमा यासां ता मातरो गावः ॥

[२६]

विश्वामित्रवसिष्ठप्रवादमध्ये समागता यासाम् ।
गाथा नित्यनवीनास्ता एता मातरो गावः ॥

[२७]

यत्सेवनवन्दनपरिचर्या निखिलेष्वभीष्टदा भवति ।
जात्यादिदोषहीनास्ता एता मातरो गावः ॥

[२८]

वाचां विस्तारोऽयं विभवो वा तादृशः सुकरः ।
यासां दर्शनमात्राल्लभ्यस्ता मातरो गावः ॥

[२९]

ब्राह्मणगोवंशानां समुद्भवश्चैककुलमूलः ।
यज्ञार्थहवीरूपं यत्र तु ता मातरो गावः ॥

[३०]

यासां संसेवार्थं ब्रह्म तु पुरुषोत्तमो जातः ।
सर्वविधशक्तियुक्तास्ता एता मातरो गावः ॥

[३१]

जन्मोत्सवसमयानां यासां दानेषु भव्यता दृश्या ।
प्राचीनास्ता गाथा यासां ता मातरो गावः ॥

[३२]

मन्त्रमयसिद्धिरूपास्ता एता भान्ति पुरतोऽपि ।
सर्वविधशान्तिदात्र्यस्ता एता मातरो गावः ॥

[३३]

प्राणाहुतिपर्यन्तं रक्षा विहिता दिलीपेन ।
यशसां राशिर्लब्धस्ता एता मातरो गावः ॥

[३४]

सर्वा समाजरचना देशेऽस्मिन्सा यदाधारे ।
संजाता कल्याणी ता एता मातरो गावः ॥

[३५]

मैथिलजनकसभायां यासां ग्रहणेन याज्ञवल्क्यर्षिः ।
सन्दीप्तोऽभून्नितरां ता एता मातरो गावः ॥

[३६]

निम्नतमेऽस्मिन् कलियुगकाले जागर्ति यत् पुण्यम् ।
सर्वस्य तस्य शोभा यासां ता मातरो गावः ॥

[३७]

ज्ञानं भक्तिः कर्म च सर्वं यासां समाश्रयेणैव ।
नितरां सिद्ध्यति काले ता एता मातरो गावः ॥

[३८]

यासां संज्ञामात्रं सर्वार्थानां प्रदायकं भवति ।
सर्वाङ्गास्ताः कथमिव कथ्यन्तां मातरो गावः ॥

[३९]

सर्वे धर्माचार्या यासां सेवाऽमृतेन सन्तुष्टाः ।
वीराणां पुरुषाणां ता एताः कीर्तयो गावः ॥

[४०]

साक्षात् स्रोतस्विन्यस्ता वा विज्ञान-धाराणाम् ।
संकथ्यन्तां कथमिव ता एता मातरो गावः ॥

[४१]

दधि गव्यं नवनीतं गव्यं गोदुग्धमथ गव्यम् ।
गोमूत्रं तद् गव्यं गोमयगव्यप्रदा गावः ॥

[४२]

गो चर्मणि-गोमांसे या चेयं कुत्सिता दृष्टिः ।
पापीयसी तु मज्जा दृष्टिः केषांचिदद्य संदृष्टा ॥

[४३]

तेषामेषामपि तां परिपूरयितुं कृपालुतादृष्टिः ।
यासां ता एवैताः परिपूर्णा मातरो गावः ॥

[४४]

संसारे पापानां गणना नास्तीति यद्विदितम् ।
ते पापमयाः पुरुषा गोहत्या सञ्चयो येषाम् ॥

[४५]

ते स्वात्महानिमसमां प्रदर्शयन्तोऽपि नो तुष्टाः ।
अन्यानप्यवशिष्टान् स्वीये पापे प्रणोदयन्त्येव ॥

[४६]

गोमांसविक्रयाणां कर्तारो दैत्यरूपास्ते ।
धिक्कारास्तान् सर्वान् नराधमान् थूत्कृतिस्तेभ्यः ॥

[४७]

ये गोहत्यापापे पारम्परिकेऽपि संलग्नाः ।
धिक् तान् वारं वारं धृणास्पदास्ते न सन्देहः ॥

[४८]

घोराद् घोरतरं यद् धोरतमं चापि यत्पापम् ।
तद् गोहत्यापापात् कोटिगुणां न्यूनतां भजते ॥

[४९]

सन्ततिरप्यथ तेषां जाता पापीयसी सर्वा ।
गोब्राह्मणहितकर्ता गोपालस्तान् सुशिक्षयिष्यति वा ॥

[५०]

आयास्यति गोपालश्चक्रं धृत्वा सुदर्शनं स्वकरे ।
गोहत्यासंलग्नान्नराधमान् शिक्षयिष्यति वै ॥

[५१]

शासनतन्त्रे सर्वे पापेऽस्मिन्निष्क्रिया जाताः ।
नूनं कलिमलधारा सर्वं तूर्णं मलमयं कुरुते ॥

[५२]

यस्मात् कालाद् भारतबाह्या संस्कृतिरिहाऽयाता ।
शासनकर्मपरीता तस्मात् कालात्तु पापमिदम् ॥

[५३]

अतिशय-दुर्दमनीयं संप्रारब्धं नितान्तमस्वर्ग्यम् ।
नरकप्रदं तु! घोरं सर्वसमृद्धिप्रणाशकरम् ॥

[५४]

भारतबाह्या एते जाङ्गलिकाः शोभनैस्तु संस्कारैः ।
नितरां हीनाः कथमिव स्वीकुर्युर्धार्मिकं मार्गम् ॥

[५५]

अर्थे वा कामे वा नितरां मग्नास्तु दाम्भिका एते ।
धर्मस्यापि सुरक्षां कुर्वन्त्यथ कामसम्पूर्त्यै ॥

[५६]

अन्नमयं सौम्य-मनो यद्यद्वाऽप्यद्यते तदेवान्नम् ।
गोमांसाशनशीलास्तादृशमेवाऽभिधारयन्ति मनः ॥

[५७]

तादृशशासनपुष्टा एते चाप्यद्य देशीयाः ।
कथमिव वा तद्भिन्नं मनसो रूपं विजानीयुः ॥

[५८]

एकेनाऽपि तदात्वे पाण्डेयेनैव यत्कृतं कर्म ।
सांसारिकेतिहासे तद्वै स्वर्णाक्षरैर्लिखितम् ॥

[५९]

सन्त-विनोबाभावे स्वात्मानं यः समर्पितवान् ।
गाथा नवतां गमिता प्राचीना भारतीयानाम् ॥

[६०]

गोहत्याकर्मणि ये प्रत्यक्षतया परोक्षरूपे वा ।
संलग्नास्तेषामथ सन्ततिरपि निरयमाप्नोति ॥

[६१]

कामं केषांचित् सा धनवृद्धिर्हिंसयाऽथ गवाम् ।
संजाता तेषामथ नामापि विलोपितम् भवति ॥

[६२]

रावणकंसादीनां गोब्राह्मणहिंसकानां वा ।
निजतनयाय न कोऽपि तु नामापि ददाति सम्बुद्धौ ॥

[६३]

पार्यन्तिके च काले सर्वबले शेषतां गमिते ।
गोहिंसाऽख्यं तदिदं कर्म तु मृत्युं विदूषयति ।।

[६४]

नैवाऽस्ते काचिदियं मिथ्यारूपा विधारणा सर्वा ।
मान्यतमानां सरणिर्जातियं भारतीयानाम् ।।

[६५]

या माता रुद्राणामथ च वसूनां हि या दुहिता ।
पीयूषस्य च नाभिः सा गौर्वन्द्या जगन्माता ।।

[६६]

सा जन्मभूमि-सदृशी नहि नहि सा वै ततोऽप्यधिका ।
यद्रक्षायां लग्नं साकारं तत् परं ब्रह्म ।।

[६७]

केषामपि जीवानां पापानां घोररूपाणाम् ।
वृद्धिरतीवोत्कृष्टा सञ्जायेतेति हिंसनं तासाम् ।।

[६८]

वेदेष्वथ च पुराणेष्वास्ते व्याप्तो गवां महिमा ।
अवतारा आचार्याः सर्वे गोरेणु-रूषिता जाताः ।।

[६९]

गोशब्दस्यार्थानामपि संख्या विपुलतां याता ।
आवेदयति नितान्तं गोशब्दस्यार्थगाम्भीर्यम् ।।

[७०]

गोभक्तानां काचिद् परिस्थितिर्विद्यतेऽथ विषमैव ।
स्वीयां मातरमपि ये गावं पश्यन्ति दुग्धया दृष्ट्या ।।

[७१]

क्वाऽस्ते सा गोभक्तिः सा वद्यत्वे धनग्रहे निपुणा ।
गोनामग्रहणस्य व्यापारे सन्धिलग्नास्ते ।।

[७२]

संमानग्रहणार्थं या गोभक्तिः प्रदर्श्यते निपुणैः ।
निपुणाभिश्च नितान्तं गोहत्या साधकं न किमु ॥

[७३]

सर्वं सुखमयरूपं परितोऽप्युपभुञ्जमानानाम् ।
परिचर्या–गोभक्तिः काष्ठा - चरमैव दृष्टेयम् ॥

[७४]

एते ननु गोभक्ताः सर्वविधं सुखमयं भोगम् ।
भुञ्जाना अपि नित्यं गोरक्षाया व्रतं दधति ॥

[७५]

पाखण्डानां सेयं चरमाऽवस्था पुरस्थितैवास्ते ।
नहि नहि कोऽपि हि शक्तो वक्तुं तेषां रहस्यमयरूपम् ॥

[७६]

इयमतिजरठा काचिन् नवबालाभिः समं समस्तेषु ।
धनिकेषु गवां भक्तिं कथयति धनसंग्रहायैव ॥

[७७]

अयमथ बकगोभक्तस्तिष्ठति सर्वत्र सर्वाग्रे ।
यत्राऽस्ते गोभक्तिव्याख्यानं सोऽप्यसौ तत्र ॥

[७८]

शोभनभाषणकाले करतलतालीप्रदानसंलग्नः ।
नूनं द्रविणं वाञ्छति गोरक्षां तां परां कर्तुम् ॥

[७९]

रे रे लोकाः किमवच्छिन्नं नाद्याऽपि मोहमयजालम् ।
एतान् यत् कापुरुषानद्यत्वेप्याश्रयध्वे यत् ॥

[८०]

यदि गवि माता दृष्टा मातृश्रद्धा च जागृता जाता ।
सर्वस्वलुण्ठनात्प्राग्गोपेवां स्नेहभक्तियुताम् ॥

[८१]

नूनं तूर्णं हृदये संधार्यैवं प्रवर्तन्ताम् ।
येन किमप्यवशिष्टं यत् पुण्यं तत् फलेग्रहि स्याद्वा ॥

[८२]

गोदुर्दशा तु घोरा कदर्थना या गवां क्रियते ।
सा सर्वा परिवर्त्या भक्तौ परिपूर्णरूपेषु ॥

[८३]

मातृश्रद्धा यावन्मनसि तथा नैव जागर्ति ।
सा श्रद्धा च गवां प्रति यावन्नो धारिता भवति ॥

[८४]

कार्यमये व्यवहारे यावन्नैषा विलोक्यते पुरतः ।
तावद् गोसेवाया वाणी सर्वा प्रचारमात्रं स्यात् ॥

[८५]

यत्र च मिलन्ति गावस्तत्रैव स्युः प्रणामपरिपाटीः ।
यत् किञ्चिद् वा भोज्यं तासामग्रे निवेदनीयं नु ॥

[८६]

पृच्छा काचन कार्या प्रवर्तनीयं गवां विषये ।
स्वल्पाऽयासेनेत्थं गोरक्षा सा समीपमागच्छेत् ॥

[८७]

नो वाञ्छन्ति समेषां योगं त इमे प्रचारका धूर्ताः ।
तेन तु गोसेवायां श्रेष्ठत्वं तद् विनश्येत ॥

[८८]

नानायानारूढाः नेतारश्चाथवाऽचार्याः ।
कीदृशमप्यथ गावं यानारूढं न कृतवन्तः ॥

[८९]

किञ्चिदपि वैपरीत्ये जाते ते चैव सद् गावम् ।
लोष्टाश्मकराऽघातैः प्रताडयन्त्येव कालेषु ॥

[९०]

अलक्षिताऽभ्युत्पतना गोहत्यायां चिराल्लग्ना ।
निजदेहार्पणदृष्ट्या सर्वेप्येते समालोक्याः ॥

[९१]

तस्मान् न्यूनां भाषां न श्रोष्यन्त्येव ते सर्वे ।
तेषां जीवनमूला गोहत्या तान् समीरयत्येव ॥

[९२]

सा पारणा तदीया तत्र च यः शोभनः पन्थाः ।
कविकुलगुरुणा दृष्टो नान्यः पन्थाऽयनाय द्रष्टव्यः ॥

[९३]

सर्वविधदुःखजातं शीतोष्णोत्थं परं सोढ्वा ।
या माताऽस्मान् रक्षति तद्रक्षायै सदाहुतिर्देया ॥

[९४]

तस्मादन्यं मार्गं गोरक्षार्थं य एव संदिशति ।
धूर्तवरेण्यो नितरां स्वार्थे लग्नः स मन्तव्यः ॥

[९५]

मामप्येवं छन्दसि विलासवाणीषु शूरं हि ।
मा स्वीकुर्वन्तुतरां वा गोरक्षायां कदापि संलग्नम् ॥

[९६]

किन्तु समस्तां गाथां गोरूपे जाग्रतां विलोक्यैवम् ।
सा स्थितिरङ्गीकार्या यया परा जायते रक्षा ॥

[९७]

कोऽपि न तिष्ठेत्तादृशपाखण्डे लग्नतामात्रात् ।
सर्वश्रेष्ठादरतायुक्तः पूज्यः समाजेषु ॥

[९८]

ये या धूर्तवरेण्या नानारूपाणि सन्धार्य ।
श्रद्धाया उपयोगे संलग्नास्ते तु धिक् कार्याः ॥

[९९]

मरणादूर्ध्वं तेषां मोक्षस्य तु का कथैवाऽस्ते ।
यद्याऽस्ते कोऽपि यमः स एव तान् द्रक्ष्यते सर्वान् ॥

[१००]

सर्वस्वाहुतिदानान्न्यूना नास्त्येव गोरक्षा ।
वाचो विग्लापनमथ यदि कार्यं वा यमस्तत्र ॥

[१०१]

यद्यपि कलौ युगेऽस्मिन् पाखण्डभ्राजितानि रूपाणि ।
काले संशोभन्ते पर्यन्ते निरय एव स्यात् ॥

[१०२]

इति गो सेवाशतके शिवदत्तेनैतदत्यधिकम् ।
यद्वा तद्वा चोक्तं क्षमा तु तत्रापि देयैव ॥

३८०+१०२=४८२

६—श्रीरामचन्द्रसर्गः

[१]

रामं नौमि नितान्तं शरणं मनुजस्य निर्मलं नित्यम् ।
दासीकृता समस्ता मानवता यत्कृपालेशैः ॥

[२]

यस्य तु नामस्मरणं विपद्विदलनं करोति नित्यं भोः ।
तस्य चरणयुगलं कुरु हृदये शान्तिप्रपत्यर्थम् ॥

प्रीत. |

[३]

श्रीरामचन्द्रमूर्तिहृ`दये मणिरिव यदि स्थिता भूयात् ।
क्वास्ते विपत्तिताण्डवदावाग्निः क्वाऽथवा दुःखम् ?

[४]

रामस्य स्मितरेखा यदि किञ्चित् स्मृतिपथे सुसंलग्ना ।
निखिलानां पापानां संहर्त्री सा क्षणेनैव ॥

[५]

श्रीरामं विमलतमं नित्यं ध्यायन्ति मनुजा ये ।
तेषां सर्वसमृद्धिः करतल-ललिता सुनिश्चिता भवति ॥

[६]

श्रीरामभद्रमनिशं स्वीयमनोमन्दिरे रक्षन् ।
मनुजः कामं सकलां बुद्धिसमृद्धिं विलासयति ॥

[७]

राक्षसगणाः समन्ताद् येषां विचरन्ति भूयिष्ठाः ।
श्रीरामस्मृतिमात्रं तेषां संरक्षणे दक्षम् ॥

[८]

नैराश्यस्याक्रमणं यदुपरि संजायते घोरम् ।
श्रीरामनामजपतो दूरीभूतं भवेत्तद्वै ॥

[९]

लीलाविग्रहशीलः श्रीरामो हृदयदेशसंलग्नः ।
मनसि च वचसि च काये संपूर्णां दीप्तिमातनुते ॥

[१०]

भूयान् कालो यैर्वा व्यतिगमितो व्यर्थ-भावेन ।
तेषामपि साफल्यं रामस्मरणेन संजातम् ॥

[११]

सम्पूज्यः श्रीरामो मनसा ध्येयः समर्चनीयश्च ।
यदि साफल्यं काम्यं जीवनकाले मनुष्येण ॥

[१२]

दारिद्र्य-दुःख-शान्त्यै श्रीरामः सेवनीयतमः ।
तत्क्षणपरितुष्टोऽयं क्षणमात्रेणैव दहति दारिद्र्यम् ॥

[१३]

चित्तस्य तापशन्ति-र्मनसो नैर्मल्यभावश्च ।
सर्वविधासुसमृद्धि—र्लभ्या श्रीरामसेवातः ॥

[१४]

रामः कलिमलमथनः कालुष्यक्षालने नितराम् ।
आज्ञां स्वीयाममलां सततं सम्प्रेषयति सदयः ॥

[१५]

श्रीरामस्यैवाज्ञा विचरति लोकेषु मूर्तिमती ।
रक्षति साधुसमाजं धूर्तगणान् मूर्छितान् कुरुते ॥

[१६]

यशसां सम्प्राप्त्यर्थं लोकोत्तरकर्म संस्कर्तुम् ।
श्रीरामचन्द्रसेवा सततं धार्या मनुष्येण ॥

[१७]

सर्वात्मस्नपनं तद् श्रीरामे प्रेम यज्जातम् ।
घोरतमां कलिवात्यां निमिषेणैव प्रशामयति ॥

[१८]

रामचरित्रोद्याने विचरन् मनुजः समस्त कालुष्यम् ।
दूरीकरोति नियतं रामस्याज्ञा-प्रभावेण ॥

[१९]

मनुजः कियती मात्रा देवा वा दानवाः सर्वे ।
पितरो ऋषयः सर्वे रामाज्ञा पालने निरताः ॥

[२०]

परम-पवित्र-चरित्रा-वलिभिर्देदीप्यमानं तम् ।
श्रीरामं हृन्मन्दिर-मध्ये कुर्वन्नरो धन्यः ॥

[२१]

यस्मिन्देशे काले श्रीरामः संस्फुरेच्चित्ते ।
धन्यतमास्ते देशा- स्ते कालाश्चाऽपि धन्यतमाः ॥

[२२]

श्रीरामचन्द्रसेवा परायणानां परा सम्पत् ।
संततमाविर्भावं नूत्नं नूत्नं विभासयति ॥

[२३]

बुद्धौ तथा शरीरे नाना वचसां प्रचारे च ।
साफल्यं भवति तदा यदा हि रामः कृपां समातनुते ॥

[२४]

श्रीरामनाममन्त्रं कलिमलहरणं निखिलपापघ्नम् ।
सर्वसमृद्धिकरं तज्जपतो मनुजस्य नास्ति भयलेशः ॥

[२५]

सर्वाभिलाषपूर्तिं श्रीरामः संततं कुरुते ।
निश्छलभावध्यातः सन्मार्ग-सर्वमादिशति ॥

[२६]

अद्यावधि जीवानां गणना नो ध्यातुमपि शक्या ।
ये श्रीरामपदाब्जे मनो निधायैव संतीर्णाः ॥

[२७]

श्रीराममन्त्रजपतः स्वीयं जीवनमहोभावे ।
नीतवतां जीवाना–मग्रे तुच्छं भवति सर्वम् ॥

[२८]

यद्यपि नास्ति समीपे कीदृशमपि वस्तुजातं वा ।
विनिवेदयितुं पुरत—स्तथापि मनसा प्रकल्पनीयं तत् ॥

[२९]

श्रीरामो चित्तस्थो ग्रहणं कुरुते मनःस्थस्य ।
प्रत्यक्षं तत्सर्वं ददाति संकेतमात्रेण ॥

[३०]

पापीयान् देहोऽयं मनस्तथैवाथ भूरिपापीयम् ।
सर्वं निर्मल-भावे नीतं श्रीराममन्त्रेण ॥

[३१]

भगवन्तं श्रीरामं नित्यं ध्यायन्ति मनुजा ये ।
तोषस्तेषामधिको विलीयते चापदां धारा ॥

[३२]

वीर

रामचरित्रे मननं चिन्तनमथ यैः कृतं नित्यम् ।
वीरा भावास्तेषां हृदये तूर्णं विभासन्ते ॥

[३३]

मालिन्तं यत् पतितं मनसि नितान्तं परिव्याप्तम् ।
दूरीभवति समग्रं तत्सर्वं रामनाम्नैव ॥

[३४]

सर्वा निश्चयबुद्धिः प्रदर्शिता येन राममयतायाम् ।
कल्याणानां नित्यं परम्परा तत्र जागर्ति ॥

[३५]

श्रीरामचन्द्रचरिते चिन्तन-करणेन सा नित्यम् ।
चेतसि बिमला स्फूर्तिः सद्यः प्रकरोति रोमाञ्चान् ॥

[३६]

श्रीरामः क्षणमात्रं ध्यातः सद्यो विशोधयति ।
कालुष्याणां सरणिं नाना जन्मार्जितानां ताम् ॥

[३७]

श्रीरामभद्रसूर्यो हृदये जागर्ति सद्यश्चेत् ।
क्वाऽस्ते तमः – प्रभावः क्वाऽस्ते वा दुःखलेशोऽपि ॥

[३८]

हृत्पुण्डरीकमध्ये भृङ्गायितमेव तं रामम् ।
सन्तः सदा स्मरन्तो सर्वां सिद्धिं समश्नुवते ॥

[३९]

सर्वापीयं भूमिर्विहिता पुण्या प्रभावैः स्वैः ।
श्रीरामेण तथैवाऽऽन्दोलितमेतज्जगत्सर्वम् ॥

[४०]

सर्वं ददाति रामः पूर्णं कुरुते सदा ध्यातः ।
दुःखं चालसभावं सर्वं सद्यो विशोधयति ॥

[४१]

पूर्णपुरातनपुरुषः सदा नवीनो वसन् हृदये ।
नवनीलनीरदाभो चरणे दद्यात् समाश्रयं किञ्चित् ॥

[४२]

विततं येन चराचर–मेतन्निखिलं स्वमायया महितम् ।
तं श्रीरामं शरणं कृत्वाऽस्ते धन्यता जनुषि ॥

[४३]

श्रीरामे कृतकामे वल्लभता स्वीकृता येन ।
सद्यस्तस्य विमुक्तिर्जाता क्लेशैश्च दारिद्रयैः ॥

[४४]

विषमेषुबाण-खिन्नाः पतन्ति ये घोरतमजाले ।
श्रीरामादन्यः कस्तानुद्धर्तुं सुसन्नद्धः ॥

[४५]

श्रीरामचन्द्रलीला येषां हृदयेषु जागर्ति ।
ते न किमपि कुर्वाणा कुर्वन्त्यखिलं स्वजीवनं धन्यम् ॥

[४६]

रामे सत्यचरित्रे समस्तरूपेषु विश्वस्मिन् ।
परितः प्रदृश्यमाणे नास्तितमां कोऽपि भयलेशः ॥

[४७]

कीदृशमपि तद् घोरं शुभ्रं वा कर्ममयजालम् ।
श्रीरामार्पितरूपं कल्पद्रुमतां समाप्नोति ॥

[४८]

वसतुतमां श्रीरामो हृदये काये तथा वाचि ।
सम्प्रार्थनां सदैव स्वीकुर्यात्कर्मभोगेषु ॥

[४९]

श्रीमद्रामो मनसा ध्यातो नित्यं करोतु सुसमृद्धीः ।
सम्प्रार्थनां समन्तादपि देवाः कुर्वते नित्यम् ॥

[५०]

श्रीरामचन्द्रनाम्ना सम्पूर्णं स्यान्मनः सततम् ।
भूयो भूयो याञ्चा भक्तानां जायते नित्यम् ॥

[५१]

श्रीरामो निखिलानां पापानां दाहको भूयात् ।
स्वीकृतसाधुचरित्रा लोकाः सर्वेऽभिवाञ्छन्ति ॥

[५२]

श्रीरामस्य कथायां मनसः प्रेमाऽनिशं भूयात् ।
तस्य कृपयैवैतत्सर्वं सुन्दरमभूज्जगद्विदितम् ॥

[५३]

प्रातः स्वस्थे चित्ते श्रीरामस्यैव रूपाणि ।
प्रत्यक्षतां गतानि स्युश्चेन्निश्चप्रचा मुक्तिः ॥

[५४]

निन्दितचरितं तूर्णं सम्पूर्णं तत्तिरोभूयात् ।
श्रीरामनामजपतो नैर्मल्यं नित्यमाप्नुयाद् देही ।।

[५५]

सम्पूर्णे व्यक्तित्वे श्रीरामो दीप्तिमाधेयात् ।
करतलगतमिव सर्वं विभासतां रामसस्मरणात् ।।

[५६]

अवरुद्धानि तु कार्याण्यपि सम्पूर्णानि सद्यः स्युः ।
श्रीरामचन्द्रकृपया नान्या गतिरस्ति विश्वस्मिन् ।।

[५७]

श्रीरामस्मृतिमात्रं सन्तमसानां विनाशकं भवति ।
निखिला समृद्धिरनुगा संजाता रामचिन्तनेनैव ।।

[५८]

किञ्चातो माङ्गल्यं भूयाज्जन्मनि मनुष्यस्य ।
यद्रामभद्रचरितं मानसमान्दोलितं कुर्यात् ।।

[५९]

सर्वाऽप्यक्षरमाला ज्ञानं सर्वं विचारणा निखिला ।
श्रीरामेत्यक्षरगत–दीप्त्या दीप्ता विभासन्ते ।।

[६०]

निर्मलतामुपगच्छति मानसमिदमस्ति यत्तुच्छम् ।
श्रीरामदिव्यमूर्तिस्मरणस्यैव - प्रभावेण ।।

[६१]

श्रीरामेऽमृतपूर्णं चरितं सर्वत्र दृश्यते विमलम् ।
स्मृतिरपि तस्यामलतां जन्मनि जन्मनि विलासयति ।।

[६२]

सद्यस्तावन्मनसा ध्यातः श्रीरामचन्द्रोऽयम् ।
सर्वविधां सम्पत्तिं ददाति मनसाऽप्यपरिमेयाम् ।।

[६३]

औदार्येणापूर्णो दयया नित्त्यं तरङ्गितो रामः।
संमुखमायातस्य तु सर्वं संपूर्णतां नयति॥

[६४]

सर्वचराचरकणकणवन्दित–चरणारविन्दोऽयम् ।
श्रीरामचन्द्रभगवान् देयात् स्वीयं प्रसादमाधुर्यम्॥

[६५]

मालिन्यतापशान्त्यै भूयाद्रामस्य संस्मरणम्।
शुभ्रं कर्म सदैवाऽमृतमयतामादिशेत् काले॥

[६६]

श्रीरामचन्द्रचिन्तनमान्दोलितमेव जीवनं कुर्यात्।
संपूर्णां वाग्धारां प्रवाहयेन्मानसे विमले॥

[६७]

न्यूनं यद्यज्जातं तत्सर्वं पूर्णतां यातु।
श्रीरामचरणवन्दनपरायणानां सदैवाऽत्र॥

[६८]

अमलात्मनां विलासा तत्र सदैवाऽथ जायन्ते।
श्रीरामचन्द्रचरणे कल्पतरौ सर्वभावेन॥

[६९]

यशसां तत्साम्राज्यं सम्पूर्णं करगतं भवति।
श्रीरामप्रणतिरियं यदि नित्यं जागृयान्मनुजे॥

[७०]

शुकवद्रटनं तावद्यन्नाम्नो निखिल सम्पदं देयात्।
तं श्रीरामं रसना नित्यं रसयतु विनाऽयासम्॥

[७१]

वक्तृत्वे नित्यं सा दीप्तिः संस्फुरतु चित्ते या।
श्रीरामस्य कृपातो लोके रञ्जनमहो कुरुते॥

[७२]

निश्चयभावः सततं सर्वेष्वपि कर्मजालेषु ।
श्रीरामस्य कृपातः सततं लभ्यो भवेन्मनुजे ॥

[७३]

श्रीराचन्द्रसंस्मृतिरमला नित्यं दहतु दारिद्र्यम् ।
संपूर्णं जीवनमथ धन्यं कुर्यात् सदा कुशलम् ॥

[७४]

सर्वा सृष्टिरियं स्यात् कृपया पूर्णा नितान्तरमणीया ।
कष्टानां संसारस्तिरोभवेद् रामसेवातः ॥

[७५]

नास्ति किमपि संसारे रामादन्यत् शुभं किञ्चित् ।
श्रीरामोऽथ नितान्तं मङ्गलभावं करोति सर्वत्र ॥

[७६]

स्वीकृतदयार्द्रहृदयः श्रीरामः केवलं मनसा ।
ध्यातः पूर्णं सर्वं कार्यं शोभनतमं कुरुते ॥

[७७]

भद्रमयं सर्वं तत्प्रजायते रामचर्चायाम् ।
सर्वं रहस्यभूतं स्फुटीभवति रामसेवातः ॥

[७८]

जटिलतमग्रन्थीनां जीवनकालेऽथ दृष्टानाम् ।
श्रीरामस्य स्मरणं शीघ्रतरं भेदनं कुरुते ॥

[७९]

शोकस्याऽपूर्वा या तरंगमाला प्रदृश्यते पुरतः ।
या दुरदृष्टा माया क्षणमात्रेणैव लुप्यते सर्वा ॥

[८०]

नव्यतरे परिवेशे प्राचीनं सर्वमायाति ।
श्रीरामस्मृतिचिन्तामणिना किं नो कृतं मनुजे ॥

[८१]

विषमतरोऽपि समाजो जडभावे यो निवेशयति।
श्रीरामचन्द्रचर्चाऽभावस्तत्कारणं मृग्यम् ॥

[८२]

श्रीरामे शुभदातरि सर्वं शुभमेव बोभूयात्।
किञ्च विनैवायासं सर्वसमृद्धिः स्वयं वृणुयात् ॥

[८३]

स तु सर्वत्रैवाऽस्ते श्रीरामो नाऽपरं किञ्चित्।
सर्वस्तस्य विलासो रूपे रूपे समाभाति ॥

[८४]

सर्वे काले देशे ज्ञाने वा साधनेषु सर्वेषु।
श्रीरामस्यैवेच्छा सामान्या कारणीभूता ॥

[८५]

रामे गुणगणत्रासो धन्यत्वं स्वीयमेव ननु।
घोषयतीति नितान्तं तस्य तु रमणीयता जाता ॥

[८६]

कल्पद्रुमः समन्तात्प्रभविष्णू राममन्त्रोऽयम्।
सर्वं सौख्यमनश्वरमविरलतायां समादिशति ॥

[८७]

श्रीरामचन्द्रभक्तिः सुदुर्लभा यदि कृपां कुर्यात्।
अणुमात्रामपि पूर्णां समृद्धिमत्रैव चाप्नुयान्मनुजः ॥

[८८]

सर्वविधं काठिन्यं श्रीरामो ध्यानमात्रेण।
दूरीकरोति नित्यं तत्सेवाऽस्ते परा संपत् ॥

[८९]

सन्देहानां सर्पा गरलं यत्फूत्कृतौ घोरम्।
सततं वमन्ति दूरीभवन्ति ते राममन्त्रेण ॥

[९०]

नैराश्यस्य पिशाची रामेत्यक्षरश्रवणसमकालम् ।
दृष्टिपथाददतिदूरे याता न पुनः समीपमायाति ॥

[९१]

श्रीरामचन्द्रचिन्तनमौषधभूतं भवाऽमयस्यैवम् ।
रोगस्य मूलरूपं प्रोन्मूलयितुं सुसन्नद्धम् ॥

[९२]

सैषा प्रकृतिः सर्वा कोटिषु संजागृता निखिला ।
श्रीरामचन्द्रसेवा कर्मणि नित्यं सुसंलग्ना ॥

[९३]

परमं ज्योतिर्विमलं सृष्टौ सर्वत्र नैर्मल्यम् ।
विस्तारयति नितान्तं श्रीरामान्नित्यनिष्पन्नम् ॥

[९४]

श्रीरामो हृद्ग्रन्थीर्भिन्द्यात् सततं स्वयं दीप्त्या ।
निर्मलमथ चारित्र्यं प्रकाशितं प्रार्थितं कुर्यात् ॥

[९५]

श्रीरामचन्द्रचरणे चेतो भूयात्तथा लग्नम् ।
घोरे विपत्तिजालेऽप्यविचलितं वा यथा तिष्ठेत् ॥

[९६]

पालयति पालकोऽयं श्रीरामः सज्जनान् सर्वान् ।
दैवीसम्पन्नित्यं संप्राप्या राम - संस्मृत्या ॥

[९७]

आदिशतु रामभद्रः स्वीयां सेवां मनसि नित्यम् ।
तापस्य भवेच्छान्तिर्यया मनस्यैव कल्पितया ॥

[९८]

करुणा पूर्णा वृत्तिर्यासौ तस्यैव विद्यते परितः ।
श्रीरामस्तां करुणां चेतसि कृपया समाधेयात् ॥

[९९]

संसारे वसतिरियं निन्द्या दौर्गत्य - परिपूर्णा ।
मान्या तथा वदान्या जाता श्रीरामसंस्मरणात् ।।

[१००]

कालोऽनन्तः सोऽयं श्रीरामेण प्रपूरितो निखिलः ।
तद्रतिसौख्यमनन्तं नूनं संजायते काले ।।

[१०१]

इति तावत् श्रीगिरिधरशर्मचतुर्वेदतनुजन्मा ।
शिवदत्तचतुर्वेदस्तदिदं शतकं निवेदयति ।।

४८२+१०१=५८३

: ७ :

वाल्मीकिसर्गः

[१]

सिद्धाः सन्ति सुकवयः संसारे सर्वभावेन ।
सन्दीप्तास्तिग्मांशुप्रखरैरेभिर्यशोभिरतिक्रान्तैः ।

[२]

वैदिकवाग्विभवानां कवितायां सा प्रकाशना जाता ।
आदिकविरेष तस्मात् स्वयम्भुरेवाऽस्ति संगतो लोके ॥

[३]

वेदान्तर्गतकवितावैभवमत्यद्भुतं जयति ।
यद्वशतो देवा अपि समुपस्थातुं सुविवशाः स्युः ॥

[४]

दिव्योदात्तस्वरितानामारोहावरोहाद्यैः ।
सर्वा वैदिकवाणी सर्वेषां सर्वथा वन्द्या ॥

[५]

आद्यास्ते वा ऋषयः सर्वेषां वन्दनीयतमाः ।
येषां ऋतं च सत्यं सर्वं सन्मार्गमादिशति ॥

[६]

विश्वामित्रवसिष्ठा दिव्यास्ते वामदेवाद्याः ।
ते याज्ञवल्क्यमुख्या मन्त्राणां दर्शनेषु विख्याताः ॥

[७]

स्वरसंदूषणदूषितमेतच्छन्दः प्रतीपार्थम् ।
प्रकटीकृतवान् वृत्रः समजनि शक्रेण यो निहतः ॥

[८]

परमे व्योमनि संस्थितमेतत्कविधाम यस्मिन् हि ।
सर्वं प्रपञ्चमेतल्लीनं क्रीडति सदुन्मिषति ॥

[९]

आदि कविः परमात्मा काव्यं तस्यास्ति चैतदतिविततम् ।
'पश्य तदेतत्काव्यं यन्न ममाराथ नो जीर्णम् ॥'

[१०]

गद्ये पद्ये गाने ऋग्यजुषः सामनामानः ।
मन्त्राश्चेमे नियतं किमप्यपूर्वं समादिशन्त्येव ॥

[११]

आदिकविर्वाल्मीकिः कविता यस्यैव सर्वतः प्रथमम् ।
लोके प्रादुर्भूता श्रीमद्रामायणे दिव्ये ॥

[१२]

वाल्मीकिरेष सुमहानद्रिः कवितानदीनां वा ।
नानारसभरितानां समुद्भवो यत्र संजातः ॥

[१३]

वाल्मीकिवाङ्नदीनां प्रवाहमालासु संपतिताः ।
सज्जननिवहाः स्वीयं जन्म सुसफलं समाचक्रुः ॥

[१४]

वाल्मीकिरेष भगवान् प्राचेतस इति समाख्यातः ।
पूर्वं यद् दुर्वृत्तं पश्चात्संसारतारकं जातम् ॥

[१५]

ऋषिसाक्षात्काराणां कश्चिन्महिमा समुद्योतः ।
सञ्जातो यद् हर्षान्मानवतावर्षणं जातम् ॥

[१६]

नारदसाक्षात्कारावसरे यद् वाल्मीकिना प्रोक्तम् ।
जिज्ञासितमथ यद्वा श्रीरामस्तत्र निर्णीतः ॥

[१७]

प्राक्स्वाभाविककविता विनिर्गता मा निषादेति ।
मानवगतकरुणाया निष्यन्दस्तत्र सञ्जातः ॥

[१८]

प्रथमं लोके छन्दस्तदिदं सदनुष्टुभं नाम।
तेनैवछन्दसा ननु पश्चात्सृष्टिः परिव्याप्ता ।।

[१९]

श्रीरामस्य चरित्रं पूर्णपुरातनसुपुरुषस्य।
सर्वविधमङ्गलानां मूलं वाल्मीकिना गीतम् ।।

[२०]

नानाविधचरितानां या संसृष्टिः कृता तत्र।
तस्मिन्नादिमकाव्ये का तुलनाऽन्यत्र तस्य स्यात् ।।

[२१]

दशरथजनकादीनां राजर्षीणां रहस्यमयचरितम्।
विश्वामित्रवसिष्ठप्रभृतिऋषीणां चरित्राणि ।।

[२२]

रामं भरतं लक्ष्मणमथ शत्रुघ्नं च वीरभावेषु।
सम्वर्णयन्नितान्तं चादिकविः सर्वतोषणं कुरुते ।।

[२३]

कौसल्या च सुमित्रा कैकेयी वन्दिता माता।
रामादीनां चैता सर्वजगन्मातृरूपाणि ।।

[२४]

यज्ञानां सा रक्षा ताड़कमारीचशासनं च पुनः।
दिव्यधनुर्भङ्गविधौ गाथा सर्वा विनिर्णीता ।।

[२५]

जनकस्य च राजर्षेश्चरितावलिमध्यभागेषु।
गौतममहर्षिगाथाऽहल्यागाथा च वर्णिता जाता ।।

[२६]

सीतास्वयंवरे या काव्येऽस्मिन्माधुरी कथिता।
सर्वेषामपि सहृदयहृदयानां स्पन्दनं तत्र ।।

[२७]

एका भूषणभूषिता सर्वाङ्गा वानरी दासी ।
खलचरितं संसारे विख्यातं चेष्टयामास ॥

[२८]

दुर्मन्त्रणासु शक्तिः कियती सन्तिष्ठतेत्येतत् ।
किं किं वा नहि घटते तस्या वा मृग्यमत्रैव ॥

[२९]

वेदेष्वपीतिहासास्ते सन्त्येवेदृशाः ख्याताः ।
सोऽयं मनः स्वभावः संसारोन्मेषसंरम्भः ॥

[३०]

राज्याभिषेकवेला वनवासाय प्रकल्पिता जाता ।
श्रीरामस्य च लोकोत्तरता तत्र प्रकाशमायाता ॥

[३१]

एतेन तत्र काले भारतवर्षे ऋषीणां सा ।
संस्कृतिरपि प्रकाशं प्राप्ता नित्यं समुज्ज्वला याऽसीत् ॥

[३२]

रावणसदृशा अपि वाऽभिमानतादात्म्यतापन्नाः ।
आसुरभावे दीप्ता राजानस्तत्र संलोक्याः ॥

[३३]

वानरभल्लूकानां साम्राज्यं तत्र वर्णितं सम्यक् ।
श्रीमद्हनुमच्चित्रं रामायणवर्णितं नम्यम् ॥

[३४]

संग्रामाणां शतशश्चित्राण्यत्रैव दृश्यानि ।
सर्वेषां च रसानां सम्यक् तत्रास्ति परिपाकः ॥

[३५]

कोटिमितेप्यथ काव्ये यन्नासाद्यं समुन्नतं तत्त्वम् ।
वाल्मीकिवाक्प्रवाहे तद्वै सर्वत्र विस्तीर्णम् ॥

[३६]

मानसिकसद्रहस्यस्फोरणनवजातमाधुर्या ।
वाल्मीकीया वाणी कोकिलनिःस्वानमाधुरीं सूते ॥

[३७]

भारतवर्षीयाणां तस्मिन् काले परिस्थितिर्याऽसीत् ।
सा सर्वापि सुरचिता रामायणगुम्फिता जयति ॥

[३८]

भूभागानामथवा मनोरमं सुन्दरं चित्रम् ।
वैपुल्येन विकासितमास्ते रामायणे तस्मिन् ॥

[३९]

दिव्यचरित्रावलिभिर्मण्डितमेतद्विचित्रताभरितम् ।
वाल्मीकीयं काव्यं कस्य न चेतश्चमत्कुरुते ॥

[४०]

यत्र च रसनिष्यन्दः परमां काष्ठां समुन्नीतः ।
सर्वेऽप्येते शब्दार्थालंकाराश्चमत्कृता जाताः ॥

[४१]

सर्वविधं गरिमाणं संधारयदादिमं काव्यम् ।
श्रीवाल्मीकिसुयशसां निधानभूतं विरजितं दिव्यम् ॥

५८३+४१=६२४

: ८ :

गोस्वामि-तुलसिदाससर्गः

[१]

श्रीमांस्तुलसीदासः पूर्णं साक्षात् परं ब्रह्म ।
यस्य विवर्तः सोऽयं मानसरूपेण बाभाति ॥

[२]

नाना निगम - पुराणैर्गिरिभि - र्भास्वन्ति रत्नानि ।
खचितानि तेन नैजे मानस - भवनेऽतिशुभ्राणि ॥

[३]

यस्मिन्काले विषमे मानवता दीर्घमुच्छ्वसन्त्यासीत् ।
तस्मिंस्तुलसीमेघस्तां काले रक्षयामास ॥

[४]

अद्यत्वेऽपि वयं यन्निगमे चर्चां समुज्ज्वलां कुर्मः ।
तदिदं तस्य सुमनसः सद्यत्नस्यैव साम्राज्यम् ॥

[५]

रामस्य नाम विमलं विमलचरित्रं च वैभवैर्वलितम् ।
परमस्य तस्य पुंसः सर्वैर्गीतं तु मुक्तकंठेन ॥

[६]

श्रीमांस्तुलसीदासस्तां स्तान्सर्वांस्तु सम्यगालोच्य ।
स्वीये राम-चरित्रे भाषाललिते सुगुम्फयामास ॥

[७]

तेनासीमा तृप्तिर्जनताया भारतीयायाः ।
आबालवृद्धवनितासंघानां जायतेऽनुदिनम् ॥

[८]

वेदैस्तथा पुराणैर्नाटकमुख्यैर्न काव्यैश्च ।
जनतासु पदं लब्धं तथा यथा मानसेनात्र ॥

[९]

आसाद्य कविधुरीणं गीर्वाणी हन्त शोभते नितराम् ।
भाषान्तरे हि सत्यपि संस्कृतमेवास्ति सर्वत्र ॥

[१०]

ये त्वारोपणकुशलास्तुलसीपूजासमारंभात् ।
वेदादिद्रुमपूजाव्यतिक्रमं कल्पयन्ति तदसम्यक् ॥

[११]

एष तु नूनं दोषस्तेषामेवास्ति धीराणाम् ।
यत्ते तेषामर्चामिद्यत्वे न प्रकल्पन्ते ॥

[१२]

यद्येष नाभविष्यत्तुलसी वैषम्य-कवलिते काले ।
वेदपुराणादीनां नामाप्यवशिष्टमत्र नाभविष्यद्वा ॥

[१३]

गणनाधिकजनताया वेदाद्यैर्नामभिः परामर्शम् ।
विमलं मानसमेवाद्यत्वे सर्वत्र कारयति ॥

[१४]

तुलसीकौस्तुभमणिना प्रसारितेनातिशुभ्रेण ।
जीवनतेजःपुञ्जेनैवालोकितमिदं सर्वम् ॥

[१५]

नवनीतसमस्तुलसी नवभावान्पोषयामास ।
तेन बलाधानेनैवामृतमिव लेपितं लोके ॥

[१६]

जंगमतरुरेष महानानन्दे कानने चरति ।
तुष्टावेति च निगदन् श्रीमान् मधुसूदनस्वामी ॥

[१७]

निखिलेन्द्रियवशकरणे गोस्वामित्वं तु चरितार्थम् ।
तस्यैव विमलशिक्षां मानसमाधाति मानसेषु सताम् ॥

[१८]

आद्याक्षरेण नाम्नस्तुरीयरूपस्य परमतत्त्वस्य ।
रामस्य रूपमखिलं विदन्नसौ धारयामास ॥

[१९]

मध्याक्षरेण लक्ष्मणरूपं तं जीवनामानम् ।
चरमाक्षरेण सीतां मायां विज्ञेषु बोधयति ॥

[२०]

एवं तुलसीशब्दे ब्रह्म च जीवं च मायां च ।
क्रोडीकुर्वन्स्वीयं दासत्वं तेषु बोधयति ॥

[२१]

नित्यनिरंजनशान्तं निरुपाख्यं यत् परं ज्योतिः ।
चकिताः सदा समाहुः श्रुतयो यन्नेति नेतीति ॥

[२२]

लोके करुणापरवश-रूपं तत्त्ववततार यदा ।
तद्वर्णने कृतमतिः श्रुतिरपि रामायणं जातम् ॥

[२३]

अथ लोकमानसे तज्ज्योतिः पुनरप्यवातरत् साक्षात् ।
रामायणमेव तदा तुलसीदासस्य मानसं प्रबभौ ॥

[२४]

एवं वर्णनलोभात् तस्यैव निरञ्जनस्य शान्तस्य ।
श्रुतिरनुगच्छति नित्यं सैषा यात्रास्ति रमणीया ॥

[२५]

झिल्लीरववत्केचन् कवयः कथयन्ति यत्किञ्चित् ।
रामचरित्रे विमले शंखरवस्तुलसिदासस्य ॥

[२६]

श्रीमद्हनुमद्भक्त-स्तुलसीदासः स्वमानसे विमले ।
तस्यातुलबलराशे-र्विमलचरित्रं निरूपयांचक्रे ॥

[२७]

आदिकविर्वाल्मीकिः पन्थानं दर्शयामास ।
भक्तिप्रपूरितोऽयं तुलसी तं पूजयांचक्रे ॥

[२८]

विमला हनुमद्गाथा रामकथामालिकासु मध्यमणिः ।
सर्वासां सिद्धीनां साम्राज्यं तत्र बाभाति ॥

[२९]

सुन्दरकाण्डे रम्ये तस्यैव बुद्धिमद्वरिष्ठस्य ।
लोकोत्तरं सुकार्यं वर्णितमादाय रामकथाम् ॥

[३०]

हनुमद्बाहुककाव्ये चमत्कृते भावपरिपूर्णे ।
मारुतितनयस्तवनं शोभनपद्यैः प्रकल्पयांचक्रे ॥

[३१]

स्वयमपि मारुतिमूर्तिं वाराणस्यां प्रतिष्ठाप्य ।
संकटमोचननाम्ना स्तोत्रं तत्रापि गुम्फयामास ॥

[३२]

अद्य तदेतन्मन्दिर-मद्भुतश्रद्धास्पदं समाजस्य ।
स्तोत्रं च तद्विनिर्मित-महर्निशं जप्यते लोकैः ॥

[३३]

ये केचन सम्बन्धा, भारतवर्षस्य सर्वस्वाः ।
तेषां मूलं तत्त्वं तुलसी व्याख्यातवानतुलम् ॥

[३४]

सम्बन्धबन्धनं तद् मानुषजनुषोऽस्ति भूषणं मधुरम् ।
तेन विना पशुताया मानवतायाश्च को भेदः ॥

[३५]

सम्बन्धानां व्यूहः परिवारः कथ्यते लोकैः ।
अत्र हि गौरवमतुलं देशस्यास्यैव संसारे ।।

[३६]

सम्बन्धसूत्रमेतद् यावद् यावद् दृढं भवति ।
तावच्चरमां काष्ठा-मध्यारूढं विलोक्यते राष्ट्रम् ।।

[३७]

वैदेशिकैस्तु योगे जाते कालुष्यमत्र यद् दृष्टम् ।
नूनं तस्यैव फलं दीर्घा परतन्त्रताऽस्माकम् ।।

[३८]

सम्बन्धसूत्रकिल्बिष-मेतं तुलसी विलोकितवान् ।
देशस्य दुर्दशाया मूलं तत्रैव निश्चिकाय सुधीः ।।

[३९]

गार्हस्थ्ये परिपूर्णं जीवनमासीत्तुलसिदासस्य ।
भारतसंस्कृतिचित्रे तस्यैवोज्ज्वलतमा रेखा ।।

[४०]

श्रीमान् स सूर्यकान्त-स्त्रिपाठिवर्यो निरालाख्यः ।
तुलसीस्नेहचरित्रं गार्हस्थ्ये रूपयामास ।।

[४१]

एतत्काव्यविलोकनवेलायां ज्ञायते सुधीवर्य्यैः ।
मानसकाव्यरचयितुः कुत्रासीत्प्रेरणा रम्या ।।

[४२]

कविकुलगुरुः स आसी-न्निपुणतमः कालिदासोऽत्र ।
विद्योत्तमैव निखिलं कारणमासीत्तदीयरचनासु ।।

[४३]

रत्नावली तथैवात्रापि निगूढं विराजते हृदये ।
परिवर्तितं यदनया मानसमेतस्य मानसे रम्ये ।।

[४४]

निर्मलराम-चरित्रे सीताचरितं विमलतरम् ।
निखिले रामचरित्रे तस्या एवास्ति साम्राज्यम् ॥

[४५]

सम्बन्धानां बन्ध-स्तया यथा वर्तितो विमलः ।
सोऽनुगतोऽद्यावध्यनवच्छिन्नः प्रवाहेण ॥

[४६]

जन्मान्तरेषु गच्छति संबन्धः संस्कृतः सोऽयम् ।
तत्तत्वं विज्ञातुं मानसमालोक्यतां सर्वम् ॥

[४७]

त्रैलोक्यादपि लब्धुं समुन्नतिं प्राज्ञधुर्याणाम् ।
नम्रत्वं राममये निखिले जड़चेतने समुल्लसति ॥

[४८]

ये ये प्रणतिप्रवणा विश्वजगन्मोहिनीषु रचनासु ।
ते मेरुमन्दरमुखै-रप्युच्चतरा विलोक्यन्ते ।

[४९]

नम्रतमोऽयं तुलसीदासः कस्यास्ति न प्रणम्यतमः । का.
यद्राममयं निखिलं विश्वं ध्यात्वा सदा नमति ॥

[५०]

मानसमेतन्निखिलं निर्मलचारित्रचित्रणागारम् ।
वारं वारं येषां श्रवणं मननं समुल्लसति ॥

[५१]

श्री राघवेन्द्रचरितं त्रैलोक्यां श्लाघनीयतमम् ।
मानससरस्वतीयं तेनैवालोकि वन्द्यतमा ॥

[५२]

वाल्मीकिगिरेः शिखरात् रामचरित्रस्य या धारा ।
सुविशाले जनमानसमहाह्लदे वेशिता नित्या ॥

[५३]

मानसगंगा विमला प्रवाहिता येन वीरेण ।
सोऽयं भगीरथोऽभूत्तुलसीदासः कवीन्द्रमणिः ॥

[५४]

तद्रक्तकणकणेषु प्राधावद्रामनामाऽसौ ।
निखिलो निरञ्जनः सन् यः सर्वत्रैव संततं भाति ॥

[५५]

योऽसौ भुवनवनानां कर्ता धर्ता तथा च संहर्ता ।
पूरुषरूपेणाद्यः पुरुषः सोऽवातरत् साक्षात् ॥

[५६]

धन्या मानवतेयं धन्यः कालो धरित्री च ।
यस्मिन्नासीदत्र हि नयनालोक्यं परं तत्त्वम् ॥

[५७]

धन्यः स वाङ्मयोऽयं तदीयचारित्रवर्णनानिपुणः ।
सैवाऽपूर्वा घटना दिव्यतमा यत्र चोल्लसति ॥

[५८]

वेदानां यत्तत्त्वं रामाख्यं तत् परं ज्योतिः ।
तद्वर्णनानिपुणता वेदानां वेदनीयाऽस्ते ॥

[५९]

पौराणिकमपि निखिलं वाङ्मयमाभाति निर्मलं नित्यम् ।
रामाख्यस्यैवेशस्याततिमां तत्र साम्राज्यम् ॥

[६०]

वेदपुराणमहागिरिशिखरद्वयसन्निधानेऽत्र ।
वाल्मीकीया वाणी कोकिलकण्ठी समुल्लसति ॥

[६१]

रामचरित्रोन्मेषस्याविर्भूता निकाममधुलहरी ।
यस्यास्वादननिरता निरन्तरायं न पश्यन्ति ॥

[६२]

कविकुलगुरुरथचासीद्रामचरित्रस्य गायको विमलः ।
रघुवंशनाम काव्यं तस्यैवास्ते सुविख्यातम् ।।

[६३]

रामगिरेराश्रमतो जानक्या चादिपूजितया ।
मेघाख्यं तत्काव्यं लोके ख्यातिं परामापत् ।।

[६४]

भवभूतेरथ वाणी संसारे वन्दनीयतमा ।
रामस्य रूपमश्रुतपूर्वं यत्रास्ति दर्शनीयं तत् ।।

[६५]

उत्तररामचरित्रे लोकोत्तरनायकाऽलोके ।
स्वीयां वाणीं कविरयमत्यन्तं पूजयामास ।।

[६६]

एतद्वर्णनसरणेरालोके राघवेन्द्ररूपाणि ।
कस्मिन्कस्मिश्चेतसि द्युतिमत्वं न प्रकुर्वन्ति ।।

[६७]

'अपिग्रावे'त्यादि तु वाक्यकदम्बः प्रशस्यतमः ।
सहृदयचेतसि नियतं खचित इवाभाति भावनाभातः ।।

[६८]

रामचरित्रे स्वीयां मतिमाख्यातुं कवीन्द्राणाम् ।
अहमहमिका समासील्लोके तेनैव वन्द्यतोल्लासः ।।

[६९]

यदि क्षुण्णं पूर्वैरित्यादिकमाहरन् मुरारिकविः ।
स्वीये नाटकरत्ने रामचरित्रं प्रकाशयति ।।

[७०]

हनुमन्नाटकरचना हनुमत्कविना कृता विमलहृदा ।
शब्दानां सा धारा वारं वारं प्रणम्यास्ति ।।

[७१]

एतादृशलोकोत्तरशतशतकाव्येषु रामचरितस्य ।
या धारा सञ्चरिता तस्यां तुलसी निमज्जनं चक्रे ॥

[७२]

नानापुराणनिवहे निगमागमकाननेष्वपारेषु ।
वाल्मीकिवाक्प्रवाहे सर्वास्वन्यासु रचनासु ॥

[७३]

तुलसीदासः सम्यक् कृतवान् बोधं विमलतरम् ।
रामचरितमानसमिदमतिशयितं सम्प्रकल्पयामास ॥

[७४]

एषा सरला रीतिः पटीयसी चापि वर्णना शैली ।
रामचरित्रे गीता तुलसीदासेन साधुवर्येण ॥

[७५]

इदमार्यसभ्यताया गौरवतत्त्वानि दर्शयति ।
अन्धं जगदिदमखिलं ज्योतिस्तत्त्वेन भासयति ॥

[७६]

हानोपादानादिप्रदर्शने यन्निदर्शनं पुंसाम् ।
रावणरामचरित्रं सर्वत्रैवास्ति चर्चितं नूनम् ॥

[७७]

आस्तिक्यं जनतायामतिशयितं यत्प्रबोधयति ।
काव्यं तदेव काव्यमितराणि पुस्तकान्येव ॥

[७८]

आस्तिक्यबोधनं तन्निष्प्राणं तावदनुभवेन विना ।
चञ्चत्स्फुलिंगशून्ये काष्ठौघानां निवेश इव ॥

[७९]

अनुभवितुं प्रभुसेवामृतमसमं पर्यटत सोऽयम् ।
प्रायः कृत्स्ने देशे पद्भ्यां नैकत्र नैकधा पूर्णः ॥

[८०]

या व्याकुलता दृष्टा तुलसीवर्यस्य मानसे प्रभुं द्रष्टुम् ।
सैव समस्ते विश्वे विभुरूपं दर्शयामास ॥

[८१]

सैव च कारणभूता निखिलस्य ततस्थितस्य ज्ञानस्य ।
ज्ञाने सा निर्मलता कुत्राऽप्यन्यत्र नो दृष्टा ॥

[८२]

दार्शनिकसरणिरूढ़ा उपनिषदुद्यानवल्लीषु ।
गहनतराः सुविचाराः सारल्येनात्र लक्ष्यन्ते ॥

[८३]

सोऽयं कथाप्रवाहः संवादानां निकामभव्यत्वम् ।
तुलसीकाव्ये विमले नान्यत्रान्यत्र संदृष्टम् ॥

[८४]

वेदोदितसरणीनां गुम्फनमत्यन्तसरलतया ।
भागीरथीप्रवाहं न्यक्कुरुते यत्र तत्रापि ॥

[८५]

एतत्त्वनुभवशून्ये विज्ञाने नैव संभवति ।
चैतन्यामरसत्ता प्रत्यक्षं येन जायेत ॥

[८६]

अद्यत्वे बत लोके हिन्दुत्वं वैदिकत्वं वा ।
दार्शनिकत्वं सर्वं तुलसीदासादवाप्यन्ते ॥

[८७]

ये तु प्रचण्डमहिमा- मण्डितदिव्यप्रभावाश्च ।
विद्वांसो लोकेऽस्मि—न्नहर्निशं ते निमग्नाःस्युः ॥

[८८]

ये चाप्यविहितभावा अभावधारावृताऽखिलस्वान्ताः ।
आश्रयवसनविहीना—स्ते तुलसीवाचि मोदन्ते ॥

[८९]

नाना कथानकाद्यैः स्वरमाधुर्यैरुदारैश्च ।
भाषाभावधुराभिर्व्यासाः कथयन्ति मानसं रुचिरम् ॥

[९०]

भूषणनामा व्यासो यशसो वैपुल्यमत्राप ।
मानसकथा प्रवाहः प्रवाहितस्तेन विज्ञेन ॥

[९१]

विन्दुर्नाम्ना सिन्धु–र्गाम्भीर्ये वाक्प्रवाहे च ।
व्यासासने स्थितः सन् यशसा सर्वत्र दीप्यते विमलः ॥

[९२]

मानसराजमरालो विजयानन्दस्त्रिपाठिवर्योऽभूत् ।
तेन हि वाराणस्यां गाथा रामस्य सस्वरं गीता ॥

[९३]

व्यासाः सहस्रशोऽन्ये जाता जायन्त एवाद्य ।
लोके ख्यातिं विमलां लब्ध्वा कमलादृगञ्चले लग्नाः ॥

[९४]

लोकस्य सर्वबाधाप्रशमनसामर्थ्यपरिपूर्णम् ।
तुलसीवाक्यकदम्बं भेषजमसमं समुल्लसति ॥

[९५]

भारतस्वन्त्रताया अनन्तरं कविरयं महान् भूयः ।
विपुलं यशो वितानं विस्तारयति प्रकामरमणीयम् ॥

[९६]

लोकोत्तरकविगणना यदा यदा जायते रुचिरा ।
तुलसीदासः प्रथमस्तदा तदा नूनमाद्रियते ॥

[९७]

भारतराष्ट्रस्य शिरस्तथोन्नतं जायतेऽनेन ।
निखिलं तदिदं विश्वं ऋणीभवेदेव सन्देशैः ॥

[९८]

यावद्यावत्कालः संसरतेऽग्रे विकासमाप्तः सन् ।
तुलसीदासो नित्यं तत्रस्थो मार्गदर्शनं कुरुते ॥

[९९]

तस्मात्तुलसीदासं सर्वे मनसा स्मरन्ति विद्वांसः ।
श्रद्धाञ्जलिं समेता नित्यं वाचा प्रकल्पन्ते ॥

[१००]

वन्दामहे कविवरं मनसा नतिकोटिभिः सततम् ।
तद्दर्शिते च मार्गे संचारं वा चिकीर्षामः ।

[१०१]

इति तावत् श्री गिरधरशर्मचतुर्वेदतनुजन्मा ।
शिवदत्तचतुर्वेदस्तुलसीशतकं निवेदयति ॥

६२४+१०१=७२५

: ९ :

भारतेन्दु सर्गः

[१]

भारतभूषणभूतो भूमाभावं गतः कोऽपि ।
दिव्यहरिश्चन्द्रोऽसौ जयतितरां भारतेन्दुरिह ।।

[२]

मान्यानामपि मान्यो नित्यं प्रणयी वदान्यानाम् ।
यशसा धवलितविश्वो सारस्वत कोश इव दीप्तः ।।

[३]

अयमस्ति शेमुषीभिर्भरितः साहित्य - निर्माता ।
भामाशाहप्रतिमो वित्तेशानां नवोन्मेषः ।।

[४]

सर्वस्मिन्संसारे सुविस्तृताऽस्ते यदीयसत्कीर्तिः ।
तं सर्वगुणैर्वन्द्यं भारतचन्द्रं नमस्कुर्मः ।।

[५]

वाराणसी यदीये निवासकाले सुविख्याता ।
पुरा हरिश्चन्द्रकथां पुनरपि संस्मरति सत्यतां-याताम् ।।

[६]

हिन्दीभाषा नूनं यस्योत्साहैर्नवोन्मेषैः ।
साहित्यमानदण्डं नूतनमद्यापि धारयति ।।

[७]

काशीयं दृष्टवती सततमुदारैर्मनोभावैः ।
तस्य हरिश्चन्द्रस्य प्रखरतमां कार्यपरिपाटीम् ।।

[८]

नित्यनवैरुत्साहैः संवलितोऽभूद् हरिश्चन्द्रः ।
सारस्वतसेवायां सन्नद्धो जागरूकश्च ।।

[९]

एतादृशैः सुपुत्रैर्वसुन्धरा धन्यतां याता ।
नूतनमेकं युगमिव पुरस्कृतं भारतेन्दुना किमपि ॥

[१०]

यस्यावदातचित्तं युगे युगे नूतनं भाति ।
तं सारस्वतवैभवभरितं नित्यं नमस्कुर्मः ॥

[११]

नूतनमेकं युगमिव प्रादुर्भूतं तदीयरचनाभिः ।
साहित्यगगनमध्ये सत्यं चन्द्रो हरिश्चन्द्रः ॥

[१२]

मानेनोतन्नकायो सेवाकार्ये विगतमायः ।
सर्वस्वीकृतहिन्दीसेवासंसारसच्छायः ॥

[१३]

हिन्दीसेवागौरवमतुलं यो धारयामास ।
तं सारस्वतसुषमामण्डितरूपं जगन्नमते ॥

[१४]

यस्य प्रकृष्टभाषा सर्वं रोमाञ्चितं कुरुते ।
सहृदयहृदयस्पन्दनमसमं रेखाङ्कितं कुरुते ॥

[१५]

लेखनशैली काचित् समद्भुताङ्गीकृता तेन ।
व्यंग्यैस्तथा विनोदैर्वशीकृतः सर्वलोकोऽयम् ॥

[१६]

कालः कश्चन तादृश आसीद् देशस्य विपरीतः ।
सा देशभक्तिधाराऽत्यन्तं कठिना च कण्टकैः पूर्णा ॥

[१७]

राष्ट्रस्याहो भाग्यात् हृदये साम्राज्यमातन्वन् ।
विपरीतेऽप्यथ काले सोऽयं वीरः समुत्पन्नः ॥

[१८]

तस्मिन्क्रूरे काले आंग्लानां सर्वभावेन।
जड़ताप्रपूरितेऽप्यथ जागृत आसीत् हरिश्चन्द्रः॥

[१९]

दैन्यं न वा पलायनमभीष्टमासीद् वरेण्यस्य।
वैभवपूर्णा चासीत् काचित् तस्यैव परिपाटी॥

[२०]

संपूर्णमपि समाजं पूर्णसमुत्साहयोगेन।
गौरवपूर्णं स्थानं दापितवात् श्रीहरिश्चन्द्रः॥

[२१]

सर्वेषामाराध्या मंगलमूला च मातृभाषेयम्।
नित्यं नव नव भावैरापूर्णा वा कथं न स्यात्॥

[२२]

निजभाषोन्नतिरेवोन्नतिमूलं सर्वदेशस्य।
भाषाजननी मध्ये विभेदलेशोऽपि लोपितस्तेन॥

[२३]

सत्यशिवसुन्दराणां संगमभूतानि काव्यानि।
सहृदयहृदयविहारीण्यारचितानीति को न जानीते॥

[२४]

नव-रसमयभणितीनां नाना सत्प्रेरणाप्रसूतानाम्।
सागर इवाऽप्रमेयः सत्यमयं भारतेन्दुरेवाऽसीत्॥

[२५]

यैर्नकदाचिद् दृष्टस्तैरनुभूतः सदा निकटे।
असमं मित्रमिवास्ते भारतवर्षे हरिश्चन्द्रः॥

[२६]

निजभाषासेवार्थं समाजरक्षाविधानार्थम्।
प्रतिभाप्रभाप्रकृष्टं रचितं सन्मित्रमण्डलं तेन॥

[२७]

स्वीयं विपुलं तादृशमैश्वर्यं राष्ट्रसेवार्थम् ।
हिन्दीसेवाकार्ये निखिलं नूनं समर्पितं तेन ॥

[२८]

गरलं निपीय नूनं सुधावितरणं समाजमध्ये यत् ।
श्रीविश्वनाथचरितं तन्नूनं भारतेन्दुनाऽधिकृतम् ॥

[२९]

राष्ट्रस्वतन्त्रतायाः कृते यदान्दोलनं जातम् ।
तन्मूले ये पुरुषास्तेष्वसमोऽयं हरिश्चन्द्रः ॥

[३०]

देशस्य राष्ट्रभाषां गुणगणनमितां समृद्धिसंपूर्णाम् ।
नित्यनवीनोत्साहैरारचितां यः प्रपूजयामास ॥

[३१]

देशस्य मङ्गलानां संस्कर्ता जागरूकोऽयम् ।
संस्कारैरापूर्णः प्रियो वदान्यो हरिश्चन्द्रः ॥

[३२]

आंग्लानां गुणभागान् स्वीकृतवान् यः समुन्नतये ।
भाषापत्रप्रकटनकार्यं तूर्णं समारब्धम् ॥

[३३]

वाराणसीप्रकाशाद् दिव्यहरिश्चन्द्रचन्द्रिकामेकाम् ।
सत्पत्रिकां सुतामिव स्वीयां संवर्धयामास ॥

[३४]

पुनरपि भव्यं पत्रं स्वीयहरिश्चन्द्रमैगजीनाख्यम् ।
सम्यक् प्रकाश्य नूनं नव्यां धारां प्रवाहितवान् ॥

[३५]

एतादृशलोकोत्तरगुणप्रकर्षेषु संलग्नः ।
स्वल्पेऽप्यायुषि सम्यग् लोकोत्तरतां प्रसाधितवान् ॥

[३६]

सामाजिकसत्कार्येष्वसमोऽयं जागरूकः सन् ।
लेखनभाषणकार्यैरुत्साहं वर्धयामास ।।

[३७]

बलियानगरे भाषणमनेन यद्दत्तमद्यापि ।
तत्प्रेरणां प्रकुरुते पठितं पठितं पुनः - पुनः पठितम् ।।

[३८]

सर्वस्मिन्नपि देशे विद्वांसो लेखका नूनम् ।
ग्रन्थैर्महाप्रबन्धैर्गायन्त्येतस्य गुणगणान् भक्त्या ।।

[३९]

एतस्यैव निकामं हृद्यं तन्नाट्यसाहित्यम् ।
अभिनेतृणामभिनयकार्येष्वाधारतां यातम् ।।

[४०]

मुद्राराक्षसनाटकविरचनवेलासमुल्लसितः ।
दिव्यं विशाखदत्तं नूनमसौ धारयामास ।।

[४१]

शतशो मञ्चितमेतन्नाट्यं देशस्य मञ्चेषु ।
चाणक्यस्य सफलतां राष्ट्राधारां प्रकाशयति ।।

[४२]

यंग्यैरापूर्णं तन्नाटकमन्धेरनगरीति ।
दृष्टं यदैव नु तदा विनोदलहरीं प्रसारयति ।।

[४३]

अन्यन्नाटकमेकं भारतदेशस्य दुर्दशाख्यं यत् ।
तद् दृष्ट्वा च पठित्वाऽन्दोलितमेवास्ति सहृदयं हृदयम् ।।

[४४]

एवं विधचैतन्यैरापूर्णं नाट्यसाहित्यम् ।
श्रीभारतेन्दुहृदयं संसारे संप्रकाशयामास ।।

[४५]

छन्दोमयसंसारे विचरन् काव्यानि दिव्यानि ।
संरचयन् संसारं रसपरिपूर्णं सुसाधितवान् ॥

[४६]

प्राचीनं साहित्यं विचारयन् नव्यभावेषु ।
जनजनहृदयस्पन्दनशैलीमसमां प्रसाधितवान् ॥

[४७]

भक्तौ नवमाधुर्यं हासोल्लासो विनोदचातुर्यम् ।
नूतनतासौभाग्यं सर्वं श्रीभारतेन्दुलेखनी धत्ते ॥

[४८]

देशस्य विकासार्थं स्वतन्त्रताऽवाप्तये नित्यम् ।
नव नव भावेन्मेषं प्रकटीकुरुतेऽस्य लेखनी दिव्या ॥

[४९]

नानानिबन्धमाला सत्यं सत्प्रेरणापुञ्जा ।
विज्ञानोन्मेषाणां प्रभाप्रभावेण सन्दीप्ता ॥

[५०]

यात्रा विवरणवर्णनमेतेनैव प्रकाममादिष्टम् ।
साहित्य-सबलधारामग्रे नव्यां प्रवाहयामास ॥

[५१]

श्रीभारतेन्दुरसमः सेनानी सत्यसन्धोऽसौ ।
सर्वैर्विदां वरेण्यैः सम्पूज्यो माननीयश्च ॥

७२५+५१=७७६

श्री म०म० गिरिधरशर्म चतुर्वेदसर्गः

[१]

जयपुरनगरी धन्या नाना नववैभवैर्जुष्टा ।
श्रीमधुसूदनशिष्यो यात्राऽसीद् गिरिधरः शर्मा ॥

[२]

सर्वदिगन्तेष्वास्ते यशोवितानं निकाममदसीयम् ।
कमनीयनवकलेवरधर्ताऽसौ गिरधरः शर्मा ॥

[३]

अध्ययने संलग्नो विस्तारे चाऽथ संक्षेपे ।
शैली काले काले सर्वा यस्मै प्रसन्नाऽभूत् ॥

[४]

भागीरथ्यास्तीरे दिव्यहरद्वारनगरेऽथो ।
ऋषिकुलनाम्नीं संस्थां स्वीयाऽध्यक्ष्ये सनाथितवान् ॥

[५]

तत्रैव हरिद्वारे गुरुकुलसंस्था समारम्भे ।
शास्त्रार्थेषु समन्तादेकपदे ख्यातनामाऽभूत् ॥

[६]

'सोऽयं' 'सोऽयं' वादो यत्र गतस्तत्र चलतिस्म ।
देशे मान्यतमानां मान्यतमोऽयं सुसञ्जातः ॥

[७]

देशेऽस्मिन् विविधानां संस्कृतसंस्कृतिक्रियाकलापानाम् ।
संचालयिता नितरां विख्यातः सर्वजनतासु ॥

[८]

सर्वविधं संमानं सर्वस्मिन् भारते देशे ।
विख्यातिं च समग्रां सम्प्राप्तो गिरिधरः शर्मा ॥

[९]

सर्वोच्चशिखरसंस्थो ज्ञानाद्रीणां विधारकः सोयम् ।
सर्वोच्चतापसानां वन्द्योऽभूद्गिरिधरः शर्मा ॥

[१०]

नित्यतपस्यानिरतो गार्हस्थ्ये जीवने लग्नः ।
जगतीतलं सुवासितमथ कृतवान् गिरिधरः शर्मा ॥

[११]

वाणी यस्य मुखाब्जात् विगलितपीयूषधारेव ।
प्रवहति शास्त्राम्भोनिधिमन्थनसंभूतसारेव ॥

[१२]

यस्य विमलसन्मूर्तिर्मनुजैराराध्यतां गमिता ।
अवताराणां शोभां विपुलां विस्तारयामास ॥

[१३]

गम्भीर्ये पाण्डित्ये व्याख्याने लेखने निखिले ।
चरमां काष्ठामङ्गीकृतवान् यो गिरिधरः शर्मा ॥

[१४]

पत्राणां सम्पादनसंस्थासंस्थापनादिसत्कार्यैः ।
सामाजिकसंसेवां सम्यग् यः साधयामास ॥

[१५]

लाहौराख्ये नगरे पञ्चापस्य प्रधनतामाप्ते ।
दिव्यां सुषमां विकिरन् समा दशं यापयामास ॥

[१६]

वैदिकमर्मोद्घाटनवैदिकविज्ञानसत्प्रचारेषु ।
नो तस्यास्ते तुलना संसारेषु प्रदीप्तेषु ॥

[१७]

सर्वासां संस्थानामाह्वानेषु कृताऽग्रहः सततम् ।
दिव्यैः स्वैर्व्याख्यानैर्नेत्रोन्मीलनमथ कृतवान् ॥

[१८]

जनतायाः संमर्दस्तादृश आसीत्तु भाषणे यस्य ।
नेतारोऽपि च चकिता आसन् यत्स्वागतेषु विपुलेषु ॥

[१९]

यस्यां वा संस्थायां जयपुरनगरेऽथ संस्कृते पीठे ।
सम्यगधीतं तत्राऽध्यक्षपदं स्वीचकार परिपूर्णम् ॥

[२०]

विंशतिवर्षाणामाप्यवधिः स्वल्पो नु सञ्जातः ।
विद्यालयोऽपि सोऽयं संसारे विश्रुतो जातः ॥

[२१]

एकस्तथा च सोऽयं विश्वकविद्यालयोऽस्ति निजरूपे ।
परिपूर्णतमां ख्यातिं सर्वे देशे परां प्रापत् ॥

[२२]

सर्वेषां वेदानां ज्ञातारश्चाथ विद्वांसः ।
पाठनकर्मनियुक्ता वेदोद्घोषं निकाममुपचक्रुः ॥

[२३]

सर्वेषां शास्त्राणामध्यापकदिग्गजश्रेणी ।
कोलेजेऽस्मिन् जयपुरनगरस्थे सुप्रतिष्ठिता जाता ॥

[२४]

श्रीचन्द्रदत्तमैथिलवर्यो व्याकरणशास्त्र मूर्तिरिव ।
अध्यक्षचतुर्वेदस्यासीदपरस्त्वसौ प्राणः ॥

[२५]

दाधिमथश्रीमानथ सोऽपि कन्हैयाद्यलालान्तः ।
न्यायनये विख्यातो विराजते दर्शनप्रौढः ॥

[२६]

श्रीमान् भट्टवरेण्यो मथुरानाथः प्रणम्यसन्मूर्तिः ।
देशेऽस्मिन् विख्यातो मञ्जुकविःस प्रतिष्ठितश्चासीत् ॥

[२७]

आयुर्वेदमहोदधिमथने सन्मन्दरीभूतः ।
स्वामी लक्ष्मीरामः शोभां विस्तारयामास ॥

[२८]

सर्वस्मिन्नपि देशे संस्थानस्यास्य सा ख्यातिः ।
विस्तीर्णा संजाता छात्राः सर्वे समाजग्मुः ॥

[२९]

कालान्तरे च त इमे छात्रश्रेष्ठास्तु देशेऽस्मिन् ।
सर्वोच्चोच्चपदेष्वथ सत्प्रान्तेषु प्रतिष्ठिता जाताः ॥

[३०]

नाना संस्कृतनाटकसदभिनये ख्यातिरासीत् सा ।
जयपुरराज्यनरेन्द्रः स्वयं तथा मुग्ध एवाऽसीत् ॥

[३१]

उत्तररामचरित्रस्याभिनये दक्षतां दृष्ट्वा ।
छात्राणामाद्यत्वे नो दृष्टस्तादृशाभिनयः ॥

[३२]

भूयः पाण्डवविजये सन्नाटकसम्प्रयोगेऽत्र ।
सर्वा जनता मुग्धा जाता सद्यः प्रभावपरिपूर्णा ॥

[३३]

श्रीगिरिधरशर्माऽसौ सर्वत्राऽसीदुपस्थितः सततम् ।
समचालयत् समस्तां लोकोत्तरकार्यपद्धतिं स्वीयाम् ॥

[३४]

प्रतिवर्षमुपाधीनां वितरणसंरंभवेलासु ।
चकिता नागरिकास्तेऽधिकारिणश्चापि मोदमुपजग्मुः ॥

[३५]

श्रीमद्गिरिधरशर्मचतुर्वेदख्यातिकारणादपि वा ।
विद्यालयोऽपि सोऽयं देशे: सर्वत्र विस्तृतो जातः ॥

[३६]

श्रीमांस्तु चतुर्वेदो यत्राऽगात्तत्र चाध्यक्षः ।
संजातः सा संस्था सद्यो विख्यापिता जाता ॥

[३७]

संस्कृतरत्नाकर इति विख्यातं मासिकं पत्रम् ।
अध्ययनाऽवस्थायामेव प्राकाशितं चलितम् ॥

[३८]

लोकाऽनुरूपपाठ्यक्रमनिर्माणेऽपि सावधानोऽयम् ।
नव्यानां विषयाणां निवेशने जागरूक एवाऽसीत् ॥

[३९]

नानाऽन्दोलनकार्ये संचालकतामुपागतः सोऽयम् ।
धार्मिकविषयेष्वासीदघोषितो हृदयराष्ट्रपतिः ॥

[४०]

हिन्दूविश्वकविद्यालयनिर्मात्राऽथ मालवीयेन ।
साकं मैत्री गाढा संजाताऽसीत् तदीयैव ॥

[४१]

महामहोपाध्यायानां पञ्चकमासीत्तु जयपुरे नगरे ।
चरमस्त्वयमेवाऽसीद् गिरिधरशर्मा चतुर्वेदः ॥

[४२]

आर्यसनातनवैदिकधर्मरहस्यप्रकाशनायाऽयम् ।
पर्यटितसर्वदेशो धार्मिकभावान् सुपोषयामास ॥

[४३]

संस्कृतसाहित्योदधिनिर्मथनोत्थं च पीयूषम् ।
वितरितवान् संमोहनसिद्ध्या वाचां विलासनिर्झरिण्यैव ॥

[४४]

भूयश्च मनोमोहकलेखाद्यैश्चाथ काव्यधाराभिः ।
परिपूरितवानन्तःकरणं दिव्यं विदांवरेण्यानाम् ।।

[४५]

संस्कृतसाहित्याख्यस्य च सम्मेलनप्रकृष्टस्य ।
मन्त्रित्वं धारितवान् सुदीर्घकालाय सारथीभूत्वा ।।

[४६]

पुनरथ तस्यैवाध्यक्षत्वे वारत्रयं वृतः सोऽयम् ।
देशस्य सर्वभागे यात्राः सम्पादयामास ।।

[४७]

तद् ब्रह्मचारिनाम्ना हिन्दीभाषामयं पत्रम् ।
प्रत्येकस्मिन्मासे सम्पादितवान् सुदीर्घकालाय ।।

[४८]

संस्कृतहिन्दीमासिकपत्रद्वितयं च समकालम् ।
सम्पादितवान् शतशः कार्यकलापेषु लग्नोऽपि ।।

[४९]

एतस्यैव ख्यात्या न केवलं संस्कृतस्य कोलेजः ।
किन्तु नगरमप्येतद् भारतदेशे सुदन्ध्वनितम् ।।

[५०]

बहवस्तदीयभाषणसंमोहितान्तरङ्गपरितुष्टाः ।
मान्यास्तथा वदान्याः जयनगरं द्रष्टुमाजग्मुः ।।

[५१]

जयपुरनगरनरेन्द्रस्तुष्टस्तस्यास्य परमया ख्यात्या ।
संपूर्णं संमानं तस्मै संप्रकटयामास ।।

[५२]

देशस्यान्यनरेन्द्राः काले - काले समाहूय ।
श्रीगिरिधरशर्माणं धन्याः सन्तः सभाजयाञ्चक्रुः ।।

[५४]

केचन सद्व्याख्यानैरपरे ब्राह्मेण वर्चसाऽऽकृष्टाः।
केचन धार्मिकजीवनसच्चारित्र्यान्विता जाताः॥

[५५]

परमा काष्ठा दृष्टा विज्ञानानां तथा चरित्रस्य।
सर्वासां च कलानां वदान्यतायाश्च निखिलायाः॥

[५६]

तस्याऽऽराधनपुण्यं लोकोत्तरमेव समभवत्किमपि।
बहवो तपसा पूता आचार्याः कामयन्ते तम्॥

[५७]

मध्याह्नोत्तरसीमाऽऽह्निककर्मणि समुपविष्टस्य।
दिवसे नियता, रात्रौ तृतीययामोऽभवत् सीमा॥

[५८]

प्रीता देवगणा अपि सिद्धीः संवर्षयामासुः।
नो चेत् सा लोकोत्तरसीमा किं सेवते मनुजम्॥

[५९]

श्रीलक्ष्मीनाथा अथ शास्त्रिवरेण्याः पुराऽध्यक्षाः।
कोलेजस्य सुशिष्यांस्तान् सम्प्राप्यैव मोदयांचक्रुः॥

[६०]

श्रीजीवनाथमैथिलवर्या ज्ञानप्रभापुञ्जाः।
सर्वेषामपि गुरवः सविशेषं स्नेहयांचक्रुः॥

[६१]

विद्यावाचस्पतयो वैदिकविज्ञानमार्तण्डाः।
श्रीमधुसूदनमैथिलमहानुभावाः सुसेवितास्तेन॥

[६२]

माधवसिंहाख्यस्य तु जयपुरनगराधिराजस्य।
विद्वत्सभाप्रधाना मधुसूदनझामहोदया आसन्॥

[६३]

वाराणस्यां विद्याऽवाप्तौ विहितश्रमा एते ।
श्रीशिवकुमारशास्त्रिप्रवरेषु च्छात्रतां याताः ॥

[६४]

द्वादशवर्षाऽवधि ते तत्रैवाऽधीतवन्तोऽथ ।
निखिले शास्त्रगभीरे पाण्डित्ये द्योतिता आसन् ॥

[६५]

स्वामिदयानन्देन च सह सच्छास्त्रार्थवेलायाम् ।
वेदप्रौढिन्यूना सा काशी खेदमापन्ना ॥

[६६]

श्रीमधुसूदनवर्यं ते विद्वांसः प्रणोदयामासुः ।
वेदानामथ मनने पूर्णां शक्ति समाधातुम् ॥

[६६]

सोऽपि वचनपरतन्त्रो मधुसूदननामहाभागः ।
स्वीयं सर्वं कालं वेदेष्वेवाऽथ यापितवान् ॥

[६७]

तेन च विज्ञानानां पुरातनानां च नव्यानाम् ।
सर्वा विकासमाला वेदेष्वासादिता सम्यक् ॥

[६८]

ग्रन्थानां द्विशती सा रचिता तेनाऽथ सा दिव्या ।
मोहयति येयमद्याप्यासादितवैभवं चेतः ॥

[६९]

सा सर्वाऽपि च विद्या श्रीमधुसूदनमहोदयैरेभिः ।
गिरिधरशर्मचतुर्वेदप्रवरायाऽध्यापिता सम्यक् ॥

[७०]

स्फीतामथ तां सर्वां दिव्यां ज्योतिर्मयीं विद्याम् ।
अधिगत्य परां तृप्तिं समनुभवद् गिरिधरः शर्मा ॥

[७१]

चकिता सर्वा जनता तत्सर्वं श्रोतुमायाता ।
दीर्घे दीर्घतरेऽपि च काले नोद्वेगमुपयाता ॥

[७२]

जयपुरसंस्कृतकोलेजस्याप्ययं च गिरिधरः शर्मा ।
सर्वविधां परिपूर्णां सेवां कुर्वन् प्रसन्न एवाऽसीत् ॥

[७३]

छात्राणामुत्साहे सम्पूर्णां वृद्धिमुपयाते ।
काऽपि विशिष्टा वार्ता सर्वाऽसाधारणी दृष्टा ॥

[७४]

प्रतिपक्षं व्याख्यानप्रदानगोष्ठीषु सच्छात्राः ।
वाग्मित्वे सुप्रखरा निष्ठासंधारणे दक्षाः ॥

[७५]

एतस्मिन्नपि काले तत्राऽधीता विदांवर्याः ।
देशेऽस्मिन् शीर्षस्थं स्थानं धृत्वा सुशोभन्ते ॥

[७६]

श्रीगिरिधरसेवाया वाणीशोभाविवर्तसन्मूर्तिः ।
संस्कृतसरस्वती सा नितरां तुष्टा सदैत्राऽसीत् ॥

[७७]

सेवातो विश्रामग्रहणे सर्वा प्रतीक्षिता जनता ।
कोणे कोणे सर्वत्राऽऽहूतवती स्वीयधन्यताऽवाप्त्यै ॥

[७८]

तद् राजकीयसेवातो विश्रामो नवं जन्म ।
यात्रा नैरन्तर्ये व्याख्याने चाथ सञ्जातम् ॥

[७९]

अलवरनगरे संस्कृतकोलेजाऽध्यक्षतां प्राप्तः ।
राज्यस्य च तस्य पुनः प्रधानपण्डित इति प्रथितः ॥

[८०]

भूयः पञ्चनदस्थे लवपुरनगरे नवीनशोधानाम् ।
विद्यापीठस्थापनसञ्चालनयोजने द्युतिः प्रथिता ॥

[८१]

देशविभाजनकाण्डादनन्तरं दुःखितो भूत्वा ।
धर्मग्लानिं नितरां दूरीकर्तुं प्रयत्नवान् जातः ॥

[८२]

विश्वासां विद्यानामालयभूतस्य मालवीयानाम् ।
काश्यां विश्वकविद्यालयस्य सेवां तथा चक्रे ॥

[८३]

काश्यामध्ययनार्थं गमनं जातं वरेण्यानाम् ।
किन्तु श्रीमान् गिरधरशर्मा गतवांस्तु तत्र पाठयितुम् ॥

[८४]

शोधार्थं पठनार्थं गभीरतरशास्त्रसद्रहस्यानाम् ।
तत्रत्या विद्वांसः समागताः श्रीचतुर्विदां निकटे ॥

[८५]

तत्र च सम्मानसभामध्येऽसौ यावदेव सम्प्राप्तः ।
सर्वोच्चा विद्वांसोऽप्यभ्युत्थानेन पूजयाञ्चक्रुः ॥

[८६]

व्याख्यानेषु गुरूणां मधुसूदनझावरेण्यानाम् ।
लक्ष्मीनाथानामथ जीवाद्यानां च नाथानाम् ॥

[८७]

संस्मरणेषु नितान्तं रोमाञ्चैरञ्चितो भूत्वा ।
सर्वविधादर्शाणां पुञ्जीभूतेव सन्मूर्तिः ॥

[८८]

आस्तिकदिग्गजमेनं स्मृत्वा स्मृत्वा नरो धन्यः ।
विद्वत्ताऽपि तदीया विश्वं शिष्यं विभावयति ॥

[८९]

या सद्भाषणवर्षा भारतवर्षे कृता तेन ।
गहनतमं विज्ञानं सारल्येनैव बोधितं सर्वम् ॥

[९०]

वाणीतस्य पवित्रा सर्वविधं वैभवं दधती ।
कोटिजनाऽदृतमेनं दृष्ट्वा सद्यः प्रसन्नाऽभूत् ॥

[९१]

गीताप्रवचनकर्ता काश्यामाजीवनं योऽसौ ।
उपनिषदुक्तं तत्त्वं धन्यो मान्योऽथ बोधयामास ॥

[९२]

खण्डत्रितये सैषा गीताव्याख्यानमयमाला ।
संमुद्रिता नितान्तं विदुषां चेतः समाहरति ॥

[९३]

पञ्चाशत्सद्ग्रन्था हिन्दीसंस्कृतमया यस्य ।
सारस्वतं तदीयं वैभवमनुमापयन्त्येव ॥

[९४]

अद्याप्यनेकतायाममुद्रितो ग्रन्थराशिरयम् ।
मुद्रणभावं स्वीयं प्रतीक्षते सज्जनान् द्रष्टुम् ॥

[९५]

पत्रावली तदीया तं संबोध्यैव या प्रथिता ।
विदुषां नेतृणामपि तस्मिन् श्रद्धां प्रकाशयन्त्यास्ते ॥

[९६]

मित्राणां भक्तानां सत्पुरुषाणां तथाऽनुरोधेन ।
स्वीयं दिव्याचरितं हिन्दीग्रन्थे विलेखयामास ॥

[९७]

गिरिधरशर्मसदृक्षाः श्रीमन्तो ज्ञानसम्पूर्णाः ।
विद्वांसो लोकेऽस्मिन यदा कदैव प्रजायन्ते ॥

[९८]

अयमथ तेषां पुत्रः सर्वकनिष्ठः कथं तेषाम् ।
पितॄणां च गुरूणां चरितरहस्यं विजानीयात् ॥

[९९]

धन्यः कालो यस्मिन् लेखिन्या धन्यया नीतः ।
सिद्धचरित्रोन्मेषो लवमात्रेणापि धन्यतां नयति ॥

[१००]

श्रद्धाप्रणामधारा समर्पणेनैव सन्तोषः ।
केवलमसमत्सदृशैः कथमपि सम्प्राप्यतां नाम ॥

७७६ + १०० = ८७६

म० म० गोपीनाथकविराजसर्गः

[१]

श्रीमद्गोपीनाथं कविराजं राष्ट्रसद्वन्द्यम् ।
महामहोपाध्यायं विद्वन्मान्यं सदा वन्दे ॥

[२]

वङ्गे प्रादुर्भूतं जयपुरनगरे विहितविद्यम् ।
वाराणस्यामस्यां विहित तपस्यं सदा वन्दे ॥

[३]

संस्कृत-जगति तथैवागमतन्त्रेऽथ साधनाऽकाशे ।
भास्वन्तमेव पूर्णं शुभ्रयशोराशिराजितं वन्दे ॥

[४]

अस्मत्पितृसदृक्षाणामप्युपदेशपाण्डित्यम ।
वार्धवये बिभ्राणं गोपीनाथं सदा वन्दे ॥

[५]

वैदेशिकेऽपि विद्वत्संघे सर्वत्र संपूज्यम् ।
नाना भाषानिपुणं वन्दे सारस्वतं तेजः ॥

[६]

जंगमपुस्तकमन्दिरतामेकां साधु बिभ्राणम् ।
कण्ठेधारितविद्यावैभवमसमं विभास्वरं मन्ये ॥

[७]

आनन्दमयी निकटे सर्वां शिशुतां विधारयन्तं तम् ।
काश्यां विहितावासं बृहस्पतिं को न जानाति ॥

[८]

विश्वस्मिन् सर्वोच्चा संस्कृतसंस्था विराजते काश्याम् ।
तस्या अध्यक्षत्वं गोपीनाथः सनाथितवान् ॥

[९]

सेवावधिप्रपूर्तेरनेकवर्षात् प्रपूर्वमेव ननु ।
अवकाशग्रहणेन च व्यक्तीकृतमेव निःस्पृहं तेजः ॥

[१०]

भगवत्यपि सा देवी सरस्वती स्वीयवरदानैः ।
यशसा दीपितमेनं मनसा सम्यक् प्रसादयामास ॥

[११]

जयपुरनगरे यदिदं सुविशालं पुस्तकागारम् ।
तस्य समस्तग्रन्था वितीर्णतामापुरेतस्मै ॥

[१२]

संपूर्णे संसारे विद्वत्संघैः समादतः सततम् ।
यशसा धवलितविश्वः श्रीगोपीनाथकविराजः ॥

[१३]

प्राच्यप्रतीच्यविद्या - निष्णातेष्वाद्यगणनीयः ।
श्रद्धाभारविनम्रः श्रीगोपीनाथकविराजः ॥

[१४]

तादृशमनीषिवर्यस्य च दिव्या लोकयात्रेयम् ।
दिव्ये जीवनमार्गे संप्रेरयते मनीषिमूर्धन्यान् ॥

[१५]

तन्त्रशिखरमारुढं लोकान्तरगंचरणशीलम् ।
स्वामिविशुद्धानन्दं संसेवितवान् सुदृढभक्तियुतः ॥

[१६]

तान्त्रिकवाङ्मयमध्ये शाक्तां दृष्टि विवेचयन् सोऽयम् ।
भारतसंस्कृतिहृदये साधनमार्गं विलेखयामास ॥

[१७]

वेदान्तप्रमुखाणां दर्शनविश्रुतविचाराणाम् ।
मर्मोद्घाटननिपुणो नाना ग्रन्थान् समर्पयति ॥

[१८]

वाराणस्या विद्वत्परंपराप्राप्तमितिहासम् ।
गम्भीरान्वेषण सद्विधया नूनं प्रकाशयति ॥

[१९]

सरस्वतीभवनाख्ये पाण्डुलिपीनां महागारे ।
स्थित्वा पुरातनानां ग्रन्थानां सत्प्रकाशनं कुरुते ॥

[२०]

तत्तत्सद्ग्रन्थानां विभिन्नविषयान्वितानां च ।
प्राक्कथनेषु गभीरान् सिद्धान्तान् संविवेचयामास ॥

[२१]

विश्वविमोहकसुषमामण्डितवङ्गीयभाषासु ।
नाना साधकचित्रं नैकैर्ग्रन्थैर्बिरचयामास ॥

[२२]

बौद्धानां सिद्धान्तान् सूक्ष्मेक्षिकया निभालयन् निखिलान् ।
आचार्यनरेन्द्रदेवग्रन्थप्राक्कथनमण्डितानकरोत् ॥

[२३]

महामहोपाध्यायेत्याङ्गलसम्राट्समर्पितोपाधिम् ।
स्वीकृत्य सर्वविद्वत्संमान्यत्वं चिरात् प्राप्तः ॥

[२४]

स्वातन्त्र्यानन्तरमपि भारतराष्ट्रस्य राष्ट्रपतिः ।
संमानितवानेनं स्वतंत्रतादिवसमालक्ष्य ॥

[२५]

नव्यैरुपाधिभिर्वा सर्वसुसम्मानमारब्धम् ।
पद्मविभूषणनाम्नोपाधिं तत्रापि भूषयामास ॥

[२६]

आनन्दकाननेऽस्मिन् ज्ञानाख्यं यज्ञमातन्वन् ।
साधकनिजस्वरूपे निखिलं कालं समर्पयामास ॥

[२७]

सम्प्रार्थितोऽपि बहुधा न स्वीकृतवान् पदं कुलाधिपतेः ।
संस्कृतविश्वकविद्यालयमध्ये स्वात्ममार्गस्थः ॥

[२८]

तस्य च नित्यं सविधे देशविदेशस्थिताः सन्तः ।
नाना प्रश्नान् स्वीयानुत्तरदानाय संस्थितांश्चक्रुः ॥

[२९]

आध्यात्मिकीं सुदीप्तिं पुञ्जीभूतां स्वनेत्राभ्याम् ।
विकिरन्नमन्दैर्हास्यैर्लास्यमिव क्रीडयामास ॥

[३०]

संतोषितसद्विद्यः सारस्वतवैभवैर्हृद्यः ।
सर्वाऽविद्याकाराविनिर्गतः पूर्णतां यातः ॥

[३१]

सत्यशिवसुन्दराख्ये धामनि नित्यं सुविश्रान्तः ।
एतत्साधनमार्गेऽग्रेऽग्रे पर्याप्ततामागात् ॥

[३२]

सर्वत्रैव व्याप्तं मूलं तत्त्वं समन्विष्यन् ।
शक्तेर्विराट्स्वरूपं तन्त्रग्रन्थेषु दर्शयामास ॥

[३३]

कांचनवर्णो नित्यं सौम्याश्चितसर्वतः स्वान्तः ।
बालसुलभजिज्ञासांभरितो दृष्टः सदैव कविराजः ॥

[३४]

नाना भाषाभिज्ञो नाना साहित्यनिष्णातः ।
नाना विषयविलेखननिपुणः सौम्यत्वलालितश्चासीत् ॥

[३५]

सिद्धस्वभावपूजापूजितकायो विगतमायः ।
सिद्धैरभीष्टदायो सिद्धसमासेवितच्छायः ॥

[३६]

वाराणस्यामन्तिममहामहोपाध्यायतां यातः ।
सर्वेङ्गीकृतविषयेऽन्तिमभावं सर्वथा प्राप्तः ॥

[३७]

वादो जल्पस्तावत्कापि वितण्डा मता विज्ञैः ।
विदुषां त्रिधारया ननु वहते वैचारिकी गंगा ॥

[३८]

निर्भ्रान्ताः सिद्धान्ता व्याख्यायन्तेऽनुकूलसत्तर्कैः ।
यत्र विवेचननिपुणैर्वादोऽयं कथ्यते विनाऽऽयासम् ॥

[३९]

यत्र परस्परविमुखे विचारसंचारसाम्राज्ये ।
एकं स्वमनसि कृत्वाऽन्यखण्डनं जल्प एवासौ ॥

[४०]

यत्र तु खण्डनमात्रं लक्ष्यं स्यादभिनिविष्टानाम् ।
स्वीयाभिमताऽभावे सेयं सर्वा वितण्डा स्यात् ॥

[४१]

वादाऽख्ये शुभधामनि कापि तपस्या सदा साध्या ।
सिद्धान्तेषु भ्रान्तिर्नूनमियं दूरतः कार्या ॥

[४२]

महदध्ययनं चैतत्कर्मणि नियतं भवेत् सम्यक् ।
मानससाक्षात्कारः सिद्धान्तानां भवेदनिशम् ॥

[४३]

सोऽयं ऋषि शब्दार्थः साक्षात्कारावसायितादीप्तः ।
निखिलं जीवनमेतत्स्वल्पीभूतं भवेद्यत्र ॥

[४४]

अङ्गुलिगणनीया वा तादृशभावन्विता लोके ।
दृश्यन्ते ऋषिभावैरलंक्रियासंगताः पुरुषाः ॥

[४५]

श्रीमान् गोपीनाथो धन्यतमस्तेषु गणनीयः ।
वादे वादे येषां निर्मलभावेन जीवनं याति ॥

[४६]

सा पुण्यमयी धारा गोपीनाथप्रवाहिता जयति ।
नाना ज्ञानपिपासाऽकुलितान् या तर्पयति कामम् ॥

[४७]

शाक्तागम-तन्त्राणां दुरूहतायां समादिष्टा ।
गोपीनाथवरैण्यैस्सेयं हृदये समानीता ॥

[४८]

मौनमयैर्व्याख्यानैरपि येऽन्तःकरणसंशुद्धिम् ।
तन्वन्तिस्म नितान्तं ते गोपीनाथकविराजाः ॥

[४९]

17 मनसि च वचसि च काये परोपकारे नितान्तसंलग्नाः ।
वन्दितदिव्यचारित्रास्ते गोपीनाथकविराजाः ॥

[५०]

मन्त्राणामावर्तनमेतेषां सिद्धभावेषु ।
सत्प्रेरणां प्रसूते कृत्स्नस्यापीह विश्वस्य ॥

[५१]

अमृतोदधिस्वरूपां तेषां स्मृतिमात्मदेहस्थाम् ।
वन्दामहे नितान्तं नम्रतमैः स्वैर्मनोभावैः ॥

८७६+५१=९२७

: १२ :

कवि-शिरोमणिसर्गः

[१]

निकटे एवातीते जयपुरनगरेऽत्र कविशिरोमणिभिः।
श्रीमञ्जुनाथभट्टैः काव्यनिकुञ्जः समारचितः॥

[२]

यत्सौरभं समन्ताद् भूवलये तादृशं व्याप्तम्।
सहृदयमिलिन्दमाला तेनाऽसीत्सर्वदाऽऽकृष्टा॥

[३]

संस्कृतभाषानिर्मितकाव्यानां कीदृशी सुषमा।
अद्याप्यस्ति नितान्तं स्पृहणीयाऽऽलोक्यतां तत्र॥

[४]

अस्यां विंशशताब्द्यां संस्कृतकवितामये जगति।
श्रीमञ्जुनाथसदृशो नैवाऽसीद् वा भविष्यति वा॥

[५]

काचिदपूर्वा धारा काव्यनिकुञ्जे प्रवाहिता कविभिः।
मथुरानाथ-सुधीन्द्रैस्तया तु लोको वशंवदीभूतः॥

[६]

साहित्यवैभवाख्यं काव्यं नितरां मनोहारि।
संस्कृतकाव्याऽकाशे चान्द्रीं सुषमां समेधयति॥

[७]

नाना चत्वररचिता शोभा नन्दनवनं नूनम्।
सहृदयहृदये पुरतः प्रोद्घाटितमेव सर्वथा कुरुते॥

[८]

राजस्थानप्रान्ते उर्दूव्रजकाव्यधारायाम्।
कविता-वनिता नितरां विभूषिताऽङ्गी समुच्छलन्त्यासीत्॥

[९]

स्पर्धायामपि तस्यां संस्कृतकवितां निवेशयन् सम्यक् ।
सर्वोत्कृष्टे रूपे कविरयमाकारयामास ॥

[१०]

व्रजभाषाया आसीत्कविताक्षेत्रेषु साम्राज्यम् ।
हिन्दीभाषाकवितारूपे सैवात्र परिचिता जाता ॥

[११]

तस्यां घनाक्षरीतिच्छन्दो नितरां समुल्लसितम् ।
तद्वा 'कवित्त' संज्ञां धारयते वा प्रदीप्ततरम् ॥

[१२]

संस्कृतकाव्यक्षेत्रे वृत्तानामुज्ज्वला सरणि-
र्विख्याताऽसीन्नितरां नाना काव्येषु सा दृश्या ॥

[१३]

छन्दस्तत्त्वं तदिदं कवितासृष्टौ तथोच्चतरम् ।
यस्याकर्षणमसमं कविसहृदययोः समं स्फुरति ॥

[१४]

आदिकवेर्यत्प्रथमं लोके छन्दः समुच्छलितम् ।
आसीत्काचित्क्रान्तिर्यदा जगन्नूतनं जातम् ॥

[१५]

तदनु विचित्रैवासीन्नव्यानां छन्दसां सृष्टिः ।
निखिलं जगद्यावध्याप्यायितमेतया भवति ॥

[१६]

अस्मत् क्रान्तियुगेऽस्मिन् संस्कृतकविता जडीभूत्वा ।
स्वीये काये क्रान्तिं नव्यामेकां प्रतीक्षमाणासीत् ॥

[१७]

कविता-निकुञ्जरचनाचतुरैः श्रीकविशिरोमणिभिः ।
नव्यतरे परिवेशे कवितायां क्रान्तिरारचिता ॥

[१८]

संस्कृतमासिकपत्रं सम्पादितवन्त एवैते ।
वातावरणं रम्यं रचयामासुः समीहितं सम्यक् ॥

[१९]

सर्वविधैश्छन्दोभिर्हिन्दीउर्दूप्रसिद्धैस्तैः ।
संस्कृतकाव्यं नितरां रमणीयं गुम्फयामासुः ॥

[२०]

पिङ्गलशास्त्रे योऽसावास्ते छन्दोमयो निचयः ।
सर्वत्राऽपि समाना गतिरासीद् भट्टवर्याणाम् ॥

[२१]

कोमलकान्तपदावलिरेतेषां तादृशं सूते ।
संसारं चित्रतरं मनसि च धन्यत्वमायाति ॥

[२२]

साहित्यवैभवेऽस्मिन्विलक्षणे शब्दसंसारे ।
श्रीमञ्जुनाथसदृशः प्रजापतिर्वन्दनीयोऽस्ति ॥

[२३]

सर्वेऽप्यथ ते विषयाश्चिरन्तनैश्चर्चिताः काव्ये ।
सुन्दरतरपरिवेशे नव्यं जन्मैव धारयामासुः ॥

[२४]

जयपुरवैभवकाव्ये नव्या छन्दोमयी रचना ।
नूतनयुगमिव संस्कृतकाव्येषूल्लासयामास ॥

[२५]

कस्याप्यन्यस्याऽस्ते नगरस्यैतादृशं भाग्यम् ?
यत्स्यादीदृशरचनाचित्रैरमरत्वसाधने निपुणम् ॥

[२६]

अत्रत्या राजानो विद्वांसो वा कलाकाराः ।
स्थानान्यथ सा सुषमा प्राकृतिकी दर्शनीयाऽत्र ॥

[२७]

श्रीमञ्जुनाथरचिते गोविन्दे वैभवे काव्ये ।
भक्तिमयी नवसरणिः कं वा नोत्साहितं कुर्यात् ॥

[२८]

सर्वेष्वपि काव्येष्वास्वाद्या नव-छन्दसां धारा ।
नवता येषामास्ते संस्कृतसाहित्यसम्बन्धात् ॥

[२९]

काव्ये भाषाशक्तिर्या दृष्टा मञ्जुनाथेषु ।
संस्कृतकाव्योन्मेषे विरलतराऽस्तेऽद्य साऽन्यत्र ॥

[३०]

काव्योपस्थापनमथ रुचिसञ्चारेण परिपूर्णम् ।
नाना चित्रोल्लसितं नैवाऽन्यत्राथ दृष्टचरम् ॥

[३१]

सर्वोत्तमकाव्यनामपि यैषा दुर्दशा क्रियते ।
मुद्रणकाये सर्वा दुनोति नो कस्य सा चेतः ॥

[३२]

स्वीया टीका काव्ये कविवर्यैरेव तादृशी रचिता ।
सर्वं रहस्यजातं संकेतयतीव दृश्यते मधुरा ॥

[३३]

कादम्बरी च यासौ बाणस्याऽस्तेऽसमा संपत् ।
चषकाख्या टिप्पणिरपि तत्राऽस्ते भट्टवर्याणाम् ॥

[३४]

चन्द्रद्वयेन रचिता याऽस्ते टीकाऽथ तत्रत्या ।
दुष्पाठपांसुनिकरैस्तिमिरावृतमेतया काव्यम् ॥

[३५]

चषके तत्र परिष्कृतिरास्ते सैवाथ पाठानाम् ।
नाना व्यङ्ग्यार्थानां प्रकाशनं दीप्तिमातनुते ॥

[३६]

व्याख्याकारो न स्याद् यदि पूर्णः सावधानोऽत्र ।
दिव्यतमाऽपि तु रचनाऽन्यथैव सा प्रस्तुता भवति ।।

[३७]

तादृश-दोषोद्धारे कियती प्रतिभा श्रमश्चैव ।
योज्या भवति नितान्तं विलोक्यतां चषकटिप्पणौ सर्वम् ।।

[३८]

रसगंगाधरनामा पण्डितराजस्य सन्दर्भः ।
काव्यालोचनविषये निकषोपलतामुपागतः सम्यक् ।।

[३९]

व्याकरणशास्त्रदिग्गजवरश्रीनागेशभट्टेन ।
रसगंगाधरटीका मर्मप्रकाशाख्यया रचिता ।।

[४०]

तत्संपादनकार्ये संलग्नैर्भट्टवर्यैस्तु ।
काव्यालोचनकार्ये नागेशस्य स्खलद्गतिर्दृष्टा ।।

[४१]

तत्रापि टिप्पणी सा रचिता श्रीमञ्जुनाथैस्तु ।
नागेशस्य विचाराः सम्यग्रूपे परीक्षिता यत्र ।।

[४२]

आसीदेतद्वचने विदुषां कोलाहलो भूयान् ।
नागेशभट्टखण्डनमेतत्सह्यं कथं वा स्यात् ।।

[४३]

किन्तु विचारावसरे न कोऽपि "सिद्धो" भवत्यत्र ।
सहृदयतासाम्राज्ये सहृदयहृदयं प्रमाणं स्यात् ।।

[४४]

टिप्पण्यादिविलेखनकर्मणि सा मार्मिकी भाषा ।
लिखिता भट्टवरेण्यैः खेदं रोषं प्रकाशयति ।।

[४५]

एवं विधेषु विषयेष्वासीत्तेषां समाहिता दृष्टिः ।
शतशस्तत्रोद्धरणान्यासादयितुं सुशक्यानि ॥

[४६]

संस्कृतकथाविरचने निबन्धरचने च शोधकार्ये वा ।
श्रीमद्भट्टवरेण्या नितरां दीप्ता विलोक्यन्ते ॥

[४७]

संस्कृतगीतविरचनं तादृक्प्रारब्धमासीत् तैः ।
अद्य तु सर्वे कवयस्तस्मिन् मार्गे प्रयस्यन्ति ॥

[४८]

एवं श्रीमन्मथुरानाथबुधैः कापि तादृशी सरणिः ।
प्रारब्धा याऽद्यत्वे सकलं लोकं वशीकुरुते ॥

[४९]

किन्त्वद्यापि समस्तास्तेषां रचना न संगृहीता वा ।
पत्रेषु याः प्रकाशितपूर्वा अपि विस्मृता जाताः ॥

[५०]

सर्वासामपि तासां प्रकाशनेनैव सा तुष्टिः ।
सम्यक् समीहिता स्यादकादमी :तेन धन्यतां यातु ॥

[५१]

मान्यानामथ तेषां संस्कृतकाव्याब्जसूर्याणाम् ।
श्रीमञ्जुनाथशास्त्रिप्रवराणां संस्मृतौ प्रणताः ॥

९२७+५१=९७८

श्रीचन्द्रधरशर्मगुलेरिसर्गः

[१]

संस्कृतधुरन्धरत्वे हिन्दीसाहित्यनिष्णातान् ।
श्रीचन्द्रधरगुलेरी - महोदयान् को न जानाति ॥

[२]

एकैव कथा रचिता दिव्या 'उसने कहा थे' ति ।
दिव्यरचनया नूनं निखिलो लोको वंशवदो जातः ॥

[३]

हिन्दीज्ञाता मन्ये न कोऽपि मिलतीह तादृशो लोके ।
श्रीमद्गुलेरिवर्या येन तु नूनं न संश्रुता वा स्युः ॥

[४]

शतशो निबन्धरचनाकरणे शूराः समासंस्ते ।
अल्पीयस्येव वयसि तेषां कालः समाप्तिमगात् ॥

[५]

चत्वारिंशद्वर्षे वयसि विरामो हि जीवनस्याऽभूत् ।
देशे चाथ विदेशे पूर्णतमां ख्यातिमुपयाताः ॥

[६]

अजमेरस्थितमेयोकोलेजेऽध्यापयामासुः ।
राजानोऽपि समस्तास्तेषां शिष्यत्वमापन्नाः ॥

[७]

मेयोकोलेजोऽसौ केवलमेषां तु राजपुत्राणाम् ।
शिक्षायै निर्मित इति नासीदन्यस्य संप्रवेशोऽपि ॥

[८]

तत्राऽध्यापनकर्मणि ये चासन् संनियुक्ता वा ।
राज्ञामेव गुरुत्वं तेषामासीत्सुसम्पन्नम् ॥

[९]

नैके राजकुमारास्तेषां तत्रैव शिष्यतां याताः ।
किञ्चित्कालानन्तरमासंस्ते वै महाराजाः ॥

[१०]

श्रीजामनगरराज्ञस्तत्रासीत्पूर्णभक्तिः सा ।
यद्वशतस्ते काश्यां तद् हर्म्ये संस्थिताः आसन् ॥

[११]

जन्माऽजायत तेषां हिमालयस्थे गुलेरसंस्थाने ।
पर्वतभागः सोऽयं "कांगडा" नाम्ना प्रसिद्धोऽस्ति ॥

[१२]

ज्वालादेव्या दिव्यं स्थानं तत्राऽस्ति दीप्ततरम् ।
सिद्धिप्रदं मनोज्ञं मातुः कृपया परिव्याप्तम् ॥

[१३]

श्रीचन्द्रधरैराप्ता जयपुरनगरे समीहिता शिक्षा ।
राजस्थानशिरोमणिभूतं नगरं तथा चैतत् ॥

[१४]

महाराजाकोलेजेत्याख्यायामुच्च - संस्थायाम् ।
श्रीमद्गुलेरिवर्या एम०ए० पदवीविमण्डिता जाताः ॥

[१५]

श्रीमद्गिरिधरशर्माणोऽपि तदात्वे चतुर्वेदाः ।
मत्पितृचरणवर्या जयनगरेऽध्येतुमालग्नाः ॥

[१६]

श्रीमञ्जुनाथभट्टा अपि तत्कालेषु पठमानाः ।
विद्योत्तुङ्गश्रृंगा इमे मिथो मित्रतां जग्मुः ॥

[१७]

पारम्परिकी प्रौढिः प्राप्ता सर्वैरेतैर्महापुरुषैः ।
नव्याश्चाऽपि सरण्यो गुलेरिवर्यैर्निरूपिता निखिलाः ॥

[१८]

अध्यापयितुं त इमे गुलेरिवर्यास्त्वजयमेरुम् ।
गतवन्तः श्रीगिरिधरशर्माणो ऋषिकुलं प्राप्ताः ॥

[१९]

काले चाऽध्ययनमये नानालेखैः समर्चिता नितराम् ।
सा भारती मनोज्ञा समुन्नतिं या समादिशति ॥

[२०]

संस्कृतहिन्दी-मासिकपत्राण्यप्यारभन्तोऽमी ।
विद्वत्समाजमध्ये वैदुष्येणैव पूजिता जाताः ॥

[२१]

हिन्दीभाषायामथ नानाशैल्यो विकासमायाताः ।
मासिकपत्रकृपया धारा सैषा प्रवाहिता जाता ॥

[२२]

जयपुरतस्तु 'समालोचक' नाम्ना पत्रमेकं हि ।
हिन्दीभाषायामथ गुलेरिवर्य्यैः प्रकाशितं रुचिरम् ॥

[२३]

पत्रेणैवानेन च गुलेरिवर्यैर्निरूपितं निखिलम् ।
वाङ्मयरहस्यमुद्रारूपं विस्तारितं चैतत् ॥

[२४]

एतत्पत्रं तस्मिन्नतिशयमुद्रणसुदुर्लभे काले ।
नानाविषयान्दोलनरूपं निखिलं समालोक्यम् ॥

[२५]

हिन्दीपत्रेष्वासीत् 'सरस्वती' नामकस्य पत्रस्य ।
गौरवपूर्णं स्थानं द्विवेदिवर्यैः समारचितम् ॥

[२६]

कालोऽयं साहित्येतिहासमध्ये द्विवेदियुगम् ।
व्याख्यायते परस्तात्सर्वैरालोचकैर्नितराम् ॥

[२७]

जयपुरनगरात्प्रादुर्भूतस्यालोचकाख्यपत्रस्य ।
रम्यं रूपं दृष्ट्वाऽद्याप्यामोदः प्रजायते चित्ते ॥

[२८]

सा वीरता प्रशस्ता गुलेरिहृदये कृताऽस्पदा जाता ।
लेखा नानारूपाः प्रकाशयन्त्येव पाण्डित्यम् ॥

[२९]

संस्कृतसाहित्ये वा दर्शनविषयेषु वा नूनम् ।
प्राचीनपुरातत्त्वे गुलेरिवर्याः प्रकर्षमाजग्मुः ॥

[३०]

वात्स्यायनेन रचिते विख्याते कामसूत्रसद्ग्रन्थे ।
जयमङ्गलाथ टीका तत्कर्तुः परिचयो दत्तः ॥

[३१]

वैदिकगभीरविषयाणामपि तद् विहितं विचारेषु ।
सत्यसमालोचनमिति लेखास्तेऽस्माकमादर्शाः ॥

[३२]

श्रीकालिदासविषये भाषायां लेखरूपेण ।
प्राथम्येन सुविहितं विवेचनं वा मनो हरति ॥

[३३]

ज्योतिषविषयेऽगाधं ज्ञानं चासीद् गुलेरिवर्याणाम् ।
अष्टादशे तु वर्षे यन्त्रागारस्य पुस्तक रचितम् ॥

[३४]

नाना भाषाश्चाप्यथ संस्कृतहिन्दी तथा चाङ्गला ।
जर्मन-फ्रेंच-प्रमुखा प्राकृत-भाषास्तथा सिद्धाः ॥

[३५]

पञ्चनदीया भाषा तेषां वशवर्तिनी दृश्या ।
भाषा तु महाराष्ट्रा गुर्जर भाषाऽथ बङ्गदेशस्था ॥

[३६]

पाली विख्याता सा डिङ्गलभाषा समीहिता चासीद् ।
नैपुण्यं भाषाणां लोकोत्तरतां प्रकाशयति ॥

[३७]

संस्कृतभाषायामथ हिन्द्यामथ चाङ्गलभाषायाम् ।
पुस्तक-निबन्ध-कविता-कथा-विरचनेषु सिद्धास्ते ॥

[३८]

प्रौढोत्तुङ्गविचारानेतेषां सत्वरं ज्ञात्वा ।
देशे चाथ विदेशे मूर्धन्यास्ते प्रभाविता आसन् ॥

[३९]

मेयो कालेजोऽयं भारतवर्षे तदानीं वै ।
सर्वशिरोमणिभूता शिक्षाशाला विनिर्मिता विज्ञैः ॥

[४०]

तत्रैव संस्कृतस्याऽध्यक्षत्वं स्वीकृतं चासीत् ।
तत्र च निवासकाले वाग्देवी पूजिता सम्यक् ॥

[४१]

सर्वैश्वर्यसुशोभितवाग्देवीपुत्रतां प्राप्ताः ।
एते गुलेरिवर्याः समधिकतेजोमया जाताः ॥

[४२]

अजमेरनगरमेतद्यत्र तु विद्यालयो महानासीत् ।
राजस्थानप्रान्ते सुमेरुभूतं स्मरन्ति तत्रत्याः ॥

[४३]

शतशो निबन्धरचनाचातुर्यं सम्प्रदर्शयन्तोऽमी ।
नानासभासु मिलिता मोदितवन्तो विदां श्रेणीः

[४४]

हिन्दीभाषायामथ कथाविरचने प्रवृत्तास्ते ।
रमणीयभावनाभिः प्रोता गाथा व्यरीरचन्दिव्याः ॥

[४५]

जर्मनदेशे युद्धं प्रवृत्तमासीत् समस्तं च।
वातावरणं क्षुब्धं देशे सर्वत्र सैव गतिरासीत्॥

[४६]

भारतवर्षीया अपि वीराः सेनाप्रविष्टास्ते।
दूरे युद्धक्षेत्रे गत्वा शौर्यं प्रकाशयामासुः॥

[४७]

तत्सर्वं कथयन्तः कथाप्रवाहे निमग्नास्ते।
श्रीमद्गुलेरिवर्या रचयामासुः कथामेकाम्॥

[४८]

सेयं कथा तदानीं प्रकाशिताऽसीत् सरस्वतीपत्रे।
सर्वेषां लोकानां मनांसि सद्यो विलोडयामास॥

[४९]

मानसिकी रागात्मकवृत्तिर्योद्घाटिता जाता।
गाथायामेतस्यामग्रे वादः प्रवृत्तोऽसौ॥

[५०]

नव्यमनोविज्ञानं निवेशितं कल्पनालोके।
अद्यापि साऽस्ति चर्चा मर्मोद्घाटनपरेषु विज्ञेषु॥

[५१]

पञ्चनदभाषयाऽसौ विभूषिताऽसीत्कथा मधुरा।
स्थाने स्थाने, तेन च भिन्नो वादः प्रवर्तितः कश्चिद्॥

[५२]

'आंचलिकवाद' इत्यपि संज्ञाऽस्ते तस्य वादस्य।
शतशो रचना तस्मिन्नपि मार्गे नूनमायाताः॥

[५३]

'उसने कहा था' नाम्नी मनोरमा वाक्कथा सैषा।
सा मेघदूतसमतां प्रेरणामार्गे विधारयति॥

[५४]

नूतनयुद्धविवरणं कूटादिकसंप्रयोगो वा ।
लोकोत्तरनैपुण्येनास्यां सम्यङ् निरूपितं दिव्यम् ॥

[५५]

युद्धविवेचनदृश्यावल्यादिभिरेव सम्पूर्णम् ।
यत्साहित्यं निर्मितमेषा मूले स्थिता तत्र ॥

[५६]

शतशश्चारुनिबन्धा अद्यावधि ये बिरचिता विज्ञैः ।
यत्र त्वेषा रचना विवेचिताऽलोचिता जाता ॥

[५७]

आचार्यमहावीर-प्रसादनामा द्विवेदिवर्योऽपि ।
प्रोन्मुक्त-कण्ठविधया तामेतां शंसयामास ॥

[५८]

श्रीरामचन्द्रशुक्लो निरूपयामास तामेताम् ।
हिन्दीश्रेष्ठकथावलिमध्ये वा सर्वमूर्धन्याम् ।

[५९]

श्रीचन्द्रधरगुलेरीत्याख्या-हिन्दी-विचार-मञ्चेषु ।
ध्वनिता पूर्णैरादरभावैर्नूनं समाराध्या ॥

[६०]

प्रेमस्वरूपममलं कथाप्रवाहे प्रदर्शितं रम्यम् ।
किं मानवोऽभिकाङ्क्षति साधारं निश्छलं प्रेम ॥

[६१]

सोऽयं चरित्रगुम्फोत्कर्षो विहितो गुलेरिभिर्नूनम् ।
कश्चित् समाजपुरुषो सद्यो रूपायितो जातः ॥

[६२]

एकैवेयं रचना ख्यातेः काष्ठामथारूढा ।
लेखकवर्यस्यान्या रचना न स्मृतिपथं याता ॥

[६३]

तेनैवालोचकवरकथनं चैतद्विचारार्हम् ।
अपकारोऽयं विहितः कथयाऽप्यनया गुलेरिवर्याणाम् ॥

[६४]

इयमेव चर्च्यमाना लेखान् शुभ्रान् विलोपयामास ।
दिव्यतराणां येषां गणना प्राथम्यमाप्ता स्यात् ॥

[६५]

यद्यप्येषा वार्ता जनसामान्यकृते सह्या ।
किन्त्वालोचकवर्याः कथं सहन्ते दशामेताम् ॥

[६६]

एषा कथाऽस्ति धन्या गुलेरिरचनावलीमध्ये ।
मालायां खलु तस्यां मध्ये मणिरिव सुशोभिता सैषा ॥

[६७]

पाठ्यग्रन्थेष्वपि ये निबन्धभागाः समाविष्टाः ।
तेषामपि तु परिचयो कादाचित्कत्वभावमापन्नः ॥

[६८]

श्रीमद्गुलेरिणां या जन्मशती विद्यतेऽब्देऽस्मिन् ।
श्रीविद्याधरशर्मभिरेतस्मिन् बहु-परिश्रान्तम् ॥

[६९]

तेषां श्रमप्रयत्नैः सर्वासामेव रचनानाम् ।
प्रामाणिकसंकलनं संजातम् मुद्रिता सूचिः ॥

[७०]

शतशो नाना-ग्रन्थेष्वाऽस्ते चर्चा गुलेरिणामद्य ।
स्वीयैर्यशोभिरमलैस्ते नूनं सर्वसामान्याः ॥

[७१]

नानागोष्ठीचर्चा जाता रचनं गुलेरिणां यत्र ।
चर्चितमासीन्निखिलं लेखेष्वपि चात्र विविधेषु ॥

[७२]

नानालेखेषु च या छटाऽविरासीद् गुलेरिवर्याणाम् ।
धूर्तेषु ये प्रहारास्तेषामानन्द एवाऽन्यः ॥

[७३]

साहित्यमिदं दृष्ट्वा मनसि विचारः समायाति ।
देशोऽयमस्ति नितरां जडभावैरेव परिपूर्णः ॥

[७४]

नो चेदेवंविधवाग्विभवैः पूर्णस्य काव्यपुरुषस्य ।
रचनानामद्यावधि किमिति न सम्यक् प्रकाशनं जातम् ॥

[७५]

एकैक-वाक्यसंग्रहलग्नो विद्याधरो धन्यः ।
यत्कृपयाऽद्य शताब्दी-वर्षेऽस्मिंश्चर्चितं सर्वम् ॥

[७६]

सर्वेषामथ विदुषां संग्रहकार्ये समारूढा ।
श्रीमालवीयचरणा गुलेरिवर्यं कथं त्यजेयुर्वा ॥

[७७]

सर्वविधैरप्याग्रहनिवहैस्ते चन्द्रधरमेनम् ।
काश्यां संस्कृतविद्या-प्रबोधनायाथ योजयामासुः ॥

[७८]

त्यक्त्वाऽथाऽजयमेरुं काश्यामास्थाय चन्द्रधराः ।
नाना लेखनकार्ये समधिकसंलग्नतां समारूढाः ॥

[७९]

यत्रैव ते प्रयातास्तत्रैवासीत्समादरस्तेषाम् ।
तानादाय तु विदुषां संघः सेवापरो जातः ॥

[८०]

काश्यां सभा तथेयं विख्याता नागरीप्रचारिणी दिव्या ।
श्रीमद्गुलेरिवर्यास्तस्यां प्रामुख्यमातिष्ठन् ॥

[८१]

तत्रत्या सा चैका 'प्रचारिणी' पत्रिका ख्याता ।
श्रीचन्द्रधरास्तस्याः प्रमुखाः सम्पादका जाताः ॥

[८२]

त्रैमासिक्यां तस्यां प्रचारिणी-पत्रिकायां ते ।
भूयो लेखैर्नितरां युगं नवीनं प्रकटयामासुः ॥

[८३]

भाषाविज्ञानस्य च विषये तेषां विरचिता लेखाः ।
विज्ञानामपि हृदये नूत्नं संचारयामासुः ॥

[८४]

संस्कृतविद्वांसस्ते संस्कृतभाषारहस्यानाम् ।
ऐतिह्यविधेः पुरतो सत्यं नूनं गवेषयामासुः ॥

[८५]

हिन्दीभाषाया अप्यैतिह्ये तैस्तथा लिखितम् ।
आंग्लो ग्रियर्सनाख्यो विद्वान् भूयः प्रशंसयामास ॥

[८६]

संस्कृतभाषायामपि तेषां लेखाश्च काव्यानि ।
सततं पत्रेषु तदा काले काले प्रकाशितानि जातानि ॥

[८७]

हिन्दी भाषायामथ संस्कृतछन्दस्सु रचनायाम् ।
नैपुण्यं तैराप्तं पुस्तकमेकं प्रकाशितं तेषाम् ॥

[८८]

'हरिऔधकाव्यधारा संस्कृतवृत्तेषु हिन्द्यां सा ।
ख्याते 'प्रियप्रवासे' प्रकाशिता नूनमादृता विज्ञैः ॥

[८९]

श्रीचन्द्रधरगुलेरी कविरासीत्पूर्णरूपेण ।
छन्दो रचनायामपि मनोविनोदं प्रवर्तयामास ॥

[९०]

भाषाया रचनाया मार्मिकता तादृशी मन्ये ।
दूराद्दूरतरा सा संजाता नो विलोक्यतेऽन्यत्वे ।।

[९१]

सामाजिकरूढीनामुग्रं रूपं महारोगम् ।
संलक्ष्यौषधरूपाः कृता प्रहाराः प्रकर्षेण ।।

[९२]

"कछुआ धर्म" निबन्धे "मारेसि मोहीं" ति बन्धे च ।
तत्प्रस्तुता विचारा नूनं दिग्दर्शका जाताः ।।

[९३]

हिमगिरिसुषमा काचिद् व्यक्तित्वे प्रस्फुटीभूता ।
दृढतां कर्मसु निष्ठां प्रियतां सम्पोषयामास ।।

[९४]

विद्वद्वरेण्यनम्यां प्रबन्धशक्तिं प्रकाशयन्तोऽमी ।
का०हि०वि०वि० मध्ये संस्कृत-शिक्षां समुन्नयामासुः ।।

[९५]

विश्वस्मिन् विख्याता तेषां सा मित्रमण्डली दिव्या ।
श्यामः सुन्दरदासः शुक्लः श्रीरामचन्द्रोऽपि ।।

[९६]

श्रीमालवीयनिकटे दैनिकमासीद्विचारसंचरणम् ।
सम्मेलनानि सुबहून्यपि तैरायोजितानि तत्रैव ।।

[९७]

कार्यशताऽकुलभावः काश्यां शारीरसुखहारी ।
संजातो वा नूनं जलवायुप्रातिकूल्यं च ।।

[९८]

स्वल्पतरेऽप्यायुषि ते रोगाऽक्रान्ता अहो जाताः ।
साहित्यभाग्यदोषात्काश्यां ते पूर्णतां जग्मुः ।।

[९९]

अद्येयं तु शताब्दी तेषामेषां गुलेरिवर्याणाम्।
संस्मरणाय च महते कल्याणाय प्रवर्तिता जाता ॥

[१००]

सर्वा अपि तद्रचना सुन्दरतामण्डिता नूनम् ।
एकत्रैव गृहीता सद्यः सम्यक् प्रकाशमायान्तु ॥

९७८+१००=१०७८

सी० वी० रमणासर्गः

[१]

सी० वी० रमणं मन्ये भारतभाग्यस्य सत्कारम् ।
शुभ्रैर्यशोवितानैर्भूषितकायं विगतमायम् ॥

[२]

वैज्ञानिकसंसारे भारतवर्षस्य मस्तकं तेन ।
सर्वोन्नतं विदधता किं किं नासादितं तत्त्वम् ॥

[३]

नववैज्ञानिकविश्वे चूडामणितां दधानोऽसौ ।
सी० वी० रमणो देशे देशे सर्वत्र वन्दनीयोऽभूत ॥

[४]

श्रीचन्द्रशेखरोऽसौ वेंकटरमणः स्वजन्मसंसिद्ध्यै ।
प्रकृतिपरीक्षणविद्यासमर्पितः समभवन्नूनम् ॥

[५]

ऋषिरेवाऽयं कश्चित् साक्षात्कृतवान्स्वयं धर्मम् ।
रमणप्रभावसंज्ञा सञ्जाता तस्य धर्मस्य ।।

[६]

धर्माणि यानि प्रथमान्यासन्मन्त्रेषु कथितानि ।
यन्त्राधारेण पुनर्दर्शनमेषां हि विज्ञानम् ॥

[७]

एव साक्षात्कारे धर्माणां जायते काचित् ।
नव्याविष्काराणां विभूतिदीप्तिः परा लोके ॥

[८]

जनजनमध्ये तेषां लाभा ये वा वितीर्यन्ते ।
जीवनमेतन्निखिलं प्रपूर्तयेऽग्रेसरी भवति ॥

[९]

श्रीचन्द्रशेखरमहाशयेनाथ जीवने स्वीये ।
क्षणशः क्षणशः कृत्वा नूनं तप्तं तपो घोरम् ।।

[१०]

इदमेव तद् ऋषित्वं यस्मिन् सन्तप्यते तपो नित्यम् ।
तादृशतपसः फलमपि जनतासामर्थ्यवृद्धिर्हि ।।

[११]

केवलमेका लक्ष्ये दृष्टिस्तेषां वरेण्यानाम् ।
अन्यत्किञ्चित् सर्वं तेषां नास्त्येव नास्त्येव ।।

[१२]

सर्वे जनाः शयाना यस्यां तिष्ठन्ति सा रात्रिः ।
तेन परीक्षणकार्ये क्षणशः क्षणशोऽथ जाग्रता नीता ।।

[१३]

यद्यपि भारतवर्षे विज्ञानानां विभूतिरूपाणाम् ।
पूर्णः प्रकर्ष आसीज्जगद्गुरुत्वं तथाऽऽदिमे काले ।।

[१४]

योऽयं यज्ञः कश्चिज्जनकोऽभूत्सोऽथ विद्यानाम् ।
नूतनगवेषणानां तत्राऽऽजायत परा दीप्तिः ।।

[१५]

सिद्धान्ताऽऽविष्कारे प्रयोगशाला च यज्ञशालाऽऽसीत् ।
मन्त्राक्षरेषु सर्वा संगतिरासीत् प्रयोगाणाम् ।।

[१६]

विश्वामित्रमहर्षिर्नाना नव्य प्रयोगाणाम् ।
संस्कर्ता समजायत चकितोऽभूद्यत्र संसारः ।।

[१७]

सर्वाऽप्येषा सृष्टिर्ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्ता ।
विश्वामित्रेण पुनर्निर्मितिमार्गे समानीता ।।

[१८]

नो विश्वासं कुरुते लोकोऽद्यत्वे तु गाथासु ।
घोरतपश्चर्यायाः फले कथं श्रद्दधेल्लोकः ।।

[१९]

यद्यद्वा फलमासीत्तस्मिन् काले तु विद्यानाम् ।
जात्यादिभिर्विशिष्टैरधिकारस्तत्र तत्र कृतः ।।

[२०]

किन्त्वाश्चर्यमयाणां यन्त्राणामद्य सद्भावे ।
सर्वाऽप्येषा जनता फलैस्तु लाभान्विता जाता ।।

[२१]

जगदीशचन्द्रवसुना संसारे नूतनोन्मेषः ।
प्रादुर्भावित आसीद् वृक्षे चैतन्यसाधनारूपः ।।

[२२]

रामानुजमितिनाम्ना विख्यातेनाऽथ विद्वरेण्येन ।
गणितीये विज्ञाने प्रकाशशातः कृतो नव्यः ।।

[२३]

सी० वी० रमणेन तथा चमत्कृतो निखिलसंसारः ।
सूर्यकिरणविज्ञानं नूतनमाभाषता नूतनम् ।।

[२४]

नार्लीकरो नितान्तं निपुणः सापेक्षतावादे ।
आईन्स्टीनमहाशयसिद्धान्तं विशदयति नित्यम् ।।

[२५]

भाभामहोदयानां विज्ञानानां परा सम्पत् ।
पूर्णं जगन्नितान्तं विद्योतयते स्म नव्यया दीप्त्या ।।

[२६]

नव्याऽविष्काराणां विज्ञानेषु प्रदीप्तानाम् ।
या शीघ्रताऽस्ति सम्प्रति विस्मरणं जायते तत्र ।।

[२७]

एकोऽस्त्याविष्कारो यः केनापि कृतोऽद्यत्वे ।
अन्येन केनचित्त्वथ तत्खण्डनमपि कृतं तूर्णम् ॥

[२८]

इत्येवं नानाविधविज्ञानाविष्कृतीनां वा ।
नित्यं ताण्डवलीला विलोक्यते ज्ञानसाम्राज्ये ॥

[२९]

प्राचीनाः सिद्धान्ता नव्यैर्नित्यं विलोप्यन्ते ।
नव्यतमैरथ नित्यं ते नव्या अपि विलोप्यनन्ते ॥

[३०]

किन्तुरमणसिद्धान्तस्तथाविधो ह्यचलएवाऽऽस्ते ।
विज्ञानविश्वमध्ये सूर्याचन्द्रायितं तेन ॥

[३१]

प्रथमः प्रधानमन्त्री जवाहरो यः स्वदेशस्य ।
वारं वारं गत्वा रमणं वर्धापयामास ॥

[३२]

आविष्कारः सोऽयं विज्ञाने स्थायितत्त्वं तत् ।
संस्थापयिष्यति दृढ़ा रमणे बुद्धिः प्रतिष्ठिता ह्यासीत् ॥

[३३]

रमणाऽविष्कारस्य च तैस्तैर्याऽस्ति घोषिता संज्ञा ।
रमणप्रभाव इति या सर्वैर्वैज्ञानिकैर्नितराम् ॥

[३४]

निखिलेऽपि च भूवलये वैज्ञानिकमध्य एवेयम् ।
रमणप्रभावभाषा नितरां संमानिता जाता ॥

[३५]

संसारस्य श्रेष्ठो योऽसौ नोबुलपुरस्कारः ।
सोऽस्त्यादरान्निकामं प्राऽदीयत चन्द्रशेखरायाऽस्मै ॥

[३६]

शुभ्रपुरस्कारं तं सम्प्राप्याभाषमाणेन ।
स्वीयेऽस्मिन् सिद्धान्ते विज्ञानस्यायतिर्दृष्टा ॥

[३७]

आरोपण-संरोपणविकीर्णनादिप्रकाशकिरणानाम् ।
भूभौतिकं रसायनमित्येतत्सत्यमुपकुरुते ॥

[३८]

प्रायोगिकस्वरूपे सारल्यं चात्र सिद्धान्ते ।
स्पैक्टम तत्त्वाऽवाप्तौ सहजत्वं प्रेरणाभूमिः ॥

[३९]

यदवधि सिद्धान्तोऽयं परीक्षणान्निश्चितो जातः ।
तस्मात्कालात् सर्वे सारल्येन स्थिताः सन्तः ॥

[४०]

आचामन्ति तमेतं सिद्धान्तं ते गवेषकाः सर्वे ।
वैज्ञानिकाः प्रथमतस्तदुत्तरं वा गवेषणं तेषाम् ॥

[४१]

स्वीयोदात्तविचारप्रकटनवेलासु नित्यसंदीप्तः ।
सी० वी० रमणो जनताकल्याणे चेतनो ह्यासीत् ॥

[४२]

विज्ञानाऽविष्कारे विनाशरूपं यदेतदप्यास्ते ।
तत्प्रतिपक्षे स्वीयान्भावान्संयोजयामास ॥

[४३]

साधनगता सरलता सौकर्यं शक्तिशालित्वम् ।
प्रददाति तेन कार्येषून्नतिरासाद्यते काचित् ॥

[४४]

एकस्मिन्नपि कार्ये संजाते साधनाऽभावे ।
समयश्रमधननाशेनौदासीन्यं समायाति ॥

[४५]

यस्मिन् यस्मिन् काले साधनसम्पन्नता चाऽसीत् ।
इतिहासपृष्ठानां विभूतिरूपः स एव कालेऽभूत् ॥

[४६]

साधनसमर्पकाणामेतावान् विद्यते महिमा ।
पुरुषार्थानां काचिद् विलासलीला विलोक्यते तत्र ॥

[४७]

क्षणवत्संपूर्णोऽयं कालो यात्येव कार्यशीलानाम् ।
प्रकृतिपरीक्षणकार्ये लग्नानामात्मलीनानाम् ॥

[४८]

जीवनपद्धतिरेषामन्येषां प्रेरणाभूमिः ।
एकोऽपि महापुरुषो वा कोटिसमुद्धारको भवति ॥

[४९]

आयतिदीप्तिकरोऽसौ लोके सर्वत्र नन्दितो भवति ।
नैकानां च युगानामनन्तरं लभ्यते सुमहान् ॥

[५०]

श्रीचन्द्रशेखरोऽसौ वेंकटरमणस्तथाविधो जातः ।
येनादृता निकामं काचिल्लोकोत्तरा सरणिः ॥

[५१]

तस्यैतस्याद्यत्वे शुभ्रयशोभिः प्रदीप्तस्य ।
शतवार्षिकी नमस्या विधीयते काऽपि राष्ट्रेण ॥

[५२]

नेदं केवलमेकं पारम्परिकं कृतज्ञतामात्रम् ।
संमानोऽयं स्वीयस्यैव चरित्रस्य विज्ञेयः ॥

[५३]

सी० वी० रमणो नैकः सा संस्था कार्यशीलानाम् ।
काऽपि भविष्यत्सरणिर्देशे वैज्ञानिकानां सा ॥

[५४]

यद्यपि सर्वा शिक्षा बुद्ध्युत्कर्षप्रदायिका भवति ।
जीवनमुन्नेतुं किल काम्या विज्ञानशिक्षैव ।।

[५५]

रमणप्रभावनाम्ना नैकं तत्त्वं समुल्लसति ।
किन्त्वेकं परिशीलितमेतद्दर्शनमहो जातम् ।।

[५६]

पश्यन्तः शृण्वन्तः प्रकोष्ठमध्येऽखिलं विश्वम् ।
सर्वेऽपि जना धन्या जाता विज्ञानसामर्थ्यात् ।।

[५७]

लोकान्तरगतजीवनसंचाराणां गवेषणायां सा ।
काचिद्दीप्तिर्लब्धा पुष्टो येनाद्य संसारः ।।

[५८]

जीवनमध्येऽद्यत्वे न विद्यते तादृशी धारा ।
वैज्ञानिका वरेण्या यत्र गवेषणपराङ्मुखा वा स्युः ।।

[५९]

भारतवर्षे तावत्पुरातनादेव कालात्सा ।
सुप्रचलिता समासीत्काचिद्वैज्ञानिकी धारा ।।

[६०]

संसारे प्राचीने सुवाङ्मये चाथ वेदानाम् ।
सर्वपुरातनतेयं विख्याता सर्वसम्मता चाऽस्ते ।।

[६१]

वैदिकवाङ्मयमध्ये गवेषणायां प्रजातायाम् ।
विज्ञानस्यात्युच्चास्तत्र मिलन्त्येव सिद्धान्ताः ।।

] ६२]

ते चाऽपि तु सिद्धान्तास्तत्रैवाद्याथ दृष्टिपथगाः स्युः ।
नो तादृशयन्त्राणां विवरणमत्रोपलब्धं स्यात् ।।

[६३]

तेष्वेतेषु परीक्षणपरीपाटी संस्थितेषु वेदेषु ।
चकितचकितभावोऽसौ विलोक्यते निखिलसंसारः ॥

[६४]

ह्रासविकामविचारे पाश्चात्या ये तु विद्वांसः ।
ते सर्वदा विकासे विश्वासं साधयाञ्चक्रुः ॥

[६५]

संसारोऽयं विकसति नानारूपेषु दिव्येषु ।
पूर्वं यस्य तु नासीन्नामाप्यद्यैव तज्जातम् ॥

[६६]

पूर्वमभावो येषां ते नूनं भावतां याताः ।
नाना नवाः पदार्थाः सैषा सरणिः प्रजायतेऽग्रेऽपि ॥

[६७]

ये तावत्तु विचाराः पूर्वं नो दृष्टिपथयाताः ।
क्रमशस्तेऽथ विलासान् स्वीयान् सम्यक् प्रकाशयन्त्येव ॥

[६८]

इत्येतादृशधारा विकासवादाऽनुकारिणी भाषा ।
प्रवहतितरां नितान्तं पाश्चात्यैः सम्प्रवर्तिता नूनम् ॥

[६९]

भारतवर्षे तावत्पुरातनादेव कालात्सा ।
ह्रासाऽधारितधारा प्रवर्तिता वर्णिता चाऽस्ते ॥

[७०]

सत्ययुगे यद्विकसितरूपं दृष्टं चरित्राणाम् ।
त्रेतायां तन्नासीद् द्वापरकाले ततोऽपि तत्क्षीणम् ॥

[७१]

कलियुगकालेऽद्यत्वे ह्रासस्यैवाऽस्ति साम्राज्यम् ।
सर्वाऽप्युन्नतिधारा विलोपितैवाऽद्यकालेऽस्मिन् ॥

क्रमशः ह्रासः

[७२]

योऽयं विकासवादस्तस्मिन्नूनं प्रवृत्तिमुपयाति ।
कीदृश्यप्यभ्युन्नतिरेषा नो दर्शनाय प्राक् ।।

[७३]

या ह्रासवादधारा तस्यामङ्गीकृतायां तु ।
सर्वाप्यत्युच्चोच्चा समुन्नतिस्सा पुरैवाऽसीत् ।।

[७४]

तेनैव प्राचीने वेदे सरणिर्विचारणाम् ।
व्याख्यातॄणां भेदो महानयं दृश्यते तत्र ।।

[७५] [७६]

पाश्चात्यानां विदुषां विचारमध्ये तु वेदानाम् ।
केवलपुरातनत्वं महत्त्वमूलं न तत्र विज्ञानम् ।।

ते द्रष्टुं प्रयतन्ते प्रदर्शिते खण्डयन्ति तत्सर्वम् ।
मूले एव विरोधस्तस्मिन्काले विकासानाम् ।।

[७७]

या भारतीयसरणिस्तस्यां ह्रासोऽथ सर्वस्मिन् ।
आयतिकाले जातः सर्वादौ सा समुन्नतिः सर्वा ।।

[७८]

तेनैव वेदमध्ये सर्वं ज्ञानं तथा च विज्ञानम् ।
क्रमशोऽथ सर्वशो वा विलोक्यते सूत्ररूपेण ।।

[७९]

न केवलं सिद्धान्ता अपितूदाहरणविपुलत्वम् ।
नाना कथाप्रवाहे सहस्रशो वा निभाल्यते सर्वैः ।

[८०]

सिद्धान्तोदाहरणे तत्त्वे द्वे सत्यतायां वा ।
नूनं प्रमाणभूते लोपे कस्यापि जल्पनं तत्स्यात् ।।

[८१]

ये नूनं सिद्धान्ता कथिता वेदादिशास्त्रेषु ।
प्रायोगिकं स्वरूपं कथासु तेषां समुल्लसति ॥

[८२]

जाता एव युगेऽस्मिन्नाचार्याश्चाथ विद्वांसः ।
यैराविष्कृतमेतद्वेदेष्वेतेषु विज्ञानम् ॥

[८३]

सायणसरणिर्याऽसौ व्याख्यायाश्चास्ति वेदानाम् ।
यज्ञाधारितकाया सा सरणिर्विश्वरूपाऽस्ते ॥

[८४]

स्वामिदयानन्देन तु किमपि नवीनं पराक्रान्तम् ।
श्रीविद्यावाचस्पतिमधुसूदनदर्शितं नव्यम् ॥

[८५]

श्रीभारतीयतीर्थैः श्रीमद्भिः शंकराचार्यैः ।
गणिताख्यं विज्ञानं वेदे संसाधितं निखिलम् ॥

[८६]

स्वामिविशुद्धानन्दैः सन्दृष्टं सूर्यविज्ञानम् ।
प्रत्यक्षं सन्दर्शितमासील्लोकस्य विस्मयस्तत्र ॥

[८७]

एवमियं या सरणिर्भारतगौरवमुखेन संजाता ।
चकिना तयाऽथ नूनं वैज्ञानिकभूधराश्चाऽपि ॥

[८८]

सी० वी० रमणसदृक्षैर्गवेषकैरद्य तत्रापि ।
नव्ये गवेषणाया मार्गे गौरवमथाऽऽज्ञप्तम् ॥

[८९]

यद्यपि निखिलेऽप्यस्मिन् संसारे लक्षशो लग्नाः ।
वैज्ञानिका गवेषणमार्गे नव्याश्च विद्वांसः ॥

[९०]

सर्वेषामपि तेषां यन्त्राणां वा विशालानाम् ।
योगो भवति नितान्तं मानवजीवनसमुन्नयने ॥

[९१+९२]

सी० वी० रमणेन पुनर्ये सुविचाराः प्रकाशिता आसन् ।
वैज्ञानिकसरणीनां मार्गे नूनं प्रवर्तमानेभ्यः ॥

ते देशगौरवं वा नूनं संस्फोटयन्तोऽपि ।
कार्ये तत्र विशालां शालामुद्घाटयन्त्येव ॥

[९३]

यदि नाम नाऽभविष्यद्विज्ञानानां विलासोऽयम् ।
नूनं जाङ्गलिकत्वमास्थास्यन्मानवेषु सर्वेषु ॥

[९४]

विज्ञानमेव सर्वे देशे काले कलाविलासेषु ।
सर्वसमर्पकभावं स्वीकुरुते वा समुन्नतौ पूर्णम् ॥

[९५]

क्षुद्रात्क्षुद्रतरेऽप्यथ महतो वा महत्तरे क्षेत्रे ।
विज्ञानेन नितान्तं प्रकाशपातः कृतो दृष्टः ॥

[९६]

विज्ञानविनाभावे विज्ञानामपि निरर्थकता ।
संजाताऽसीत्काचिन्नैवाऽद्यत्वे तथा विद्या ॥

[९७]

अद्य तु तावत्सर्वा सुलभा पद्धतिरियं जाता ।
नो काठिन्यं गमने कुत्राऽप्याऽस्ते च कस्यापि ॥

[९८]

दूरेऽन्तरिक्षगमने दूरे देशान्तरे गमने ।
पुनरप्यथ चाऽगमने क्षणेषु यात्रा समाप्नोति ॥

[९९]

वाचां विलासकाले ध्वनियन्त्रेणाद्य यत्किञ्चित् ।
साहाय्यं संस्क्रियते वक्तुश्चाऽस्ते महांल्लाभः ॥

[१००]

सी० वी० रमणायात्र च श्रद्धा विश्वासपूर्णोऽयम् ।
काव्याञ्जलिः प्रदेयोऽस्माभिः सर्वात्मलाभार्थम् ॥

[१०१]

शिवदत्तचतुर्वेदस्य च काव्यमिदं रमणशतकाख्यम् ।
सी० वी० रमणमहोदयसंस्मृति रूपं मुदं देयात् ॥

१०७८ + १०१ = ११६९

: १५ :

श्रीराजेन्द्रप्रसादसर्गः

[१]

प्रथमं राष्ट्रपतिं तं भारतराष्ट्रस्य दिव्यरूपस्य ।
देशस्य रत्नरूपं श्रीराजेन्द्रं स्मरामोऽद्य ॥

[२]

सर्वपुरातनसंस्कृतिसम्पत्तेः सर्वरक्षार्थम् ।
आजीवनं य आसीत् नित्यं प्रहरीव जागरूकोऽसौ ॥

[३]

श्रीराजेन्द्रप्रसादो महात्मना गान्धिना स्वयं क्लृप्तः ।
सारल्यप्रतिमूर्तिर्महात्मनां वा स एवाऽसीत् ॥

[४]

यस्य च दिव्या मूर्तिर्नृत्यन्ती हृदयरंगमंचेषु ।
अद्याप्याकर्षयते देशप्रेमामृतैः सिक्तान् ॥

[५]

राष्ट्रीयप्रामुख्यं प्राप्तायाः कांग्रिसाख्यायाः ।
संस्थाया अध्यक्षः संजातो नैकवारं यः ॥

[६]

प्रथमः प्रधानमन्त्री श्रीमान् वीरो जवाहरः सत्यम् ।
येनाऽभिन्ने रूपे संदृष्टो लोकसेवार्थम् ॥

[७]

लौहमयोऽयं पुरुषो वल्लभभाईपटेलाख्यः ।
यन्मित्रत्वं धृत्वा सर्वं कार्यं सुचालितवान् ॥

[८]

देशस्य नेतृवर्गः सर्वो यं केन्द्रमास्थाय ।
संस्फूर्तौ प्रावर्तत नवनिर्माणे परं लग्नः ॥

[९]

आसेतुहिमाचलमथ कटकादटकप्रदेशपर्यन्तम् ।
भूभागस्य विशालस्यासीत् प्रथमः सुराष्ट्रपतिः ॥

[१०]

श्रूयन्ते चाणक्यादिभिरतिपुष्टास्तु चन्द्रगुप्ताद्याः ।
द्वित्राः सम्राजो वा यैः सद्-देशोऽयमेकतां नीतः ॥

[११]

सा सर्वाऽपि नु वार्ता जाता तावत्सुपृष्ठेषु ।
इतिहासानां लिखिता दूरतरः परिचयस्तैर्वा ॥

[१२]

श्रीराजेन्द्रस्तु पुनः प्रत्यक्षतयाऽस्य भूमिवलयस्य ।
पुण्यश्लोको दृष्टः शासकचूडामणिर्नितराम् ॥

[१३]

श्रीमद्राजेन्द्राणां जीवनमासीत्तु कर्ममयम् ।
गीताकथा तदीये चारित्र्ये गुम्फितेवासीत् ॥

[१४]

भारतमूर्तिरथासौ नम्रत्वे तादृशीं शक्तिम् ।
स्वीकृतवान् सन्दीप्तो विश्वं निखिलं विमोहयामास ॥

[१५]

तत्तादृशस्वरूपं संप्राप्यासीत्पदं तु राष्ट्रपतेः ।
सौभाग्याञ्चितविभवं वन्दितविद्यं यशोवलितम् ॥

[१६]

मातापितरौ धन्यौ धन्यो देष्टा च नामकरणस्य ।
राजेन्द्रेऽस्मिन्नाम्न्येवागच्छति सर्वराष्ट्रसर्वस्वम् ॥

[१७]

आबाल्याद्राजेन्द्रः सद्गुणसंघातवन्दितो नितराम् ।
भातिस्म कान्तमणिरिव धूलीपटलैः समाच्छन्नः ॥

[१८]

विश्विशास्त्रीयपरीक्षाप्राथम्येनाऽथ संघुष्टः ।
विद्योत्तमैर्विलसितो भातितरां वंगदेशेषु ॥

[१९]

छात्राऽवस्थायामथ पूर्णां संसिद्धिमाश्रित्य ।
सुतरामेव विनम्रो जातः कार्येषु निपुणश्च ॥

[२०]

राष्ट्रस्य हृदयसम्राट् गांधी तावत् समादिदेश यं यद्यत् ।
तत्तत्सर्वैः शिरसा विहितं प्राणान् पणीकृत्य ॥

[२१]

तेषु प्रथमं स्थानं यस्यासीत्कर्मपुरुषस्य ।
तस्यैव नाम तदिदं 'श्रीराजेन्द्रप्रसाद' इति ॥

[२२]

सम्पूर्णोऽयं देशो यन्नाम्ना ध्वन्यते स्म कालेऽस्मिन् ।
श्रीराजेन्द्रप्रसादस्तेष्वासीन्मूर्ध्नि संस्थितो नित्यम् ॥

[२३]

दिव्यतमाचरितानां गाथावलिरद्य तस्यैव ।
सत्प्रेरणां प्रसूते सर्वं चौजः समाह्वयते ॥

[२४]

आंग्लैः पुरुषैः सार्धं विस्मापित-सर्वलोकसंग्रामे ।
सत्याहिंसाशस्त्रे धारादानं कृतं तेन ॥

[२५]

कारावासतपस्या महीयसी दुर्बले देहे ।
सोढा तेन नितान्तं लौहमयं रूपमास्थाय ॥

[२६]

सम्पूर्णोऽपि बिहारः कोटिजनैर्मण्डितो नूनम् ।
स्वातन्त्र्ये संग्रामे राजेन्द्राज्ञां प्रतीक्षते नित्यम् ॥

[२७]

तदनु समस्तो देशो राजेन्द्रस्यानुचरभावमापन्नः।
धन्यं मनुते निखिलं शुभ्रतरं रूपमात्मीयम्॥

[२८]

तेनैवात्मकथायां श्रीराजेन्द्रेण पुस्तिकायां स्वम्।
जीवनदर्शनमसमं घटनावल्यामुपन्यस्तम्॥

[२९]

आत्मचरित्रविलेखनपरिपाटीयं तथाऽद्य विस्तीर्णा।
प्रेरयति सर्वहृदयान् सच्चारित्र्यस्य धारणां कर्तुम्॥

[३०]

गान्धिमहात्मभिरपि सा स्वीयमहज्जीवनस्य संगाथा।
लोकस्य शिक्षणार्थं गौरवपूर्णा समारचिता॥

[३१]

सोऽपि च महान् जवाहरलालो लिखति पुस्तकं तादृक्।
स्वात्मचरित्ररहस्यप्रकाशनं यत् समीरयते॥

[३२]

शतशश्चान्यैरेषा स्वात्मकथा सत्यमालिखिता।
येन चरित्रोद्याने कुसुमानीमानि शोभन्ते॥

[३३]

एतैरात्मवबोभिः काऽपि नवीना स्फुरति धारा।
या प्रेरणां प्रसूते तथाविधं जीवनं धर्तुम्॥

[३४]

देशस्य कर्मरूपं यदा यदा नाशितं भवति।
दैन्यदरिद्रावास्थाऽऽगच्छति नामन्त्रिताऽपि सती॥

[३५]

कर्मणि चरित्रधारा विच्छिन्नेवावलोक्यते यदा नूनम्।
गीतोपदेशवेला तदा तदैवाऽत्र जायते महती॥

[३६]

आधुनिके कालेऽस्मिन् गीतामार्गे समुपलब्धाः ।
आत्मचरित्रग्रन्थाः पठनीयाः स्युः प्रयत्नशतैः ॥

[३७]

तेषु श्रीराजेन्द्रप्रसादलिखितं तदात्ममयचरितम् ।
सत्साहित्योल्लासे प्राथम्येनैव गणनीयम् ॥

[३८]

मौनप्रायः सर्वामपि कर्ममयीं कष्टसम्पूर्णाम् ।
राष्ट्रोपकारधारां सम्यगसौ चालयामास ॥

[३९]

कृषिसिद्धोऽयं देशः कृषिकर्मणि जागरूकश्च ।
कृषका एवाऽत्र सतां जीवनमात्रं सुरक्षितं कुर्युः ॥

[४०]

श्रीराजेन्द्रप्रसादः कृषकश्चासीत् परम्पराप्राप्तः ।
तेनैव तस्य हृदये भूमिः सततं समुच्छलन्त्यासीत् ॥

[४१]

भूमेराकर्षणमिदमतिशयितां संस्कृतिं सूते ।
भूमिष्ठानथ सर्वान् गुणांश्चरित्रे विकासयति ॥

[४२]

देशस्यास्य महीयो रूपं यद्वा जगद्विदितम् ।
लोकोत्तरगुणलास्यम् तत्राऽस्ते चैकमेव सद्धेतुः ॥

[४३]

ऋषिशब्द आर्यशब्दस्तासां सद्गुणविलासभूमीनाम् ।
संधारकेषु दृष्टः पूर्णं संश्लेषमापन्नः ॥

[४४]

नव्यतमा ये ऋषयस्ते नूनं स्वैर्गुणैर्नित्यम् ।
जनतया हृन्मन्दिरमध्ये नीराजिताः सन्ति ।

[४५]

चरमां चुम्बति काष्ठां संस्कृतसाहित्यसत्प्रेम ॥
श्रीराजेन्द्रप्रसादे तेन च तुष्टिस्तदीयाऽसीत् ॥

[४६]

देशेऽस्मिन्नेतारस्तदैव नूनं प्रतिष्ठिता जाताः ।
संस्कृतश्रद्धाभरिता विज्ञा नूनं यदा जाताः ॥

[४७]

श्रीमाँस्तिलको गान्धी ब्रह्मर्षिर्मालवीयो वा ।
श्रीराजेन्द्र—जवाहर — राधाकृष्णन् — प्रभृतयस्ते ॥

[४८]

संस्कृतभाषैव सदा सच्चारित्र्यं निपाययति ।
नेतृत्वस्याथ गुणान् दीप्ते कर्मणि विलासयति ॥

[४९]

संस्कृतविदुषां यदिदं केन्द्रारब्धं सुसम्मानम् ।
श्रीराजेन्द्रप्रसादो राष्ट्रपतिस्तत्र कारणीभूतः ॥

[५०]

अम्भसि नलिनीपत्रं दिव्यं संशोभते यथा नित्यम् ।
शासनकर्मणि लग्नो राजेन्द्रः शोभते स्म तथा ॥

[५१]

तज्जनकस्य चरित्रं मिथिलाधीशस्य विख्यातम् ।
पुनरपि दर्शितविभवं श्रीराजेन्द्रे विलोकितं सर्वैः ॥

[५२]

अस्तिकताममर्मज्ञः सत्याहिंसापदेषु संलग्नः ।
नित्यं पूज्यचरित्रः श्रीराजेन्द्रो विभाति स्म ॥

[५३]

श्रीराजेन्द्रस्येयं जन्मशती स्मर्यते विदां वर्यैः ।
दिव्योत्तमस्य तस्य स्मरणं मंगलमयं भूयात् ॥

११७९+५३=१२३२

: १६ :

कार्लमार्क्ससर्गः

[१]

स जयति कार्लो मार्क्सः पीडितजनबन्धुतामाप्तः ।
श्रमधनतत्त्वविवेचनपाण्डित्यं यज्जगद्विदितम् ॥

[२]

विपुलतमाध्ययनानां संसारे सञ्चरन् योऽयम् ।
वैचारिकविश्वस्मिन् नूत्नां धारां प्रवाहितवान् ॥

[३]

शोषितजनताहृदयस्पन्दनमन्दाकिनीस्नातः ।
कार्लो मार्क्सः श्वासान् सर्वान् तस्यै समर्पयामास ॥

[४]

दर्शनगतविषयाणां सर्वेषां मूलमन्विष्यन् ।
प्रामाणिकसद्ग्रन्थान् सर्वान् सोऽयं विलोडयामास ॥

[५]

सामाजिकसंरचनाविभागमध्ये स्वयं पतितः ।
निखिलोद्योतितविश्वः साम्यं वादं विवेचयामास ॥

[६]

गरलाभैस्तैः श्वानैः कदर्थनायां प्रजातायाम् ।
भीतामिव मानवतामभयाऽरण्ये निवेशयामास ॥

[७]

गगने विहरणशीला दार्शनिकाः सुप्रसिद्धास्ते ।
मार्क्सस्य दर्शनेनोन्मथितस्वान्तास्तथा जाताः ॥

[८]

यन्त्राणामाधारे प्राभून्नवसभ्यतोन्मेषः ।
तेनानेनैवैको शोषकवर्गः समुन्नीतः ॥

[९]

कोटिप्रमितजनानां सुस्वास्थ्यं धूलिसात्कृत्वा ।
तेषां श्रमेण सुखमयराज्यं भुङ्क्तेऽथ तादृशो वर्गः ॥

[१०]

कोट्यर्बुदेषु मुद्रा यत्पार्श्वे राजते सततम् ।
तच्छक्त्या वर्गोऽयं निष्किञ्चनजनशोषणे लग्नः ॥

[११]

विपुला सेयं मुद्रा श्रमिकाणां सत्परिश्रमेणैव ।
एकत्रिता निकामं ते तु पुनर्वञ्चिता एव ॥

[१२]

श्रमिकाणां पार्थक्ये विचारमात्राद्यभावे वा ।
शोषकवर्गस्येयं माया सर्वा समुच्छलति ॥

[१३]

तेषां खलु सौभाग्याज्जर्मनदेशे समुद्भूतम् ।
संसारे दलितानां जीवनसंदायकं ज्योतिः ॥

[१४]

वैचारिकसंघर्षोन्माथे देशस्य तस्यैव ।
ये शासकाः समास्ते मार्क्सात् संप्रकम्पिता जाताः ॥

[१५]

निर्वासनमथ विहितं जर्मनदेशात्तु मार्क्सस्य ।
लन्दननगरे स्थित्वा मार्क्सोऽध्ययनं प्रवर्तयामास ॥

[१६]

एंगेल्सं मित्रवरं भाग्यान्नूनं समालम्ब्य ।
श्रमिकाणां जागरणे मार्क्सो धारां प्रवाहितवान् ॥

[१७]

सर्वस्मिन् संसारे भूकम्पं किमपि तादृशं तन्वन् ।
संप्रस्तुतं स्वकीयं श्रमिकाणां किमपि घोषणापत्रम् ॥

[१८]

शतशः सहस्रशो वा लेखान् सम्यग् विचरयन् सोऽयम् ।
संसारधारणायामुत्तेकजकतां समादध्यौ ॥

[१९]

संसारस्य समस्ताः श्रमिका एकीभवन्तु चाऽयान्तु ।
एकीभावे भवतां श्रेयोलाभोऽस्ति सर्वेषाम् ॥

[२०]

श्रमिका एव नितान्तं सर्वोन्नततां भजन्तो वै ।
स्वर्गस्थमपि समस्तमैश्वर्यं करगतं कुर्युः ॥

[२१]

अर्थाधारित – दर्शन – दान – प्रोन्नमित – संकायः ।
संसारं विस्रब्धं कृतवान् मार्क्सो निकामनम्रः सन् ॥

[२२]

नानाविध – कष्टानां स्वीकारेष्वस्ति यादृशी तृप्तिः ।
सा सर्वाप्यनुभूता कार्लेन तु वैपरीत्येषु ॥

[२३]

यदि नाऽभवदेंगिल्सः मार्क्सो मार्क्सः कथं भूयात् ।
सन्मित्रलक्षणं यत्तत्तस्मिन्नस्ति चरितार्थम् ॥

[२४]

मार्क्से प्रविष्टमात्रे विचारधाराप्रवाहेषु ।
भूकम्पः समजायत सर्वेष्वप्यसुरभावेषु ॥

[२५]

नाना नियन्त्रणानामासीत्सा काऽपि परिपाटी ।
निगडितवाचो यस्यां सर्वामाशां समापयन्त्येव ॥

[२६]

किन्तु स कार्लो मार्क्सो विपरीतायां परिस्थितौ तादृक् ।
वैचारिकमन्थनमथ सम्यक् कृतवान् सुबोधार्थम् ॥

[२७]

इतिहासानां मननं स्वीकृतवानात्मबोधार्थम् ।
संसारदेशसंस्कृतिसमधिकसाहसभरैर्नितराम् ॥

[२८]

सामाजिकार्थिकविपद्वैरूप्येषु प्रजागरूकेषु ।
ये शान्ति मन्वानास्तेषामालोचनां चक्रे ॥

[२९]

हीगलकाण्टप्रभृतिभिरत्यादिष्टे हि दर्शने सम्यक् ।
मननं विधाय तेषां नितरां सम्पूर्तिमातेने ॥

[३०]

लन्दननगरे निवसन् पुस्तकमन्दिरमथापि सत्कुर्वन् ।
नाना लेखान् विलिखन् विचारसारान् पुरश्चक्रे ॥

[३१]

सा च तदीया दयिता कष्टानां संघबद्धानाम् ।
मध्येऽधिकं समृद्धा सेवां चक्रे सुनिपुणस्य ॥

[३२]

अर्थाभावस्यासीत्प्रत्यक्षाऽनुभव एतादृक् ।
सम्यक् परिचरणनामभावभावे मृता हि तत्पुत्री ॥

[३३]

मूर्धन्या ये मान्या जगति विचारान्समर्पयन्तो वा ।
स्वीये जीवनकाले सर्वं कष्टं सहन्ते नु ॥

[३४]

नाना सुखभोगानां शक्तिर्यापैति मानवस्येयम् ।
वैचारिकवैषम्यं प्रतिकूलं यत्र चोल्लसति ॥

[३५]

संघर्षाणां गाथामभिनवभावप्रपूरितामेनाम् ।
साक्षात् कृतवान् लन्दननगरे मार्क्सो विनीतभावेषु ॥

[३६]

कपिटलाख्ये ग्रन्थे यद्यल्लिखितं पुनस्तेन ।
सा ननु गीता जाता श्रमिकाणां स्वात्मलाभाय ॥

[३७]

नाना क्लेशान् सोढ्वा तादृशपुस्तकविलेखने सम्यक् ।
जागरणेषु नितान्तं प्रसन्नतायाः परा काष्ठा ॥

[३८]

सपूर्णं जीवनमथ जागरणे संव्यतीतं यत् ।
तेन च नवनीतं तत् प्रकटीभूतं किमपि तादृक् ॥

[३९]

संसारे ये विज्ञास्तैरेतत्सर्वमाकूतम् ।
संधारितं नितान्तं नम्रतरैस्तैर्मनोभावैः ॥

[४०]

क्रान्ति सूते यस्य च विचारधारा श्रमाधारा ।
कारायितभूभारा नाराधितवैभवाऽधारा ॥

[४१]

मार्क्सो ननु जनतायां देवः सेवासमारम्भैः ।
कार्यैः क्रान्तिभरैर्ननु सम्पूज्यः कोऽपि संजातः ॥

[४२]

मार्क्सःकालविशाले जाले सततं परिव्याप्तः ।
निखिलमिदं जगतीतलमथ संक्षुब्धं परं कृतवान् ॥

[४३]

परितोऽपि जागृताभिरेताभिर्ये समस्याभिः ।
सततं पलायमानाः किं ते नूनं प्रकुर्वन्ति ॥

[४४]

प्राचीनं सर्वमिदं समापनीयं पुनर्नूतनम् ।
सर्वं प्रगुणीकार्यं सर्वं तत्साम्यभावेन ॥

[४५]

साम्यं सर्वं स्थाप्यं वैषम्यं दूरणीयं हि ।
वैषम्ये नाशोऽयं साम्ये सा सर्वसम्पत्तिः ॥

[४६]

उत्पादनवेलायां धनं श्रमश्चापि सम्भूय ।
नाना नववस्तूनां वैपुल्यं सम्प्रकाशयति ॥

[४७]

धनिनामधिपतिभावो दूरीकार्यः प्रयत्नेन ।
सर्वेषामपि नूनं श्रमिकाणामर्थलाभोऽयम् ॥

[४८]

श्रमिका एते नित्यं सर्वविधं दौस्थ्यमुपयाताः ।
स्वामित्वेन कथं वा स्वयंवृताः स्युर्विशेषतो यत्नैः ॥

[४९]

मानवमात्रस्य तथाऽलोक्यः कश्चिन्नवोन्मेषः ।
यस्य च विकासधारा क्रोडीकुरुतेऽखिलं विश्वम् ॥

[५०]

मार्क्सेन समुद्योगः कश्चन सोऽयं समारब्धः ।
येनानेन नितान्तं युगसद्भावः समायातः ॥

[५१]

बहुमतमास्ते तदिदं श्रमिकाणां सर्वसंसारे ।
अत्यन्ताल्पीयस्त्वे धनिका एते स्थिता नूनम् ॥

[५२]

ते ननु धनमदगर्वे मानवमात्रस्य परिशोषे ।
सर्वां स्वीयां बुद्धिं चालितवन्तो निकामसन्तुष्टाः ॥

[५३]

जीवनसरणिरियं सा तेषां कृपया च यैर्लब्धा ।
तेऽपि नितान्तं दीप्ताः श्रमिकाणां शोषणे लग्नाः ॥

[५४]

कार्लो मार्क्सः सर्वां श्रमिकाणां तां विशृंखलां शक्तिम् ।
प्रगुणीकर्तुं नूनं दिवानिशं सत्परिश्रमं कृतवान् ॥

[५५]

लन्दननिवासकाले श्रमिकाणां दुर्दशां दृष्ट्वा ।
तेषामुत्थानार्थं मार्क्सो जीवनसमर्पणं कृतवान् ॥

[५६]

तां दुर्दशां च दृष्ट्वा श्रमिकाणां विषमतामथ ताम् ।
मार्क्सो दिवानिशं वा विचारमार्गे विबभ्राम ॥

[५७]

आलस्यमथ च दैन्यं विचारभेदो मिथो कलहः ।
श्रमिकाणां सर्वेषां मारकतत्वानि तान्यासन् ॥

[५८]

केवलमथ चैतेषां श्रमिकाणां श्रावधानेषु ।
सर्वा समुन्नतिः सा विहिता विश्वस्य तोषकरी ॥

[५९]

नानाविधरूढीनां नितरां दूरीकरणलग्नः ।
मार्क्सः सर्वासामथ तासां रूपं प्रदर्शितवान् ॥

[६०]

जड़तायाः सम्प्राप्तौ रूढीनामस्ति साम्राज्यम् ।
एताभिर्वा नित्यं शोषणलाभो भवत्येव ॥

[६१]

रूढ़ीनामुन्मादे श्रमिका एते नितान्तपरिहीनाः ।
नो किञ्चिदपि विधातुं सामर्थ्यं धारयामासुः ॥

[६२]

सर्वासामथतासां रूढ़ीनां दूरकरणेषु ।
मार्क्सेन नव्यमार्गानुमानकार्यं समारब्धम् ॥

[६३]

संगठनं श्रमिकाणां विश्वस्मिन् सावधानतया ।
तेषां हितावहविचारान् सर्वान् संप्रकल्पयामास ॥

[६४]

एंगिल्सो ननु तेषां सर्वेषां सद् विचाराणाम् ।
सम्यक् प्रकाशनार्थं प्रबन्धबन्धं प्रबोधितवान् ॥

[६५]

उभयोरपि तत्साम्यं सम्यग् विश्वं प्रकल्पितवान् ।
संसारे नवदीप्तिर्येनानेनैव संजाता ॥

[६६]

अस्तंगता हि सर्वा श्रमिकाणां कार्यशक्तिश्च ।
सा जागृता निकामं लेनिन सदृशो विनिर्गतो यस्याः ॥

[६७]

मार्क्सस्य विचाराणां या धारा संप्रवाहिता जाता ।
तामथ सम्यगधीत्यैवासीवन्ननु लेनिनस्तु संतुष्टः ॥

[६८]

सोवियतनाम्नि देशे रक्तां सेनां विनिर्माय ।
मार्क्सस्य तां व्यवस्थां मूर्तां कृतवान् स लेनिनः पूर्णाम् ॥

[६९]

काऽपि तदीया क्रान्तिर्विश्वस्मिन् ख्यातिमागता सेयम् ।
रक्तप्रवाहपूर्णा जाता देशेऽथ सम्पूर्णे ॥

[७०]

जाराख्योऽपि स राजा युद्धे सम्यक् पराजितो जातः ।
श्रमिकाणामथ राज्यं सर्वजनानां सुसंजातम् ॥

[७१]

शासनकार्ये लग्नास्ते चेमे लेनिनादयो भूयः ।
पञ्चानामब्दानां योजनमथ संप्रकल्पयामासुः ॥

[७२]

एताभिश्च सुनिर्मलश्रमपरिपूर्णाभिरेव पद्धतिभिः ।
सोवियतदेशमध्ये सर्वविधा सा समुन्नतिर्जाता ॥

[७३]

मार्क्सस्य च यत्स्वप्नं तद्धै नूनं सुचरितार्थम् ।
अर्धञ्चैतद्विश्वं मार्क्सीयां पद्धतिं वृणुते ॥

[७४]

वैयक्तिकसम्पत्तेः शून्यत्वं यत्र संजातम् ।
सर्वं कार्यवशादथ सर्वेषां वैभवं यत्र ॥

[७५]

यत्र पुरा मुष्टिमिता लोकाः सम्पत्तिशालिनश्चासन् ।
तत्र समस्तं राष्ट्रं संपत्तिभिरद्य संपूर्णम् ॥

[७६]

सर्वापीयं घटना सर्वविचित्रान्विता जाता ।
मार्क्सस्यैव विचारोत्तेजकता तत्र कारणीभूता ॥

[७७]

बह्व्यो विचारधारा विद्वद्भिः संप्रकाशिता एव ।
किन्तु क्रोडीभूतं विश्वं मार्क्सस्य धाराभिः ॥

[७८]

वैज्ञानिकयन्त्राणामाविष्कारेण या नूनम् ।
पद्धतिराविर्भूता पूर्णा सा मार्क्सधाराभिः ॥

[७९]

अद्यत्वे बत लोके वैज्ञानिकयन्त्रमयतायाम् ।
पूर्णतमं साम्राज्यं सर्वत्रैवानिवारितप्रसरम् ॥

[८०]

यन्त्रोपलब्धिभागः सम्पूर्णः सर्वसाधनैर्युक्तः ।
कस्याप्येकस्य पुनर्नैवास्ते तत्र स्वत्वं भोः ॥

[८१]

नैवालस्यं क्षम्यं नो वा विपरीतसंचारः ।
राष्ट्रोन्नतिर्हि परमा साध्या सर्वस्य संतुष्ट्यै ॥

[८२]

मार्क्सोपदर्शिता ये पन्थानस्ते समासाद्याः ।
जीवनमेव तदात्वे सम्पूर्णं सम्यगुन्नतं जातम् ॥

[८३]

सुस्वास्थ्यं कियदस्तीत्येतादृशप्रश्ननिर्णयायेदम् ।
सोवियतनाम्नि देशे जनतास्वास्थ्यं निभाल्यतां सम्यक् ॥

[८४]

कीदृशशिक्षापद्धतिरुन्नतये संप्रकल्पते सैषा ।
विचिकित्सा वा नूनं तत्रोत्तरभावमुपयाता ॥

[८५]

बालानां वा मध्ये संचितमास्ते परं राष्ट्रम् ।
बालानां सर्वेषां सेवा वा तत्र दर्शनीयैव ।

[८६]

महिलानामेतासां समानभावः समुन्नतये ।
संबोभवीति विपुलो भावस्तत्रानुसन्धेयः ॥

[८७]

रूढीनामुन्मादैर्दूरीभूतं च तद्राष्ट्रम् ।
बाधाभिर्विविधाभिर्दूरतरं सत्यमायातम् ॥

[८८]

सौन्दर्यस्य समग्रा संसृष्टिस्तत्र या जाता ।
नाना कलाभिरामैर्मनोहरा साऽस्ति संदृश्या ॥

[८९]

धार्मिकविश्वासानां व्यक्तिगतं मूल्यमेवाऽस्ते ।
राष्ट्रोन्नतये नतमां स्पृहणीयास्ते समाचाराः ॥

[९०]

धर्मोन्मादे येयं समुन्नतिः कापि सन्दृष्टा।
श्रमिकाणां वर्चस्वं भूतललुण्ठितमभूत्तत्र ॥

[९१]

अन्ये श्रमं प्रकुर्युश्चान्ये तल्लाभसन्तुष्टाः।
भूयासुश्चैवेयमासीत्सर्वा सुगुम्फिता सरणिः ॥

[९२]

नैव किमप्यायोजनमत्र कदाचित्सुसम्भवति।
यत्र परार्थं बुद्धिः श्रमश्च सर्वः समर्पितो भवति ॥

[९३]

आत्मार्थं राष्ट्रार्थं यत्र समेषां समुन्नतये।
संस्फूर्तिः सञ्जाता नूनं सन्मार्क्सवादोऽयम् ॥

[९४]

सर्वविधोन्नतिरेषा सम्यक् श्रमसत्यसम्भरिता।
आयत्यामतिदीर्घा संजाता विश्वबन्धुत्वे ॥

[९५]

दैत्यानां तु समेषां हानिः काचित्समस्तेयम्।
मार्क्सेन तत्र लिखिता मानवताशोषकाणां वा ॥

[९६]

सपूर्णा मानवता धन्या जाता यदा मार्क्सः।
स्वीयं जीवनमसमं मानवतायै समर्पितवान् ॥

[९७]

मार्क्सोऽद्यापि समीपे समास्थितः सम्यगातनुते।
मैत्रीभावं विपुलं विलोपिते साम्यता भावे ॥

[९८]

भारतवर्षे ननु तत्साम्यं मूले विनिश्चितं चाऽस्ते।
एकोऽहमेव भणितिः सैषा वेदे समादिष्टा ॥

[९९]

एको मार्क्सो वादो व्यवहारेषु स्वयं दीप्तः ।
अर्थाधारितधर्मो यत्र प्रोच्चैः समुल्लसति ॥

[१००]

मार्क्सस्येयं धारा वैषम्याणां विलोपयित्री स्यात् ।
मानवतापातकमथ सर्वञ्चैतत्सुदूरितं भूयात् ॥

[१०१]

तन्मार्क्सशतकमेतद्रचितं शिवदत्तशर्मणा सम्यक् ।
श्रमिकाणां सर्वेषां मोदावहमेव बोभूयात् ॥

१२३२+१०१=१३३३

: १७ :

विद्यासर्गः

[१]

विद्योपार्जनमखिलं जीवनयात्रासु सर्वस्वम् ।
तेन विनैतज्जीवनमास्ते सर्वस्वशून्यतारूपम् ॥

[२]

येयमविद्या सा वा विश्वस्यैवास्ति कारणीभूता ।
अथ तद्विमुक्तियुद्धे विद्यैवास्ते परं शस्त्रम् ॥

[३]

विद्याधिगमः सोऽयं यस्मात् संजायते नित्यम् ।
गुरुरिति गिरां गरीयान् शब्दस्तत्रैव संप्रयोगार्हः ॥

[४]

यस्माद्वा कस्माद्वा ज्ञानाधिगमः सुसंजातः ।
सर्वो गुरुशब्दार्थस्तत्र तु सर्वत्र जागर्ति ॥

[५]

धारा विद्याया या प्ररंभादेव वहति मधुपूर्णा ।
अक्षरजगतः परिचयमारभ्यास्ते प्रवृत्तिः सा ॥

[६]

शास्त्राणामध्ययने प्रयोगकरणे विचारसंचारे ।
नवनवरचनाकरणे विपुलं रूपं नु विद्यायाः ॥

[७]

दुर्गोपमेषु पुस्तकगृहेषु दृष्ट्वा सरस्वत्या ।
आनन्त्यं रूपाणां धन्यत्वं मनसि जागर्ति ॥

[८]

विद्यावितरणकर्मणि ये निष्णाताः कृपालवो धीराः ।
प्रणिपातपरिप्रश्नैः सेवाभिस्ते तु संसेव्याः ॥

[९]

प्रणिपातमुखैरथ सम्यक् संसेवितोपायैः ।
ज्ञानस्य वितरणे ते समुन्मुखा एव जायन्ते ॥

[१०]

आलूक्षाऽनूचाना युक्ता धर्मेषु कामनापूर्णाः ।
गुरवो विद्यावात्प्यै गन्तव्याः साधु नम्रतया ॥

[११]

प्राणिपातसमारंभैराचार्यास्तानि रूपाणि ।
विद्याया संक्षेपैर्बृहद्भरैर्वाथ कथयन्ति ॥

[१२]

काले पुरायुगीने लेखनसंभारकाठिन्ये ।
कण्ठस्थीकरणेन तु विद्यावाप्तिः प्रवर्तिता देशे ॥

[१३]

'श्रुति' शब्दः 'स्मृति' शब्दः परम्परा सम्प्रदायशब्दाश्च ।
कण्ठस्थीकरणे च स्मृतौ च परिभाषिताः सन्ति ॥

[१४]

शुश्रूषा तु गुरूणां विद्याधिगमाय संधार्या ।
तदभावे पुष्कलधनव्ययकरणं चापि निर्दिष्टम् ॥

[१५]

सेवायाः परिपूर्तिर्धनदानेनापि संभाव्या ।
तेन हि विद्याधिगमोऽद्यापि च संदृश्यते लोके ॥

[१६]

विद्यावाप्तिः स्वीयां विद्यां वा संप्रदाय तस्मात्तु ।
तद्विद्या स्वीकरणेनापि च सम्यक् समादिष्टाः ॥

[१७]

नलऋतुपर्णकथायां विद्याया विनिमयो दृष्टः ।
शतशश्चोद्धरणानामीदृक्कथनीयता जाता ॥

[१८]

अद्य तु विद्याधिगमो नाना कक्षासमुत्तरणे।
नानाप्रमाणपत्रावाप्तौ रूढ़ो विभातितराम्॥

[१९]

परमन्यापि च धारा विद्यावाप्तौ प्रचालिता विज्ञैः।
नास्ति लिपेः सम्बन्धस्तत्र, तु पुस्तकनिभालना चापि॥

[२०]

सैषा श्रवणे निरता धारा ज्ञानस्य विद्यते विपुला।
यत्राक्षरं विनैव तु विद्याया अधिगमः पुंसाम्॥

[२१]

वक्ता-तथोपदेष्टा बहुसंश्रावयति विविधं यत्।
तत्तु पठनतः सुतरामधिकं ज्ञानं समातनुते॥

[२२]

तदिदं बहुश्रुतत्त्वं विद्याधिगमे विनिर्मलं रुचिरम्।
कारणभूतं स्पष्टं कक्षाधिगमाद् गरीयश्च॥

[२३]

सन्ति तु ते ते पुरुषा यैर्नैवासादितानि पत्राणि।
किन्तु प्रवचनकाले तेऽधः कुर्वन्ती दिग्गजान् पठितान्॥

[२४]

गुरवोऽप्यत्र नितान्तं भिन्ना भिन्ना भवन्त्येव।
ज्ञानलवोऽपि च यस्मादासाद्यस्तं गुरुं स्मरन्ति ननु॥

[२५]

के ननु तादृशगोष्ठीसरम्भाद् वंचिता वा स्युः।
यत्र तु धारा नित्यं वहन्ति विद्यापरामृष्टाः॥

[२६]

बाल्यादेव तु विद्या परिवारे शिक्षिता भवति।
भारतवर्षे सैषा विद्याया पाठशालैव॥

[२७]

मानोन्नतेरधिगमे बहुश्रुतास्तेऽथ सम्मान्याः ।
प्रवचनभाषणनिपुणा व्यासा वा दर्शनीयाः स्युः ॥

[२८]

यद्यप्येते नतरां निरक्षरा वक्तुमिष्यन्ते ।
पुनरपि ग्रन्थानां वा कक्षानां नाधिगम एषाम् ॥

[२९]

श्रवणसहस्त्रैरधिगतनैपुण्यास्ते प्रयोगेषु ।
अधरीकुर्वन्ति मुहुर्नानापरिपत्रधारिणो धीरान् ॥

[३०]

सन्ति च तेऽसंख्याता येऽक्षरमात्रात्तु शून्यतमाः ।
पुनरपि कलासु निपुणाश्चकितीकुर्वन्ति दर्शकान् सर्वान् ॥

[३१]

तैरथ तादृशविद्याधिगमो दृष्ट्वैव श्रुत्वैव ।
सम्पादित इति विपुलं क्षेत्रं तस्यापि मार्गस्य ॥

[३२]

ये वा भावविभावानुभावभाषामया विलोक्यन्ते ।
तेषामेषासरणिर्विद्याधिगमाय विद्यते पुरतः ॥

[३३]

योऽयं तरतमभावः साक्षरता तत्र जागर्ति ।
नानाग्रन्थानां वाऽध्ययने मनने विरचने च ॥

[३४]

परमत्राऽस्ते यदि कोऽप्येतादृशसिद्धिपरिपूर्णः ।
साक्षात्कारयिता वा निरक्षरो माननीयतरः ॥

[३५]

राष्ट्रे सेनानिवहे सैनिकगतिविधिषु संलग्नाः ।
मान्या जगतां धन्या निपुणाः संग्रामविद्यासु ॥

[३६]

तेषां निरक्षरत्वं नो गण्यं गणनवेलायाम् ।
मरणाख्या या विद्या सुदुष्करा तैः समधिगता ।।

[३७]

जिज्ञासापरिपूर्णं चेतोऽधिगमेऽथ विद्यायाः ।
परमावश्यकमिति तद् यत्नै रक्ष्यं सदादिष्टम् ।।

[३८]

त्रैवर्णिकैर्हि नियतं गायत्रीमन्त्रजपसरणौ ।
तादृशचेतोरक्षा नैर्मल्यं चापि संसाध्यम् ।।

[३९]

विद्या ददादि विनयं चेत्यादौ सुप्रसिद्धभणितानि ।
श्रूयन्ते तेन महान् विनये महिमा विभावनीयोऽस्ति ।।

[४०]

नहि केवलमथ विद्या विनयं देयादिति समाप्तिः स्यात् ।
विनयो विद्यां देयादित्यपि तत्पूरकं नियतम् ।।

[४१]

प्रणिपातप्रश्नानां सेवायाश्चापि हेतुता कथिता ।
उपदेशामृतपाने विनस्यैवाऽथ रूपाणि ।।

[४२]

विद्या विनयं देयाद्देयाद्विनयोऽथ विद्यां वा ।
अन्योन्याश्रयमेतन्नतमां बुद्धौ समुन्नेयम् ।।

[४३]

संस्कारे सम्मिलितो विनयः प्राग्जन्मसंसिद्धः ।
तस्य विवृद्धिं सुतरां विद्या सम्पादयति नो दोषः ।।

[४४]

विनयप्रकटनचिन्हान् विद्याधिगमादनन्तरं सम्यक् ।
सञ्जानाति विनेयश्चैतत्तत्रास्ति तात्पर्यम् ।।

[४५]

आश्चर्यकरस्तावद् द्रोणस्यार्जुनयशोवृद्ध्यै ।
भिल्लैकलव्यशिष्येऽङ्गुष्ठच्छेदस्य याचनायाः ।।

[४६]

द्रोणस्य प्रतिमाया गुरुत्वमासाद्य चैकलव्येन ।
शुभ्रधनुर्विद्यायामाश्चर्यकरः प्रयोग आरचितः ।।

[४७]

लोकोत्तरविद्यैषा मा प्रसरेद् यत्प्रभावेण ।
सर्वेऽप्यधः कृताः स्युर्धनुर्धराः शूद्रवंश्येन ।।

[४८]

एतादृशी मतिः सा नो मान्या वा समर्थनीया वा ।
पुनरपि घटना सैषा यल्लिखिता तत्प्रशंसार्हम् ।।

[४९]

यात्रासु धूमयानेषु च जलपानापणेषु विचरन्ती ।
वाग्धाराऽपि जानानां विद्याया वर्णनं कुरुते ।।

[५०]

नानाव्याख्यानेषु च नानाविधपत्रसार्थेषु ।
विद्याविचित्रधारा तरङ्गपूर्णा समाभाति ।।

[५१]

विद्यावाप्तौ काचिज्जिज्ञासा वा विनम्रता वापि ।
यत्रैवास्ते नितरां तत्रैवास्तेऽथ पाठशालाऽपि ।।

[५२]

भिन्ना भिन्ना घटनास्तेषां तेषां प्रयोजिका जाताः ।
संजायन्ते विपुला विद्यायाः साधिकाश्चापि ।।

[५३]

सैव च घटना नित्यं घटिता नतमां करोति वा किमपि ।
सेयं सद्यस्तरता सर्वाऽपि च पात्रताधीना ।।

[५४]

सिद्धार्थः शवमेकं वृद्धं वैकं च दृष्ट्वैव।
निर्मथितः सन्नन्तः बुद्धत्वे प्रेरितो जातः।

[५५]

अन्यैरथ पुरुषैर्वा सहस्रशश्चापि शवयात्राः।
वृद्धतमाः पुरुषा वा लोक्यन्ते नो समुन्मेषः॥

[५६]

साधनसौकर्यं यत् वैज्ञानिकविकासमयकाले।
सुलभं भवति नितान्तं तत्तु पुरा नैव संप्राप्तम्॥

[५७]

पुनरप्यद्यत्वे यो विद्याया वा विलुप्यते महिमा।
तस्यापि कारणमिदं यंत्राणामेव महात्म्यम्॥

[५८]

ज्ञानक्रिययोः साम्ये विद्याया भवति साफल्यम्।
तन्मध्यभित्तिभूताद्यत्वे सा यन्त्रमायैव॥

[५९]

तेन तु विकला विद्या श्रमरहिता सर्वसौख्यमयरूपा।
चारित्र्यगुणविहीना शप्तैवासाद्यते छात्रैः॥

[६०]

युक्ताश्चायुक्ता स्तेऽनूचाना अद्य नो दृष्टाः।
काल्पनिके तु विचित्रे मानसचित्रेऽद्य दर्शनं तेषाम्॥

[६१]

भृतकाऽध्यापकसंज्ञा स्मृतिकाले या पुरा दत्ता।
निन्दायान्तु गुरूणामद्यत्वे सा प्रशंसार्हा॥

[६२]

ये वा चरित्रदोषाः संख्यायन्ते स्म भूततरकाले।
ते वै चारित्र्यगुणा मन्यन्ते वर्तमानेऽस्मिन्॥

[६३]

विद्यायां पाण्डित्यं यत्र पुराऽसीत्समादृतं सम्यक् ।
तत्राद्यत्वे पल्लवपाण्डित्यं नूनमाद्रियते ॥

[६४]

ज्ञानं भृतिलाभायाद्यत्वे सम्प्राप्यते छात्रैः ।
भृतिरपि सा नो लभ्या तेनाऽस्ते विप्लवःसततम् ।

[६५]

गंभीरज्ञानार्थं समुद्रपारेऽथ गन्तव्यम् ।
तत्र च बृहस्पतित्वं सम्प्राप्यं धारणा सैषा ॥

[६६]

नतरामालोच्यमिदं यज्जातं जायते यद्वा ।
परिवेशेऽस्मिन्विद्याधिगमो नूनं विचारार्हः ॥

[६७]

अद्य तु विद्या निखिला पुस्तकमध्ये विराजिता जाता ।
पुस्तकलेखनकर्ता नो वा जानाति किं लिखितम् ॥

[६८]

लेखनकाले पुस्तकसार्थमसौ संमुखे कुरुते ।
किञ्चित् किञ्चिन्नीत्वा नूतनग्रन्थस्य लेखको भवति ॥

[६९]

तत्रं क्षोदक्षेमे यद्वा तद्वा समाधत्ते ।
गभीरे तु विचारे स्थानात्सद्यः पलायते दूरे ॥

[७०]

प्रचुरतरव्ययपूर्वं लोकानात्मश्लाघापरान् सुपरितोष्य ।
संघटयन् तान् सर्वान् वादं कंचित् प्रवर्तयति ॥

[७१]

वादस्यैतस्यैवोल्लेखं लेखेषु भाषणेष्वऽथवा ।
वारं वारं कुर्वन्नाचार्यं स्वं स्वयं मनुते ॥

[७२]

विद्यायामतिचारो दर्शनयोग्यस्तथाऽद्यत्वे ।
यो नहि किमपि विजानात्यद्यत्वेऽसौ महाचार्यः ॥

[७३]

रजस्तमोबाहुल्यं सत्त्वं लघु सर्वथा जातम् ।
विद्याक्षेत्रे सेयं दुरवस्था शोचनीयास्ति ॥

[७४]

विनयस्य नाममात्रं श्रोतव्यं पाठशालासु ।
सर्वात्वविनयगाथाऽध्यापकवर्गाद्विनिर्याति ॥

[७५]

यदि शिक्षकोऽद्य किमपि स्वीयाचरणेन शिक्षयति ।
अविनयमेव तदेतद्वक्तव्यं संप्रदायेषु ॥

[७६]

अविनयविद्याधिगमश्छात्राणामद्य जायते विपुलः ।
प्रकटे तत्परिणामे निखिलो लोकस्तु भस्मसाद् भवति ॥

[७७]

दुष्परिणामारंभे चकिता लोकाश्च शासकाश्चैव ।
वैकल्यमनुभवन्तो यद्वा तद्वाऽथ कुर्वन्ति ॥

[७८]

सर्वैरुपेक्षितोऽयं विद्यायाः पावनः प्रसरः ।
स्वयमेवाभिहतः सन् हिनस्ति लोकस्य चारित्र्यम् ॥

[७९]

चारित्रहननरूपे तमसा व्याप्ते महागर्ते ।
पतनोत्पतनमयीयं लीला सर्वत्र लोकनीयैव ॥

[८०]

पठितानां संघर्षः, हत्या, चौर्य, मनुष्यतालोपः ।
स्वार्थमयीलोकानां वृत्तिरविद्या प्रभावान्नु ॥

[८१]

सर्वे भवन्तु लोका विद्वांसो वाथ शिक्षिता वापि।
पात्रत्वं तेषामथ चास्ति नवेत्यादि को विद्यात्॥

[८२]

पूर्वं विद्याधिगमो नासीत्सर्वस्य लोकस्य।
अधिकाराणां चर्चा तत्र तु विपुलास्ति शास्त्रेषु॥

[८३]

तत्रापि चापावदा लभ्यन्ते वा पुराणेषु।
परमास्तेऽपि च तेषामपवादत्वं न नियमत्त्वम्॥

[८४]

विद्यायाश्च कलायाः प्रस्थानौ द्वौ पुराकालात्।
प्रथितौ निखिलो लोकस्तत्र तु सम्यक् सुशिक्षितो भवति॥

[८५]

वैचारिको विकासो यत्रैवास्ते तु विद्या सा।
यत्र क्रियानिपुणता शिक्षणयोग्या कला तु सर्वा सा॥

[८६]

पूर्वं कलास्वरूपं विद्यायां वा विचारे वा।
प्रादुर्भवति परस्तात्क्रियासु घटते तदा कला सैषा॥

[८७]

विद्याऽभ्यासी कलया यदि शून्यस्तत्र नो हानिः
कलया कलिताकारो विद्याऽभ्यासी भवेन्नो वा॥

[८८]

उभयोरंगीकारे नैपुण्यं यदि न जायते क्वापि।
जीवनवैलक्षण्यं तत्र तु नितरां नमस्कार्यम्॥

[८९]

विद्या कला च सततं सम्बद्धैव प्रवर्तते नित्यम्।
प्राधान्याद् व्यपदेशः सोऽयं, विद्या' 'कला' चापि॥

[९०]

भवतुतरामाचार्यो यः कोऽपि गभीरशास्त्रेषु ।
लेखन भाषणकलया शून्यो यदि कुत्र किं कुर्यात् ॥

[९१]

एतादृशा जना अपि संसारे भूरिशो दृष्टाः ।
विद्वांसोऽपि कलायां शून्यतरा नो समृद्धतराः ॥

[९२]

अपरे पुनः कलायां प्रावीण्यं प्राप्तवन्तोऽमी ।
विद्या क्षेत्रे शून्याऽसंख्याता निर्वहन्ति संसारे ॥

[९३]

विद्यातस्तु कलाया विपुलतरं क्षेत्रमस्तीति ।
विपुला संख्या लोके कलया कलितैव विज्ञाता ॥

[९४]

अद्य तु विद्या कलरयोरैक्ये सम्मिश्रणे चैव ।
द्वितयस्यैव तु रूपे ह्रासस्यैवास्ति साम्राज्यम् ॥

[९५]

विद्याया श्रेष्ठत्वं नाशितमेवास्ति यन्त्रैस्तु ।
तत्तत्कलाप्रचुरताश्रेष्ठत्वस्यैव साम्राज्यम् ॥

[९६]

विद्यानामद्यत्वेऽध्ययनं प्रसृतं कला (Arts) नाम्ना ।
यन्त्रमयी सर्वेयं कलाऽथ विज्ञानमिति कथिता ॥

[९७]

किन्त्वाध्यात्मिकतायास्तिरोहितत्त्वे कलामात्रे ।
विक्षिप्तता समाजेऽनिर्बन्धं जागृता भवति ॥

[९८]

इत्थं विद्याधिगमोऽद्यत्वे नैवास्ति सत्समाधाने ।
जीवननैरर्थक्ये तस्यैषा प्रेरणा सर्वा ॥

[९९]

शासनसंस्था नित्यं शिक्षाक्षेत्रे तथास्त्युदासीना ।
मूलोपेक्षां कृत्वा शाखानां सेचने लग्ना ॥

[१००]

शासनसंस्थाया यो प्रभावपूर्णो भवति सञ्चारः ।
सर्वोलोकस्तत्रैवास्थावान् जायते नियतम् ॥

[१०१]

विद्याधिगमो मूलं सर्वस्यैवाथ राष्ट्रस्य ।
तेन विना सर्वेयं समुन्नतिश्चैत्यश्रृंगारः ॥

[१०२]

आशास्महे नितान्तं निर्द्वन्दा देशनेतारः ।
विद्याधिगमे सर्वं ध्यानं स्वं केन्द्रितं कुर्युः ॥

[१०३]

छन्दोबद्धा प्रस्तुतिरेवैषा विषयजातस्य ।
छन्दस्सु विषयकथनं प्रवर्तितं प्राक्तनाचार्यैः ॥

१३३३+१०३=१४३६

: १८ :

यात्रासर्गः

[१]

यात्रा भवति नितान्तं दृष्टिसमुल्लासकं तत्त्वम् ।
यात्रायां विहितायां विधीयते जन्मसाफल्यम् ॥

[२]

पुरुषः प्राप्नोति परं पुरुषार्थं नव्ययात्रायाम् ।
जीवनमेतन्निखिलं काऽपि नवीनाऽथ यात्रैव ॥

[३]

उपनिषदुक्तं वचनं तद्धि चरैवेति यात्रायै ।
दिव्यप्रकाशरूपं कथं न सन्धार्यते विद्भिः ॥

[४]

सर्वेषामथ तावद् देवानां वा मनुष्याणाम् ।
सारं यदि हि विलोक्यं सा सा सा सा भवेद्यात्रा ॥

[५]

जीवनसारविवेचनसंलग्नैर्लेखकैर्नितराम् ।
कोऽपि नवीनोन्मेषो विलोक्यते नव्ययात्रासु ॥

[६]

सर्वाऽपि सा विवेचनशक्तिः पूर्णत्वमायाति ।
परिपूर्णाऽप्यवशिष्टा तिष्ठति दिव्यासु यात्रासु ॥

[७]

तरतमभेदविभिन्ना नानाभावाभिरामरमणीयाः ।
नानाऽऽलोकनशोभासम्भारा दिव्यायात्रासु ॥

[८]

आखेटकयात्राणां वर्णनमेत् सुविद्यते विपुलम् ।
नैकट्येन सुदृष्टं जन्तूनामान्तरं यत्र ॥

[९]

नानादेशविलोकनसुषमासाम्राज्यपूर्णयाम्　　।
यात्रायां जन्मेदं　पूर्णतया　सार्थकं भवति ।।

[१०]

प्राणस्पन्दनविह्वलभावो　यात्रासु　लभ्योऽस्ति ।
स्पर्शमयी गन्धमयी रूपमयीयं भवति यात्रा ।।

[११]

पादेन्द्रियस्य सर्वा सार्थकता भवति यात्रायाम् ।
येन न विहिता यात्रा व्यर्थौ पादौ गतौ तस्य ।।

[१२]

सूक्ष्मा स्थूला नानारूपा सेयं भवति यात्रा ।
सूक्ष्मविवेचनकरणेऽनन्ता सर्वा भवति यात्रा ।।

[१३]

राहुलसांकृत्यायनवर्यविरचितं घुमक्कडं शास्त्रम्　।
नैका सिद्धाश्चान्या रचना यात्रासु सञ्जाताः ।।

[१४]

यात्रा　चेश्वरसदृशी　नैवादिर्नान्तिभावोऽस्याः ।
आलोक्यते नितान्तं　सूक्ष्मेक्षिकयाऽपि संमृष्टः ।।

[१५]

आत्मसमैः सन्मित्रैः सह विज्ञानप्रवर्धिनी सेयम् ।
नानाकथानकरसैरास्वाद्या भवति मोहिनी यात्रा ।।

[१६]

यद्यपि　नानायानान्यद्यत्वे　सन्ति　सुलभानि ।
पुनरप्यानन्दमयी　विलोक्यतेऽद्याऽपि　पदयात्रा ।।

[१७]

समयाल्पव्ययकरणे　धनव्ययस्याथ　बाहुल्ये ।
नानाविधदेशानामाकाशे　दृश्यते　यात्रा ।।

[१८]

वाष्पविचालितगन्त्रीमारुह्याद्यास्ति या सुलभा ।
शासनधृतसन्धाना सर्वा देशे भवति यात्रा ॥

[१९]

कार्यसहस्राऽकुलितैर्नानाकार्येषु संलग्नैः ।
नानापुरुषधुरीणैर्महिलाभिश्चाऽद्य दृश्यते यात्रा ॥

[२०]

अध्ययनमननचिन्तनपरायणानां हि कालेऽस्मिन् ।
विज्ञानं वर्धयितुं दृश्या वैदेशिकी यात्रा ॥

[२१]

स्वीये परिकरमध्ये प्रभावमसमं विवर्धयितुम् ।
तुच्छानन्यान् धर्तुं दृष्टा वैदेशिकी यात्रा ॥

[२२]

कालेऽस्मिन् स्वामिवरैर्विवेकपरिपूरितस्वान्तैः ।
पाश्चात्यान् शिक्षयितुं विहिता वैदेशिकी यात्रा ॥

[२३]

योगं संशिक्षयितुं दर्शनविद्याप्रचारार्थम् ।
प्रचुरं धनमर्जयितुं दृष्टा वैदेशिकी यात्रा ॥

[२४]

शासनयन्त्राऽरूढैर्नानाकार्याऽनुरोधेन ।
सौहार्दं वर्धयितुं क्रियते वैदेशिकी यात्रा ॥

[२५]

नृत्यानां नूतनतां संचारयितुं च कालेऽस्मिन् ।
नृत्यकालायां कुशलैर्विधीयते तादृशी यात्रा ॥

[२६]

यन्त्राणां विद्यायां निपुणैर्वैज्ञानिकैर्नितराम् ।
नानायन्त्राऽऽदाने क्रियते वैदेशिकी यात्रा ॥

[२७]

संस्कृतिमसमां स्वीयां देशे देशे प्रचारयितुम् ।
संगीतज्ञैनूंनं विहिता वैदेशिकी यात्रा ।।

[२८]

संगीतनैपुणीं तां देशे देशे विवर्धयितुम् ।
संगीतज्ञैनूंनं विहिता वैदेशिकी यात्रा ।।

[२९]

संसारे सामीप्यं यानानां सम्प्रसादेन ।।
यज्जातं सञ्जाता सुलभा वैदेशिकी यात्रा ।।

[३०]

वैवाहिकसन्दर्भे पुरातनादेव कालाद् वा ।
संरम्भपूर्वकं सा प्रदृश्यते काऽपि वरयात्रा ।।

[३१]

गार्हस्थ्यजीवने या प्रवेशदानाय कस्मैचिद् ।
सम्बन्धसाक्षिरूपा विनिर्मिता काऽपि वरयात्रा ।।

[३२]

ऋणमपि भूयः कृत्वा शतशो मनुजान् सहायकान्नीत्वा ।
नानासम्भारैः सह विधीयतेऽद्यापि वरयात्रा ।।

[३३]

ये धनहीनाः पुरुषास्तेषां कन्याविवाहवेलायाम् ।
द्वारे दुःखनिधाना गच्छति मुग्धा तु वरयात्रा ।।

[३४]

पुरुषोत्तमैः समेता वृद्धैर्युवकैस्तथा च बालाद्यैः ।
नानानव्यविभूषायुक्तैर्दृश्या तु वरयात्रा ।।

[३५]

नानावाद्यध्वनिभिर्विस्तारितवैभवा सेयम् ।
नानायानारूढा यन्त्रस्था चैव वरयात्रा ।।

[३६]

मानसिकोल्लासमयी सर्वं विश्वं करे दधती ।
गगनेऽपि शुक्रमंगलपर्यन्तं दृश्यते यात्रा ॥

[३७]

काले काले मित्रैः सम्बन्धिभिरिद्य सद्भावे ।
मुखदर्शनसम्भाषणसुभगा सा दृश्यते यात्रा ॥

[३८]

सुस्वास्थ्यं रक्षयितुं मानसिकोल्लासमाधातुम् ।
प्रातः काले नित्यं कैश्चित् सम्पाद्यते यात्रा ॥

[३९]

भारतदेशसुतीर्थेष्वानन्दोल्लासमायाता ।
पार्यन्तिकमपि मार्गं द्रढयति तीर्थात्मिका यात्रा ॥

[४०]

आनन्दं चामन्दं वितरीतुं रसमयं कर्तुम् ।
दिव्या काऽपि विधेया कविभिश्छन्दोमयी यात्रा ॥

[४१]

स्वीयै रसमयभावैरन्यान् सर्वान् वशीकर्तुम् ।
कान्तासम्मितविभवा केषांचित् शाब्दिकी यात्रा ॥

[४२]

नानाभावविभावाऽनुभावसम्भाररमणीया ।
स्मर्तव्या कालेस्मिन् नाना चित्रान्विता यात्रा ॥

[४३]

विश्वस्मिन् लोकानामुपकारं कर्तुमीशिता तावत् ।
कारागारेऽपि पुनस्तपस्विनां सा भवेद् यात्रा ॥

[४४]

तेजस्विनां महिम्ना सर्वं लोकं वशीकर्तुम् ।
विस्फोटकसम्भारैः सहिता सांग्रामिकी यात्रा ॥

[४५]

जनतासु नवविकासं सञ्चारयितुं प्रभावविस्तारे ।
नेतृणां केषाञ्चिद् भवतितरां साऽथ पदयात्रा ॥

[४६]

क्रूरैः शूरतराग्रैरितिहासेषु प्रदृश्यते लिखिता ।
देशान् विजेतुमेषा विहिता सांग्रामिकी यात्रा ॥

[४७]

न्यायं समुपासयितुं धूर्ततमान् वा विनाशयितुम् ।
वीरवरैरपि विहिता काले सांग्रामिकी यात्रा ॥

[४८]

दिव्यं भावविभावानुभावसंभारमात्मसात्कर्तुम् ।
नानालेखकवर्यैर्विहिता साहित्यिकी यात्रा ॥

[४९]

मार्गकुमार्गविचाराऽदभिज्ञतायां विमूर्च्छितैः पुरुषैः ।
नानापीडासहितैर्विधीयते काऽपि दुःखिता यात्रा ॥

[५०]

दिव्याऽनुभवं स्वीयं विस्तारयितुं विपुलजनतासु ।
धर्मं सन्देशयितुं विहिताऽऽसीद् धार्मिकी यात्रा ॥

[५१]

जलनिधिलङ्घनशीलैः सरितां वा लङ्घने निपुणैः ।
नाना यानावलिभिर्विहिताऽसीत् साऽपि जलयात्रा ॥

[५२]

देशानां कालानां सार्थकतामादिशन्तीयम् ।
विहिता विधीयते वाऽप्यहर्निशं मानवैर्यात्रा ॥

[५३]

आलोचनां समस्तां विस्तारयितुं प्रकामदीर्घेयम् ।
शास्त्रार्थमहारथिभि विहिता शास्त्रार्थमय यात्रा ॥

[५४]

नास्ते कस्यापीयं प्राथमिकी वा परम्परालभ्या ।
शूरैः सेवानिपुणैः कर्मण्यैश्चापि सत्कृता यात्रा ॥

[५५]

दुर्लङ्घ्यपर्वतानां लङ्घनमपि शक्यते कर्तुम् ।
संसाधितं तदेतद्विहिता यैः पर्वते यात्रा ॥

[५६]

काश्मीरेषु विलासः कामं दृश्यः प्रतिदेव्याः ।
काश्मीरेषु निकामं यैर्वा विहितैकदा यात्रा ॥

[५७]

नानाऽऽश्चर्यमयाणां भवनानां ताजप्रभृतीनाम् ।
आलोकनेन नित्यं प्रसाद्यते शोभना यात्रा ॥

[५८]

सप्तपुरीणामपि या विधीयते सा परिक्रमा कामम् ।
प्राचीनाऽपि नितान्तं नवीनभावोत्थिता यात्रा ॥

[५९]

आसेतु चाहिमाचलमथाटकात् कटकपर्यन्तम् ।
शङ्करभगवत्पादैर्विहिता लोकोपकारिणी यात्रा ॥

[६०]

दिक्षु चतुर्ष्वपि धाम्नां चतुष्टयं वा विनिर्माय ।
तैर्विहिता स्वाभीष्टा धन्या सांसारिकी यात्रा ॥

[६१]

विद्वत्तायाः सौरभमथ दिव्यं स्वात्मनिष्ठं वा ।
जनतायां वितरीतुं विद्वद्भिः स्वीकृता यात्रा ॥

[६२]

जनयतेयमपि नितान्तं धन्या जाता यदीयवाग्विभवैः ।
सर्वविधं सन्तोषं संयच्छति शोभना यात्रा ॥

[६३]

नानामनोऽभिलाषैर्भरिता परिपूर्तिमायाता ।
वैपुल्येनानन्दान् वितरति दिव्योत्तमा यात्रा ॥

[६४]

विश्वस्मिन् संरचनाऽभिनवा नित्यं प्रजायते येयम् ।
तत्प्रविलोकनविद्यावर्धनशीला भवति यात्रा ॥

[६५]

सत्त्वरजोमयविभवैस्तमोमयैश्चाथ सम्पूर्णा ।
प्रतिपदनवसञ्चारा सर्वा सन्तोषदा यात्रा ॥

[६६]

कर्मठतायां प्रीतिं सञ्चारेष्वभिनवां नीतिम् ।
सद्यो विभूषयन्ती नानाकामान्विता यात्रा ॥

[६७]

यानानां नवतायामाकर्षणमादिशन्तीयम् ।
नूतनविभाविलसिता काचित् सा शोभना यात्रा ॥

[६८]

साक्षात्काराऽवसरे प्रत्याशिगणैर्निरन्तरं विहिता ।
निर्वाचकैः सदस्यैरपि सा सद्यो विधीयते यात्रा ॥

[६९]

मृत्युमुखे गच्छन्तं पुरुषं तत्तत्सदुपचारैः ।
जीवनमथ वितरन्ती तत्तत्स्थाने कृता यात्रा ॥

[७०]

नानाविधपापानां प्रक्षालनमादिशन्तीयम् ।
धार्मिकतीर्थस्थाने दर्शनकाले कृता यात्रा ॥

[७१]

नानाभोजनवेलानिमन्त्रणेषु प्रकामसंरम्भा ।
विविधव्यञ्जनसुलभा भोजनकाले भवति यात्रा ॥

[७२]

अधिकां श्रियमुद्वहती निकामतृप्तिं समादिशती।
मानवजीवनवृक्षे सुन्दरफलतामुपागता यात्रा ॥

[७३]

विस्तारितसौभाग्या सम्पूर्णं सौरभं दधती।
सर्वजगत्सुषमाणां सीमासारा स्वयं यात्रा ॥

[७४]

आदिशति या समस्तं सामाजिकसारसंभृतं तत्त्वम्।
जीवनकालेऽभिनवैः सम्भारैः पूजिता यात्रा ॥

[७५]

त्रस्तव्यस्ताऽऽकुलितैर्मनुजैर्नित्यं समाराध्या।
आश्वासनानि दधती नवदेशं प्रापयति यात्रा ॥

[७६]

साहसमभिवर्धयती जीवनयुद्धे जयं दात्री।
नित्यनवकामनाभिर्मिलिता सौख्यप्रदा यात्रा ॥

[७७]

सम्मोहनसंसारं प्रदर्शयन्तीयमाभाति।
कमनीयकाव्यभाषासौरभमयतामुपागता यात्रा ॥

[७८]

चित्रितचित्तानुभवा नवनवसञ्चारशीलेयम्।
कामदुघा सर्वाशासम्यक्सम्पूरिका यात्रा ॥

[७९]

नेत्रोन्मीलनकार्यं सम्पादयतीयमादिमात् कालात्।
नवसभ्यताविकासं कुर्वन्ती कैर्न काम्यते यात्रा ॥

[८०]

नानानदीनदशतैः पर्वतमालाभिराव्याप्ता।
सर्वोत्सुकजनतासंकथ्या मानिनी यात्रा ॥

[८१]

आचन्द्रसूर्यतारकमाराद् ये तद्यशोविभवैः ।
सन्दीप्यन्ते तैर्वा कामं विहिता यशोयात्रा ।।

[८२]

प्राक्पुरुषा ये जाता येषामद्यापि गीयते सुयशः ।
ये प्रेरणाप्रसूतास्तैर्विहिता सा यशोयात्रा ।।

[८३]

सम्मानितसद्विभवैर्वारं वारं समीप्सिता याऽसौ ।
वायौ तिष्ठति यानं येषां तेषां सुशोभना यात्रा ।।

[८४]

चायाख्यं सत्पानं पातुं केषाञ्चिदद्य न निवार्या ।
नानाऽऽपणेषु नित्यं विपुलेयं दृश्यते यात्रा ।।

[८५]

शकटीद्वारा देशे भ्रमणे चाऽऽनन्दसन्तुष्टिः ।
सञ्जायते निकामं तया सदाऽनन्ददा यात्रा ।।

[८६]

या प्रेमसारधारा प्रगुणितमहिमाऽन्विता सम्यक् ।
सञ्जायते प्रचुरतापूर्णा सर्वा सुशोभना यात्रा ।।

[८७]

वैज्ञानिकसंसाधनसम्पन्नाऽथ प्रकामरमणीया ।
देशे देशे काले काले सर्वा सुकोमला यात्रा ।।

[८८]

अगु सर्वविधं सद्भावं संस्थापयते सुसेविता सेयम् ।
नैकट्येन गुणान् या दर्शयते सा मनोयात्रा ।।

[८९]

पूज्यान् संपूजयितुं तेषां वा दर्शनानि संप्राप्तुम् ।
मान्यसभाजनशीलैर्विधीयते तादृशी यात्रा ।।

[९०]

छात्राणां प्रत्यक्षज्ञानं वर्धयितुमद्येष्टा ।
शासनधनेन विहिता नानाविज्ञानवर्धिनी यात्रा ॥

[९१]

नानासभासु समितिषु काले सञ्जायमानासु ।
स्वीकृतसदस्यभावैः सम्पाद्या निश्चिता यात्रा ॥

[९२]

वैवश्यात्खलु येषां, स्थानान्तरणात् कृता काचित् ।
कष्टायैव भवति सा, वेतनभाजां नृणां यात्रा ॥

[९३]

अपरेषां केषांचित् सैवाऽऽराध्यत्वमागता याऽसौ ।
नानालाभविधात्री स्थानान्तरणे भवति यात्रा ॥

[९४]

प्राग्यत्राऽऽसीत् कठिना सञ्जाता तत्र सुखदेयम् ।
यानप्रचुराऽपि तथा शोभनमार्गैर्विभूषिता यात्रा ॥

[९५]

स्वातन्त्र्यानन्तरमथ देशेऽस्मिन् पर्यटनपूर्णा ।
नव्यावस्थालसिता सेयं सन्देहनाशिनी यात्रा ॥

[९६]

आबालवृद्धवनितासंसेवितसर्वसौभाग्या ।
प्रमुदितरचनापूर्णा भाग्यैः सा लभ्यते यात्रा ॥

[९७]

ग्रीष्मे शीतलदेशे सुखसञ्चारं करोति रोमाञ्चैः ।
शीते ग्रीष्मप्रचुरं देशं प्रापयति सद्यात्रा ॥

[९८]

विलिखितवृत्तान्तेष्वथ विपुलो यस्या विलोक्यते महिमा ।
हृदयविभासितसारा विपुलाधारा विलोक्यते यात्रा ॥

[९९]

सर्वा क्रिया न सुलभा भवतितरां सत्प्रयासैः स्वैः।
किन्तु समर्पितकाया सर्वा सुलभा भवति यात्रा॥

[१००]

देशेऽस्माकमियं या चुनावचर्चा समुच्छलिता।
नानाविधव्याख्याने नेतॄणां तत्र जायते यात्रा॥

[१०१]

शिवदत्तेनाऽप्यस्मिन् यात्राशतके स्तुताऽभीष्टा।
देवीरूपा सेयं तत्र कृपयेत् स्वयं यात्रा॥

१४३६+१०१=१५३७

काव्यप्रयोजनाध्ययनसर्गः

[१]
काव्यं शब्दार्थयोस्तावदन्यूनानतिरिक्तता ।
समस्तं वाङ्मयं काव्यं तस्मात्सुपरिचीयते ॥

[२]
यत्रैव रससंचारस्तत्काव्यमिति न क्षतिः ।
वाचां प्रसारमात्रे हि रससंचार इष्यते ॥

[३]
रसो नाम परं प्रेम रचनेऽध्ययनेऽपि वा ।
अज्ञानध्वान्तविध्वंसे प्रेमैव ननु कारणम् ॥

[४]
तेनैवाचार्यवर्याणां नानावाङ्मयनिर्मितिः ।
विनेये निश्छलं प्रेम तेन वाङ्मयकारणम् ॥

[५]
स एव रससंचारस्तेन सर्वस्य काव्यता ।
अतो नु कविशब्दस्य बुधपर्यायतेष्यते ॥

काव्यं यशसे—

[६]
काव्यं यशसां प्राप्ति, कारयतीत्यत्र नास्ति संशीतिः ।
काव्यानां निर्माता सर्वत्रैवानिवारितप्रसरः ॥

[७]
जीवनकाले सुयशस्तस्य विवृद्धिं परां भजते ।
यत्र नवा गच्छत्यपि तन्नाम नु तत्र तत्र संयाति ॥

[८]
नश्यच्छरीरमपरं विनिर्मितं पञ्चभिर्भूतैः ।
तदिदं यशःशरीरं नास्ति जरामरणसंयुक्तम् ॥

[९]

कविसूक्तिमणिप्रभया भासितमाभातिनिर्मलं विश्वम् ।
सर्वेऽपि वर्णनपरा ननु कवयोऽनन्तभेदेषु ॥

[१०]

यत् सुन्दरमथ येन तु मानवता सार्थका भवति ।
सर्वं तन्ननु काव्यं तस्यानन्दस्तु पात्रताऽधीनः ॥

[११]

काव्यं यशसेत्येतत्कथनेनैतत्समायाति ।
काव्यं विना न सुयशः कुत्राप्यासाद्यते जगति ॥

[१२]

येनैव यशः प्राप्तिः संजाता जायते नृणाम् ।
सर्वं वै तत्काव्यं तेन विना नास्ति कीर्तिलेशोऽपि ॥

[१३]

कविरेव यशोभाजनमित्येतत्सिद्धमेवास्ति ।
किन्तु न तावत्केवलमास्ते यशसां विरामोऽयम् ॥

[१४]

काव्ये येषां चर्चा तेषामपि यशोभागित्वम् ।
येषां निन्दा काव्ये ते निन्द्या इति कविवरेणोक्तम् ॥

[१५]

एवं काव्ये येषां वर्णनमाभाति निर्मलं रुचिरम् ।
तस्य यशोवर्धनमपि नूनं काव्येन संसिद्धम् ॥

[१६]

अत एव ननु कविवराः स्वाभीष्टस्यैव कीर्तिविस्तारे ।
मौनं दूरीकुर्वन्त्यथ च यशः ख्यापयन्ति ननु तस्य ॥

[१७]

काव्यानां संस्मर्ताऽपि च यशसां भाजनं भवति ।
सस्वरमुच्चारितमपि काव्यं यशसां समर्पकं नूनम् ॥

[१८]

नानाव्याख्यानेषु च काव्यानां यः समुल्लेखः ।
वक्ता च तेन विपुलं लाभं यशसां समश्नुते सम्यक् ॥

[१९]

ये वा टीकाकारा गूढार्थान् स्फोरयन्ति काव्यानाम् ।
तेऽपि यशो भाजनमिह जायते मल्लिनाथाद्याः ॥

[२०]

एवं सुयशो लाभो न केवलं जायते कवीन्द्राणाम् ।
काव्येन यशो लाभो व्यापक एवायमाभाति ॥

[२१]

अर्थकृते –

यच्चाप्यर्थकृते चेत्येतत्काव्यप्रयोजनमनूक्तम् ।
तत्सम्प्रति प्रत्यक्षं शुभ्रपुरस्काररूपेण ॥

[२२]

धावक धनसम्प्राप्तिर्नैवादर्शं क्वचिल्लभते ।
कथमीदृगुदाहरणं मम्मटवक्त्राद्विनिर्यातम् ॥

[२३]

प्रत्यक्षरलक्षानां दाने गाथाः सुविख्याताः ।
काव्ये यदि प्रसन्नास्तश्वराः किं न वा दद्युः ॥

[२४]

अधुनात्वस्मद्देशे धनसम्प्राप्तिस्तथा न परिदृष्टा ।
वैदेशिकाः कविवरा विपुलं धनमर्जयन्ति काव्येन ॥

[२५]

काव्येनैव धनानां लाभात् सुतरां रवीन्द्रनाथः सः ।
शान्तिनिकेतननाम्ना विश्वं विद्यालयं व्यतनोत् ॥

[२६]

हिन्दीभाषासुकविर्बिहारिवर्यस्तु काव्येन ।
श्रीजयसिंहान् नृमणेर्विपुलं धनसंग्रहं कृतवान् ॥

[२७]

भूषणनामा सुकविः शिववीरं वर्णयन्दिव्यम् ।
सर्वविधमर्थलाभं स्वीकृतवान् वीररसकाव्यैः ॥

[२८]

चलचित्रात्मकरूपेणेदं दृश्यं तु यत्काव्यम् ।
तन्निर्मात्रद्यत्वे विपुलाऽर्थोपार्जने निरतः ॥

[२९]

पूर्वं नासीन्मुद्रणकलाविलासो यथाऽद्यत्वे ।
काचिद् धनसंप्राप्तिः प्रकाशकाद्यैरथापि संदृष्टा ॥

[३०]

यद्यपि सुवित्तलाभे भाग्यं सामान्यकरणीभूतम् ।
तेन विना कणमात्रं न लभ्यते पुण्यशालिना चापि ॥

[३१]

पुनरपि काव्यानां या सम्पत्तेर्दातृता समुद्पुष्टा ।
सापि समर्थनयोग्या सहस्रशो वा निदर्शनैः सम्यक् ॥

[३२]

रामचरितमानसमिदमाधारीकृत्य लाभेषु ।
यतमानानामग्रे तुच्छान्यन्यानि कर्माणि ॥

[३३]

इत्थं तावत्सिद्धं वित्तं सम्प्राप्यते काव्यात् ।
वित्तं मानवजीवनवृक्षे पुष्पं फलं वापि ॥

व्यवहारविदे—

[३४]

व्यवहारज्ञानाय च काव्याध्ययनं सदा कार्यम् ।
काव्यं निर्मातव्यं यदा तदा व्यावहारिकं ज्ञानम् ॥

[३५]

परमावश्यकतरमिति कविरपि तत्राऽसमं यतते ।
परमस्तेन स लाभः कवेरपि ज्ञानतादात्म्यात् ॥

[३६]

व्यवहारं नामेदं परमा काचित्कला पुंसाम् ।
वश्यं भवति नितान्तं तत्कृपया वा जगत्सर्वम् ।।

[३७]

यदि नास्ति व्यवहारज्ञानं किं वा कदा कार्यम् ।
नूनं तदा तु महतीमापत्तिं बुधवरोऽपि संयाति ।।

[३८]

पठितानामपि येषां मूर्खत्वं पञ्चातन्त्रादौ ।
वर्णितमस्ति तदेतद् व्यवहारस्यैव वैकल्यात् ।।

[३९]

काव्याऽध्ययनेनैव च नानाव्यवहारनैपुण्यम् ।
संजायते समासात् तस्मात् काव्यं सदाऽऽराध्यम् ।।

[४०]

भिन्नानां देशानां वर्णनसरणौ प्रवृत्तायाम् ।
कविना ते व्यवहारास्तद्देशीया मनसि धार्याः ।।

[४१]

अद्यत्वे व्यवहारे प्रयुज्यते सभ्यता शब्दः ।
का सभ्यता कदासीत्कुत्र च काव्याद्विनिर्णेयम् ।।

[४२]

औचित्यं कर्मसु यत् सा व्यवहारस्थितिः पुंसाम् ।
देशे काले पात्रे विचारधारा परोपनिषत् ।।

[४३]

आद्यालौकिकताया आरोपः संस्कृते विदुषि ।
व्यवहारज्ञानानामभाव एवास्ति कारणं तत्र ।।

[४४]

तद् व्यवहारज्ञानं काव्यानां शीलनेन विना ।
नैव कदाचिल्लभ्यं तस्मादेतत् प्रयोजनं काव्ये ।।

शिवेतरक्षतये—

[४५]

अशिवक्षयस्तु नूनं काव्यात् संजायते नितराम् ।
कविसहृदययोरेतत्समानमेव प्रयोजनं भवति ॥

[४६]

रोगैर्वा पापैर्वा नानासंस्कारजालैर्वा ।
कल्याणेतरयोगो विषमतरो जायते पुंसाम् ॥

[४७]

सर्वविधकर्मसिद्धौ जीवनकाले सदा सुधियाम् ।
अशिवः सोऽयं नितरां प्रतिबन्धक एव विद्यते विपुलः ॥

[४८]

प्रतिबन्धकसद्भावे कारणसामग्र्यभावेऽपि ।
कार्यं नोदयमासादयते तदा समभिशप्तम् ॥

[४९]

तस्मात् कार्यसमृद्ध्यै नितरां प्रतिबन्धकः सोऽयम् ।
अशिवो दूरीकार्यः काव्यं तेनैव चाराध्यम् ॥

[५०]

सूर्यशतकनिर्माता बाणश्यालो मयूरकविः ।
कुष्ठेनाशिवरोगेणाक्रान्तो मुक्तिमालेभे ॥

[५१]

जगदीश्वरभक्तौ यत् विपुलतरं स्तोत्रसाहित्यम् ।
एतत्त्वशिवनिकुञ्जे कुठाररूपं समाभाति ॥

[५२]

पण्डितराजेन तु या गङ्गालहरी विनिर्मिता सद्यः ।
भागीरथीप्रसादादशिवं सर्वं विलीनमथ तस्य ॥

[५३]

दिव्यस्तुलसीदासः काव्यैः स्वीयैरलं विमलैः ।
राघवयशसां गानैर्नाशितवानशिवजालं स्वम् ॥

[५४]

काले काले कविभिस्तानि स्तोत्राणि रचितानि ।
भक्तिभरैर्यत्पाठैरद्याप्यशिवं पलायते दूरात् ।।

[५५]

तस्मादशिवविनाशे काव्यानां जागरूकत्वम् ।
अनुभवशतैः प्रसिद्धं सर्वैरेवोपकारकं स्मृयते ।।

सद्यः परनिर्वृतये—

[५६]

सद्यः परनिर्वृतता वेद्यान्तरशून्यताथवा सद्यः ।
काव्यास्वादेन यथा न तथान्येनाथ केनापि ।।

[५७]

साधारणीयकरणमथ व्यापारादि प्रवर्तते तत्र ।
येन च परमानन्दः सद्यश्चेतसि समुद्भवति ।।

[५८]

आधुनिकैस्तु समालोचकमूर्धन्यैरादितः सेयम् ।
पारस्परिकी धारा व्याख्याता नवनिबन्धेषु ।।

[५९]

मानपोऽध्ययनप्रक्रमसंलग्नाश्चाथ विद्वांसः ।
नानाविधैर्विचित्रैश्चित्रैस्तद्विवरणे दक्षाः ।।

[६०]

आदिकविर्वाल्मीकिर्भासः श्रीकालिदासो वा ।
शतशोऽथ कविवरेण्याः सद्यः परनिर्वृतिं दद्युः ।।

[६१]

काव्यानां निर्माता रचनाकालेऽथ यां लभते ।
तत्पाठकाः सहृदयाः दर्शनकाले च दर्शकाः सर्वे ।।

[६२]

इयमेव विस्मृतिः सा सर्वस्यैवार्थजातस्य ।
नानादुःखमयस्य च निखिलस्यापि प्रपञ्चस्य ।।

[६३]

काव्याध्ययने योऽयं सद्यो लाभः समुद्भवति ।
निखिलेऽस्मिन् संसारे नैवासौ प्राप्यतेऽन्येन ॥

[६४]

अन्यैरथाप्युपायैः सद्यश्चानन्दसंप्राप्तिः ।
र्या वा समुपलब्धा क्लेशस्याप्यत्र संवेशः ॥

[६५]

आनन्दोऽप्यथ नितरां स्वल्पाकारे समुद्भूतः ।
नैव मनोज्ञां काष्ठामारूढो वा समाभाति ॥

[६६]

काव्यद्वारा योऽसावानन्दोऽन्तः समुद्भवति ।
तन्मात्रावैपुल्यं परशब्दः संप्रकाशयति ॥

[६७]

क्लेशावेशः सोऽयं यस्मात्संत्यज्यते दूरे ।
परशब्दोऽयं तादृशमप्यर्थं संविभासयति ॥

[६८]

बीभत्से रौद्रे वा करुणे शान्ते रसानुभवे ।
रसाः सद्यः परमानन्दः संविद्रूपश्च केवलस्तिष्ठेत् ॥

[६९]

लोकैर्यद्यपि दुखं दृष्ट्वा संजायते यैर्वा ।
तैरेव काव्यबन्धव्यवस्थितैः परसुखानुभवः ॥

[७०]

तस्मात्सद्यः परमा निर्वृतिरेषा यया काव्यम् ।
बुद्धौ मनसि विचारे लोकानावर्जयति नित्यम् ॥

कान्तासम्मितयोपदेशयुजे—

[७१]

कान्तासमम्मितताया उपदेशेष्वस्ति साम्राज्यम् ।
तत्सर्वसुन्दरं वा प्रयोजनं काव्यजातस्य ॥

[७२]

अन्यविधा उपदेशा प्रभुसम्मिता मित्रसम्मिता वापि ।
यत्र च गतप्रभावाः काव्यं तत्रापि जागर्ति ॥

[७३]

यत्र च गुरूपदेशाः कर्णे तप्ता विशन्ति नो रुचिराः ।
मित्राणामुपदेशा गलहस्तिततामुपागताः सन्ति ॥

[७४]

तादृशविनेयसंघेऽप्यासादितवैभवं काव्यम् ।
मत्तेभेन्द्रं करिणी यथा वशे सर्वमानयति ॥

[७५]

कटुतिक्तौषधरूपं काव्यादतिरिक्तवाङ्मयं निखिलम् ।
सितशर्करासदृशमथ काव्यं रोगं विदूरयति सद्यः ॥

[७६]

इदं प्रयोजनषट्कं प्रस्थापितमार्यमम्मटेनादौ ।
काव्यप्रकाशग्रन्थे तस्याऽध्ययनं मया विहितम् ॥

ऐक्यम्—

[७७]

ऐक्यम् नाम रसायनमस्तीदं जीवने पुंसाम् ।
तदिदं जडेऽपि चेतनापुञ्जेऽप्याभाति तत्त्वतो नूनम् ॥

[७८]

भेदेऽनन्ते जाग्रति तत्राऽभेदो विचारमायातः ।
संदृश्यते तु नानादर्शनशास्त्रस्य ग्रन्थरत्नेषु ॥

[७९]

नानाविधे समाजे नानापुरुषेषु देशेषु ।
भावमये संसारे सर्वत्रैक्यं समुल्लसति ॥

[८०]

मानवमात्रे याऽसौ भावानां परिणतिर्दृष्टा ।
तत्रैवैक्यास्वादं प्रवर्तयति काव्यधारेयम् ॥

[८१]

याऽद्यत्वे मम मानसपटले संजायते स्वतः स्फूर्तिः।
पश्चादध्ययने सा वाल्मीकेर्वाचि संदृष्टा ॥

[८२]

अन्योन्योऽपि विचारो यदा तदा मानसे स्वयं भातः।
कविकुलगुरुरपि काव्ये स्वीये प्राहेति नीयते पश्चात् ॥

[८३]

भावानां संवादः सोऽयं नितरां मनस्यैक्यम्।
संस्फोरयति नितान्तं तेन च सुषमा समुन्मेषः ॥

[८४]

जागरणम्—

युद्धोन्मेषे काव्यं सैनिकहृदयेषु यां परिस्फूर्तिम्।
सूते तेन च योद्धा करालकालः समाभाति ॥

[८५]

मानवमात्रे नूनं प्रसुप्तभावे स्थिता शक्तिः।
तज्जागरणायाऽपि च कव्यस्याराधना क्रियते ॥

[८६]

पण्डितराजः—

काव्यप्रयोजनानि तु साकल्येन क्व गण्यानि।
पण्डितराजोऽनेकप्रयोजनकमादिदेश तथा ॥

[८७]

श्रृंगग्राहिकयैव च वर्णनमास्तेऽथ मम्मटार्यस्य।
साकल्येन तु गणने का शक्तिर्वास्ति कस्यापि ॥

[८८]

अयमपि व्याख्यानेषु स्फुटं भ्रमे एव संचारः।
यत् काव्यमिदं केवलमास्ते सुकुमारमतियोग्यम् ॥

[८९]

प्रौढात्प्रौढमतीनां छात्रत्वं काव्यविषये स्यात्।
दुर्दान्तोऽपि च सिंहः सिंहीचाटुत्वमालभते ॥

[९०]

केवलवाच्यार्थे ये मनुजाः केचित्प्रगल्भन्ते ।
ते व्याकरणपुराणादीनामधिकारिणो ज्ञेयाः ॥

[९१]

औदार्यम्--

औदार्यपरिस्फुरणं मन्वे काव्यस्य सम्पदा प्राप्यम् ।
माघसदृक्षाः कवयो वदान्यतायां न तुलनीयाः ॥

[९२]

श्रीमान् स सूर्यकान्तस्त्रिपाठिवर्यो निरालाख्यः ।
स्वीयौदार्यस्य कृते नितरां विख्यात एवासीत् ॥

[९३]

स्फूर्तिः--

काव्यानामध्ययनादवाप्यते कापि संस्फूर्तिः ।
यस्याः प्रभया नूनं जीवनमेतत्समृद्धिमाप्नोति ॥

[९४]

विपुलता--

यद्वा वर्ण्यं लोके स्तोके रूपे निभाल्यते लोकैः ।
तदनल्पकल्पनायामानन्त्यं नीयते कविभिः ॥

[९५]

वर्ण्ये वैपुल्यत्वापादनमपि काव्यशीलनाल्लभ्यम् ।
वाणीनां संसारः सारो वा जीवने विमलः ॥

[९६]

आत्मलाभः--

यो वा को वा लोके कविरूपं स्वात्मसंस्थितं द्रष्टुम् ।
कामयते नु तदर्थं सद्यः काव्यं समाराध्यम् ॥

[९७]

सत्यं शिवं सुन्दरम्—

जडचेतनसंसारे सत्यं शिवसुन्दरं द्रष्टुम् ।
काव्यादन्यन्नैवावलोक्यते कारणीभूतम् ॥

[९८]

प्रचारः—

नानासिद्धान्तानां प्रचारकार्यं यथा काव्यात् ।
संजायते समस्तं तेन च काव्यं समाराध्यम् ॥

[९९]

पार्यन्तिकं प्रयोजनमिदमप्यास्ते यथाऽन्येषाम् ।
पाठ्ये निर्धारणमपि कक्षासंघटनमेवापि ॥

[१००]

कविकुलगुरुरपि शास्त्रिस्तरतोऽग्रे नैव संयाति ।
प्रत्यक्षरसंश्लिष्टान्याचार्यार्थे गवेष्यन्ते ॥

[१०१]

इति निगदितमेतदत्युदारैरथ च बृहस्पतितुल्यबुद्धिमद्भिः ।
परमसहृदयैर्भवद्भिरार्यैस्त्रुटय इह कृपया विलोपनीयाः ॥

१५३७ + १०१ = १६३८

: २० :

काव्यकारणसर्गः

[१]

शक्तिस्तथा निपुणता पुनरप्यभ्यास इत्येते ।
एकीभूय नितान्तं काव्यानां कारणीभूताः ॥

[२]

एतेषां कारणता तृणारणिमणिन्यायतो नैव ।
सा दण्डचक्रचीवरन्यायेनैवेष्यते काक्रे ॥

[३]

कार्यस्यैकस्य यदा बहुकारणता प्रजायते नूनम् ।
तत्र द्वयी स्थितिर्वा भवति नितान्तं विचारार्हा ॥

[४]

बहवश्चाथ मिलित्वा कार्यस्योत्पादनं कुर्युः ।
घटरूपे कार्यके दण्डो चक्रश्च चीवरो हेतुः ॥

[५]

कारणताऽनेकत्र स्वातन्त्र्येण स्थिता यत्र ।
एकैकमपि तु कारणमास्ते कार्याय पर्याप्तम् ॥

[६]

कार्योऽग्निस्तस्य यदोत्पत्तिरभीष्टा तदा तृणं दग्ध्वा ।
मणिमथवा तु गृहीत्वा काष्ठे मन्थनमथापि वा कृत्वा ॥

[७]

काव्यं प्रति कारणता शक्तौ चाऽभ्यासनैपुण्ये ।
एकीभूयैवेष्टा दण्डादीनां घटस्येत ॥

[८]

शक्तिः सा या काव्ये प्रथमं कारणमिहाम्नातम् ।
तां तु विना नहि काव्यं प्रसरेत्प्रसृतं तु समुपहसनीयम् ॥

[९]

केयं शक्तिः कथिता तदुत्तरं स्यात्तु शिष्टानाम् ।
काव्यानुकूलशब्दाऽर्थोपस्थितिरेव सा शक्तिः ॥

[१०]

काव्यं भावचरित्रं सौन्दर्यं यत्र संस्फुरति ।
शब्दार्थमयी शय्या यस्येयं भावजातस्य ॥

[११]

भावानां संसारे विमले शब्दा न सन्ति सुस्पष्टाः ।
भावानां सा धारा सततं प्रवहतितरां विनायासम् ॥

[१२]

मध्यमपदाभिधेया पश्यन्ती वाऽथ तत्रेष्टा ।
अन्ये ते स्युः शब्दा न स्युता वैखरी रूपाः ॥

[१३]

सेयं धारा सततं सर्वत्रैवाथ चेतने जगति ।
प्रवहति नित्यं नो वा तस्याः किञ्चिद् बहिर्भूतम् ॥

[१४]

स्थूले शब्दार्थमये संसारे ये प्रवीणाः स्युः ।
भावमस्य तु लोकस्यैते त्ववतारणे दक्षाः ॥

[१५]

कोशेष्वथ ये शब्दाः येष्वर्थेष्वत्र संदृष्टाः ।
काव्ये त एव शब्दा विलक्षणेष्वर्थसार्थेषु ॥

[१६]

ते ननु लक्ष्यार्था वा व्यंग्यार्था वाऽनुमेया वा ।
तेषां समर्पकत्वं शक्तिर्नामेष्यते वक्तुम् ॥

[१७]

वाच्यार्थस्य तु केवलमाचारे तत्पुराणं स्यात् ।
बुद्धिगतं तत्सर्वं हृद्देशे संस्थितं काव्यम् ॥

[१८]

अभिधावृत्तिरपीयं शक्तिः कथिता प्रसंगेषु ।
कारणपरिगणनायां सा शक्तिर्नात्र संग्राह्या ।।

[१९]

शब्दार्थयोरुपस्थितिरीहक्कथिता तु काव्येऽस्मिन् ।
सूक्ष्मतमैरपि भेदैः शब्दार्था यत्र दृष्टाः स्युः ।।

[२०]

वाचकवाच्यविवेके यदि विकलः कोऽपि किं विरचयेत्स ।
रचनामात्रे विकलः काव्यं तस्मात्सुदूरतरम् ।।

[२१]

रचनान्तरेण भिन्नं काव्यं स्वीकार्यमेव स्यात् ।
तत्र च नूनं शक्तिः काऽपि विचित्रैव वक्तव्या ।।

[२२]

शब्दार्थोपस्थितिरिति या शक्तिः कथ्यते हेतुः ।
काव्यानुकूलतापि तु विशेषणीभूय जागर्ति ।।

[२३]

केयं स्थितिरिति सद्यो या जिज्ञासा प्रजागर्ति ।
तत्प्रशमनाय मन्ये त्रिविधोऽप्यर्थस्य सङ्घातः ।।

[२४]

स्फुरतितरां चेतसि चेत् तद्बोधकशब्दसार्थोऽपि ।
सा स्थितिरस्ति समस्ता काव्यानां कारणीभूता ।।

[२५]

केवलकोशज्ञानं व्याकरणज्ञानमेवापि ।
वाचकवाच्ये निरतं नतरां काव्यस्य हेतुः स्यात् ।।

[२६]

येयं तथा निपुणता दिष्टा काव्यस्य कारणीभूता ।
तस्यां बहु वक्तव्यं स्मर्तव्यं वाऽस्ति सन्धार्यम् ।।

[२७]

लोकावेक्षणतः सा शास्त्राणां चिन्तनेनापि ।
काव्यानामास्वादैर्नूनं सम्प्राप्यते कविभिः ॥

[२८]

नैपुण्यं लोकान्तं जडचेतनतामयानां यत् ।
वृत्तस्य चित्ररूपस्यालोकनपरिचयाज्जातम् ॥

[२९]

तद्वै निर्मलरूपं काव्योत्पत्तौ तु कारणीभूतम् ।
लोकानां व्यवहारज्ञानाऽभावे कुतः काव्यम् ॥

[३०]

दर्पणमथ साहित्यं भवति समाजस्य या प्रसिद्धिः सा ।
लोकानां व्यवहारे नैपुण्यत्वस्य कारणाधीना ॥

[३१]

लोकानां व्यवहारे जडचेतनता परिव्याप्ते ।
यद्यद्वर्णनमुचितं सैषा काव्ये परोपनिषद् ॥

[३२]

लोकावेक्षणनिपुणः कविर्यदा वर्णनं तनुते ।
लोकाय मानसेऽसौ तदा स्वयं चित्रितो भवति ॥

[३३]

अद्य तु केवलमिदमप्याधारीकृत्य रचनासु ।
धारा कापि प्रवृत्ताऽन्दोलनरूपेण जागर्ति ॥

[३४]

कान्तासम्मितताया उपदेशे यत्प्रयोजनमनूक्तम् ।
तत्तु सहैवालोचनमेतादृक् सम्प्रपूरयति ॥

काव्यप्र.
६.

[३५]

यदि कविरेव न लोके सूक्ष्मतरे दृश्यजाते वा ।
प्रविशति तद्वै काव्यं नतरां संप्रेषकं भवति ॥

[३६]

लोकचरित्रावेक्षणमात्रं नहि काव्यकारणं भूयात् ।
अपि तु स्वीयाऽनुभवे सर्वस्यैतस्य साफल्यम् ॥

[३७]

पूर्वं लोको नासीत्तथा विचित्रो यथाऽद्यत्वे ।
विज्ञानस्य नितान्तं वैशिष्ट्यं तत्र जागर्ति ॥

[३८]

तत्रापि च मानसिकं विज्ञानं ख्यातिमापन्नम् ।
रचनाकाले कविभिर्नूनं सर्वत्र चाद्रियते ॥

[३९]

लोकः पूर्वं घटितो वर्णाश्रमनामिकासु संस्थासु ।
राजा चासीन्नियतो प्रतिराज्यं मन्त्रिणश्चैव ॥

[४०]

वैदेशिकयुद्धानामासीत्तत्रापि विप्लवो विपुलः ।
रोमाञ्चकघटनानामियमासीत्प्रेरणाभूमिः ॥

[४१]

भारतवर्षे निखिले तदनु समासीद् ब्रिटेनसाम्राज्यम् ।
सर्वा समृद्धिरतुला पारं गमिता समुद्रस्य ॥

[४२]

देशोऽयं दारिद्र्ये निमज्जितो गौरदेशीयैः ।
तैः सह संघर्षे वा स्वातन्त्र्यं चापि सम्प्राप्तम् ॥

[४३]

कालेऽस्मिन् विज्ञानं यन्त्रमयं पश्चिमे समुत्पन्नम् ।
निखिलं विश्वं स्वीयैरथ यानैर्यन्त्रसार्थैश्च ॥

[४४]

परमसमीपं कुरुते नो दूरे किञ्चिदत्रास्ति ।
धनवैपुल्यं तस्य च वैकल्यं दूरतां कुरुते ॥

[४५]

ये वै धनिनो लोकास्तेषां वा करगतं सर्वम् ।
ये लोका धनविकलास्तेऽद्य तु नहि लाभसंयुक्ताः ।।

[४६]

इयमार्थिकी विषमता व्याप्ता लोके यदाश्रयेणैव ।
काव्यं प्रेरितमास्ते कतिपयदशकेभ्य एवेदम् ।।

[४७]

यत्र तदेतत्सर्वं लोके वृत्तं सुचर्चितं जातम् ।
तद्धि जीवितकाव्यं भिन्नं निश्चेतनमकाव्यम् ।।

[४८]

सामाजिकसम्बन्धा ये चाप्यादर्शसंस्थिता पूर्वम् ।
तेऽद्य यथार्थे दृष्टा विपरीता एव सर्वेऽपि ।।

[४९]

ईदृशलोकाऽवेक्षणसंयुक्तं चैव वा काव्यम् ।
संकल्पितं यदि स्यात् सद्यस्तत् सुप्रसिद्धं स्यात् ।।

[५०]

शास्त्रावेक्षणात् नैपुण्यम्

नैपुण्यं शास्त्राणामवेक्षणेनापि चासाद्यम् ।
शास्त्राण्यपि चाद्यत्वे नूतनान्येव प्रभावयुक्तानि ।।

[५१]

इतिहासोऽर्थे शास्त्रं विख्यातं राजनीतिमयशास्त्रम् ।
सामाजिकमपि शास्त्रं पुरातनानां पुराशास्त्रम् ।।

[५२]

विज्ञानस्य तु नानाधाराणां वा पृथक्-पृथक् शास्त्रम् ।
सर्वं चैतच्छास्त्रं काले काले समायोज्यम् ।।

[५३]

प्राचीनानि तु शास्त्राण्याद्याभ्यादेशभूतानि ।
तान्याधारीकृत्य त्वेतान्यद्यैव लसितानि ।।

[५४]

काव्याद्यवेक्षणात् नैपुण्यम्

काव्याद्यवेक्षणेष्वपि नैपुण्यं काव्यकारणीभूतम् ।
तत्तु समन्ताल्लभ्यं विभिन्नपत्रेषु पुस्तकेष्वपि च ॥

[५५]

काव्यज्ञशिक्षयाऽभ्यासः

अभ्यासोऽपि च योऽयं प्रथितः काव्यज्ञशिक्षया कथितः ।
तस्योपयोगितायां नास्ति विसंवादलेशोऽपि ॥

[५६]

रचनाकर्मारम्भे यद्वा तद्वा कविर्लिखति ।
प्रौढानां च समीपे स्थित्वा तन्मार्जनं कुरुते ॥

[५७]

आलोचना च विविधा गोष्ठी मध्येऽद्य या भवति ।
तत्राऽप्यभ्यासोऽयं दृढतां स याति कविवरेण्यानाम् ॥

[५८]

पूर्वं व्याख्यालेखनकर्मण्यभ्यास आसाद्यः ।
अर्थानां शब्दानां वैपुल्यं तत्र करगतं जातम् ॥

[५९]

आधुनिके काले सा पद्धतिरपि नूतने रूपे ।
नानानिबन्धरचने विलोक्यते विपुलतां प्राप्ता ॥

[६०]

अद्य तु व्याख्यालेखनमास्ते वा द्वितीयकोटिगतम् ।
काव्यानामध्ययनं स्वातन्त्र्येण प्रथमकोटौ स्यात् ॥

[६१]

अध्ययनलिखनमेतत् काव्यालंकारदृष्ट्या वा ।
रसदृष्ट्या वा संस्कृतिगवेषणादृष्टिरथवा स्यात् ॥

[६२]

नानारूपाऽध्ययनं काव्यानां जायतेऽद्यत्वे ।
ज्ञाने गाम्भीर्यं स्यादेतेनाध्ययनजातेन ॥

[६३]

काव्येभ्यः शिक्षासंप्राप्या तावदेतैर्हि ।
रचयित्वा वा काव्यं काव्यज्ञानां पुरो निधेयं स्यात् ॥

[६४]

नूतनकाव्यानां या कापि समालोचना क्रियते ।
तेनाऽपि त्वभ्यासे सौकर्यं कविवरस्यैव ॥

[६५]

त्रितयं समुदितमेतत् कारणमास्तेऽथ काव्यरचनासु ।
मम्मटमतेन तदिदं वर्णनमास्ते समारब्धम् ॥

[६६]

प्रतिभा

पण्डितराजस्त्वेकां प्रतिभां तत्कारणत्वेन ।
कथयति तस्या कारणमास्तां व्युत्पत्तिरभ्यासः ॥

[६७]

नैपुण्यं व्युत्पत्तिः शक्तिः प्रतिभा तथा कथिता ।
व्युत्पत्तिश्चाऽभ्यासप्रतिभायां कारणीभूतौ ॥

[६८]

काव्यं प्रति यत् साक्षात् कारणमास्तेऽथ सा प्रतिभा ।
वक्तुगभीष्टस्योक्तौ शब्दार्थानामुपस्थितिः सा तु ॥

[६९]

तस्यावाप्तिर्दैवाराधनो-देवता तुष्टौ ।
वरदानेनापि परा दृष्टा सर्वाऽनिवारितप्रसरा ॥

[७०]

तस्याः परमवरोधो विरोधयोगेन संदृष्टः ।
अथ तद् विरोधनिगमे पुनरपि तस्याः समुन्मेषः ॥

[७१]

प्रतिबन्धकविरहोऽपि च सर्वत्रैवास्ति कारणीभूतः ।
प्रतिबन्धकसद्भावे निखिलं कारणमकिञ्चित् स्यात् ॥

[७२]

संस्कारः

प्रतिभा कारणभूता वास्तां व्युत्पत्तिरभ्यासः ।
संस्कारोऽपि च नूनं जन्मनि-जन्मनि सुसंसिद्धः ॥

[७३]

सौन्दर्यवितरणम्

सौन्दर्यानुभवो ननु सुन्दरप्रकृतेरनन्तरूपाणाम् ।
अनुभवं सुखस्य नूनं वितरणदीक्षासमुन्मेषः ॥

[७४]

सुखमानवसंसारे यथा सुखं लभ्यते यया नित्यम् ।
तस्य सुखस्य विलासः सुतरामन्येष्वपि समन्तात् स्यात् ॥

[७५]

सेयमभीप्सा सुकवेः काव्ये कारणमयीं भित्तिम् ।
निर्माति नूनमसमा यत्रास्तेऽजस्रधाराऽपि ॥

[७६]

स्वीयेष्टदेवकरुणा सर्वेष्टान्येषु संप्रसरेत् ॥
सैषा काऽपि मनीषा स्तोत्रामृतनिर्झरे हेतुः ॥

[७७]

जीवनजटिलसमस्या स्वीयं चान्तं यथाऽत्र पश्येयुः ।
ते ते नूनमुपायाः कान्तासम्मिततया देयाः ॥

[७८]

अनुभवसम्मर्दोऽयं कविहृदये यः प्रजागर्ति ।
सोऽपि च कारणभूतो नानाकाव्यात्मनिर्माणे ॥

[७९]

अभिनवविचारसरणिर्यदा कवेर्मानसे स्फुरति ।
लाभो भवतु नितान्तं तस्याः सर्वेऽभ्य एवाऽसौ ॥

[८०]

काव्यात्मिकां सरणिमथ क्रोडीकृत्यैव सा रचना ।
निखिलं सहृदयवर्गं चमत्कृतं सद्य आतनुते ॥

[८१]

एतत्सर्वं प्रतिभा प्रभाप्रभावे सुसंनिहितम् ।
तेन प्रतिभा काव्ये कारणमिति नास्ति सन्देहः ॥

[८२]

तन्त्रशास्त्रे प्रतिभादर्शनम्

प्रतिभापदार्थचित्रणवैशद्ये तन्त्रशास्त्रस्य ।
विवरणमस्ति महीयो गुरुरूपं तत्र बिन्दुनादमयम् ॥

[८३]

शक्तिर्निपुणताऽभ्यास-त्रितये कारणतयाऽख्याते ।
नो वा कश्चन भेदः कथनीयो वाऽनुभवसिद्धः ॥

[८४]

शक्तिः प्रतिभारूपा तत्कारणता तथाऽग्रिमे द्वितये ।
समुदितमेतत्तु सदा काव्ये कारणमभीष्टं नः ॥

[८५]

नूनं तदा विरोधः सम्प्रसरेद् गणनवेलायाम् ।
स्वातन्त्र्येणैवैते हेतव इति व्याकृता चेत्स्युः ॥

[८६]

काव्यस्य कारणं यद् वर्णितमस्त्यार्यवर्यैर्वा ।
काव्यप्रवृत्तिभाजां शिक्षणमेतेन विज्ञेयम् ॥

[८७]

कार्यं सम्पादयितुं कारणमादेयमेव स्यात् ।
वह्निं प्राप्तुं नियतं शलाकिका गृह्यते सद्यः ॥

[८८]

काव्यं यदि रचनीयं तस्मै प्रतिभा समादेया ।
तां चादातुं नियतं नैपुण्यं चैव संग्राह्यम् ॥

[८९]

तत्राऽभ्यासः सुतरां स्वीकार्यः कार्यसिद्धयर्थम् ।
सेयं सर्वोपनिषत् स्वीकार्या रम्यसंसारे ॥

[९०]

तेनैव काव्यधारा प्रवाहिता स्यादसंरुद्धा ।
पुनः पुनर्या वृत्तिः सैवाऽभ्यासस्य रूपमास्थेयम् ।।

[९१]

लोकचरित्राऽध्ययने सेवायाः सावकाशत्वम् ।
दूरीकर्तुमशक्यं प्रत्यक्षं तत्र निखिलं स्यात् ।।

[९२]

कारणसामग्रीयं विपुलतरा जायते यस्मात् ।
तस्माद् भारः सुकवेः शिरसि महीयान् समायाति ।।

[९३]

कारणभेदयुगं यदुपादाननिमित्तभेदतो दृष्टम् ।
त्रितयं तत्रैतद्वोपादानं कारणं भवति ।।

[९४]

दण्डादयो घटादौ नोपादाना निमित्तता तेषाम् ।
यदुदाहरणमुपात्तं तन्मिलितत्त्वे तु केवलं ग्राह्यम् ।।

[९५]

लोकस्य तु रूपाणामानन्त्यं चास्ति प्रत्यक्षम् ।
तत्र च परिवर्तनमपि प्रत्यक्षं दृश्यमेवैतत् ।।

[९६]

युगे युगे लोकोऽयं स्थावरजङ्गम-मयोऽन्य एव स्यात् ।
तत्रेक्षणे निपुणता नो सामान्या विना क्लेशम् ।।

[९७]

तत्राप्यद्भुतरूपं समाजसार्थस्य दृश्यते परितः ।
विविधास्तत्र समस्याः समये समये समुद्भूताः ।।

[९८]

तासां सूक्ष्मसमीक्षा, समये समये विधेयैव ।
नैपुण्यं लोकानामवेक्षणे वा तदैव स्यात् ।।

[९९]

एतन्नितरां सोऽयं, समाजसूक्ष्मेक्षणे निपुणः ।
कविरेव काव्यसृष्टौ, निपुणः संजायते शश्वत् ॥

[१००]

लोको यद्यपि स्थावरजंगमरूपः समुद्घुष्टः ।
प्रकृतेर्नवा विलासा, कवितायाः रम्यशृंगाराः ॥

[१०१]

तेषां सर्वो भावः प्रभावशीलो मनोमये जगति ।
अत एव लोकवीक्षणमेतन्मानवचरित्राणाम् ॥

[१०२]

यदि केषामपि शक्तिर्नैवास्ते सुप्रसिद्धभाषासु ।
वक्तुं वा लिखितुं वा, ते रचयन्ति स्वभाषायाम् ॥

[१०३]

बह्वयस्तादृशरचना, नो लिख्यन्ते तु कुत्रापि ।
कण्ठस्थीकृतरूपा, विलासमायान्ति माधुर्ये ॥

[१०४]

एतद् विपुलं रूपं, काव्यानां भवति विख्यातम् ।
शक्तिं स्वीयां रमयत्यभ्यासे वा सदैव कविः ॥

[१०५]

यमक

कवितां वनितां कोमलकलाकलापैः समुल्लसिताम् ।
आराधयितुं साधनसम्पत्तिर्दर्शिता सेयम् ॥

[१०६]

इदमतिशयरमणीयं, काव्यामृतमादरात् पिबतः ।
पुरुषस्य तु सौभाग्यं, शक्रो वा किं विजानीयात् ॥

१६३८ + १०६ = १७४४

: २१ :

शोधसर्गः

[१]

परमनिगूढं तत्त्वं स्पष्टं कुरुते परैर्यत्नैः ।
कालात् पुरातनादेवाऽचार्यैराहृतः शोधः ॥

[२]

टीकाभाष्यविरचनेष्वाचार्यैर्यः समादृतः पूर्वम् ।
शब्देष्वर्थेष्वपि वा सर्वैरावश्यकः शोधः ॥

[३]

वाग्व्यवहारवशीकृत लोकत्रयसंविधानानाम् ।
कविवर्याणां रचनावलिमध्ये दीप्यते शोधः ॥

[४]

मलिनेऽस्मिन् परिवेशे निस्तेजं जायते ज्योतिः ।
मालिन्यमपाकर्तुं विज्ञैराराध्यते शोधः ॥

[५]

वैज्ञानिकविद्यानां यन्त्राधारे प्रवर्तमानानाम् ।
नानापदार्थ रचना रहस्यमुद्भावयति शोधः ॥

[६]

अनुभवसंवलितानां शुभ्रसफलता विवरणानाम् ।
मार्गोद्घाटननिपुणो विश्वस्मिम् राजते शोधः ॥

[७]

विस्मारयति नितान्तं परिवेशं सेवमानोऽसौ ।
जीवननवसाफल्यं करतलगतमादिशति शोधः ।

[८]

मानवसमाजमध्ये विद्यन्ते ये चमत्काराः ॥
सर्वेषामपि तेषां नूनं निष्पादकः शोधः ।

[९]

कालान्धकारपटली तिरोहितं यद्विनिर्मलं सत्यम् ।
तत्रापीङ्गितकरणे सामर्थ्यं धारयति शोधः ॥

[१०]

लघुतममपि वा विषयं क्रोडीकृत्य प्रवर्तमानोऽसौ ।
सुरसामुखस्थमारुतिसादृश्यं धारयति शोधः ॥

[११]

शल्यक्रियासु निपुणोद्राक्तर इव छेदयति सर्वम् ।
सर्वं पृथक्-पृथक् संस्कुरुते सम्यक् प्रभावितः शोधः ॥

[१२]

कारणशून्यानां यो विश्वासानां विलोपको नितराम् ।
आन्ध्यावृतं समाजं प्रकाशपुञ्जं निदेशयति शोधः ॥

[१३]

अद्यावधि यद् काट्यं प्रतिष्ठितं सिद्धवद् बुद्धौ ।
छेदयते तत्सर्वं सन्देहोद्भावकः शोधः ॥

[१४]

यः स्वीकृतैः प्रमाणैः परतन्त्रश्चिरनवीनत्वम् ।
प्राचामाचामयते कायाकल्पप्रवर्तकः शोधः ॥

[१५]

समुपेक्षितता गर्ते निपतितमपि यः पदार्थजातं तम् ।
अहमहमिकया दृश्यं संग्राह्यम् चादिशति शोधः ॥

[१६]

प्रतिभाप्रकर्षलसितो नानासंसाधनैर्दीप्तः ।
विज्ञसमाजसमर्पितसञ्चारो दीप्यते शोधः ॥

[१७]

सम्पूर्णं जीवनमपि यो लघुतमतां समानयति ।
शेषयति कर्मनिखिलं पर्यन्ते वीक्षितः शोधः ॥

[१८]

नैवादिर्नैवान्तो नो वा मध्योऽस्य निगदितु शक्यः।
सर्वानपि सिद्धान्तान् पूर्वपक्षे विधारयति शोधः॥

[१९]

सर्वेषां विषयाणां सर्वेषां वा पदार्थानाम्।
क्रोडीकरणसमर्थः शोध्यं सर्वं समादिशति शोधः॥

[२०]

ग्रन्थेषु बृहत्कायेष्वथ लघुकायेषु लेखेषु।
परिचर्चासु च पत्रेष्वलं विकासं गतः शोधः॥

[२१]

स्नातकता सम्प्राप्तावप्यध्येतुं यदादरो जातः।
नूनं तदैव लभ्यः सर्वोच्चोपाधिसंगतः शोधः॥

[२२]

पारे समुद्रमपि यः सम्प्रेषणदक्षतां भजते।
सर्वविधं व्ययदानं समादिशति सत्वरं शोधः॥

[२३]

बह्वायासे जाते सर्वं व्यर्थं यदा भवति।
जलताडनवन्निखिलं श्रमं सुदूरं क्षिपति शोधः॥

[२४]

चेतस्तोषकरीं यो विद्यां सर्वां समाह्वयते।
विदुषाश्चान्यानखिलान् प्रसादयति सात्विकः शोधः॥

[२५]

आयासेन सुबहुना स्तोकं फलमेव योऽर्पयते।
अंगुलिगणनीयानां मननीयोऽस्ति राजसः शोधः॥

[२६]

वागाडम्बरपूर्णोऽत्यल्पो नैवाऽथ तोषितः स्वान्तः।
तुन्दिलतायां दृष्टः स्वीकार्यस्तामसः शोधः॥

[२७]

विश्वस्मिन् शिक्षायै याः संस्थाः सन्ति सुप्रथिताः ।
तासां शिरोमणित्वे लसतितमां दीपितः शोधः ॥

[२८]

ज्ञानप्रकाशपूर्णान् विदुषो धन्यांस्तु यः कुरुते ।
सर्वसमीहितचरणान् वैदुष्यख्यापकः शोधः ॥

[२९]

पूर्वपुरुषभणितीनां सारं तत्त्वं विबोधयते ।
पोषयति चान्यनिकषे निष्कर्षैर्भूषितः शोधः ॥

[३०]

प्राचीनाक्षरमाला जालावलिमध्य पतितोऽयम् ।
निष्कर्षं लम्बायितविलम्बमुपयाति किं शोधः ॥

[३१]

एकाग्रामथ चेतो वृत्ति योऽसौ समाधिपरिजुष्टाम् ।
प्रददातीष्टफलाशा परिपूर्णे मानसे शोधः ॥

[३२]

यस्मिन् यस्मिंश्चेतसि स्वयं स्थानं निभालयति ।
तदलौकिकत्वे भाने संप्रेषयते स्वयं शोधः ॥

[३३]

ग्रन्थिविभेदनकुतुकी तर्कान्वितसत्प्रमाण—
विपरीततर्कघर्षण परिपुष्टो राजते शोधः ॥

[३४]

विदुषामप्येषांके कूपे मण्डूकतामथ ताम् ।
सद्यो दूरीकुरुते तान् सर्वत्र प्रचालयन् शोधः ॥

[३५]

अङ्गीकरोति किञ्चित् दूरीकुरुते तथा किञ्चित् ।
किञ्चित् क्रिञ्चिच्चिन्वन् संपूर्णो जायते शोधः ॥

[३६]

ये वा भाव विचारा नव्या इति निश्चयो जातः ।
ते तस्मादपि पूर्वं प्रकटा इति दर्शयति शोधः ॥

[३७]

नूतनतमकमनीये रूपेयस्तोषको भवति ।
पुष्टनिदेशकदिष्टः स्वीयं लास्यं विलासयति शोधः ॥

[३८]

नानाकारविकार प्रकारसंचारमाधुरीरम्यः ।
अल्पज्ञानपि विदुषः पूर्णप्रज्ञान सुघोषयति शोधः ॥

[३९]

यो विज्ञानां व्यूहे तडिदिव रोमांचमातनुते ।
स्वल्पाक्षरैर्वचोभिस्तस्माद् रोमांचकः शोधः ॥

[४०]

भूगर्भेऽयं गच्छति भूतं कालं परामृशति ।
भूतानामपि शुद्धिं करोति करुणामयः शोधः ॥

[४१]

कीलयति सर्ववाचं वाक्कीलेषु प्रचारमायातः ।
विज्ञानापि मूर्छयते प्रत्यक्षैरागमैः शोधः ॥

[४२]

राज्ञां पुरातनानां हर्म्याणां यः परीक्षणं कुरुते ।
शस्त्राणां पात्राणां वस्त्राणां वीक्षकः शोधः ।

[४३]

सर्वं यत्र स्पष्टं सुनिश्चतत्त्वं मतं यत्र ।
सन्देहैर्मन्देहांस्तर्कास्तत्र प्रवेशयति शोधः ॥

[४४]

सर्वविधश्रमविवशैर्व्यापारैर्यो वशीकृतो विषयः ।
पौनः पुन्यं भृशार्थं तत्राऽऽविर्भावयति शोधः ॥

[४५]

मस्तिष्कान्तर्गत-शिरावलीर्झंकृताः कुरुते ।
शयनासनादिलोपं सन्तनुते चिन्तितः शोधः ॥

[४६]

शतशतपुस्तकमध्ये सततं दत्तावधानोऽयम् ।
ज्ञाननदीनवधारा प्रवर्तने संगतः शोधः ॥

[४७]

नानाऽज्ञानवितानैः समावृतो ज्ञानतन्तूनाम् ।
दृष्टिं कामपि शिष्टां विशिष्टरूपां प्रवर्तयति शोधः ॥

[४८]

एकस्या अपि पंक्तेर्विवेचने सादरं लग्नः ।
वर्षाण्यतिवाहयते काले कलनां करोत्यसौ शोधः ॥

[४९]

सर्वां किल व्यवस्थामामूलात् यः समापयते ।
नव्यां निजां व्यवस्थां विदधात्यायातितः शोधः ॥

[५०]

सर्वं व्यवस्थितमिदं सर्वं सर्वत्र सम्पूर्णम् ।
सर्वात्सर्वं समुदये सर्वां दृष्टिं समर्पयति शोधः ॥

[५१]

अपिना सुदूरदेशस्थित सामग्री समाकलने ।
धावति सादृश्ये वा सम्मति मुद्रान्वितः शोधः ॥

[५२]

यद् यद् विशृंखलं तत् सर्वं सशृंखल कुरुते ।
एकस्मिन् सर्वेषां समन्वयं सन्दिशति शोधः ॥

[५३]

सृष्टौ सर्वं भरितं नवता नास्तीह कुत्रापि ।
ज्ञाने लाभस्तेषां तस्मिन्कार्ये रतः शोधः ॥

[५४]

वाक्यानां शब्दानां मात्राणां मातृकानां च ।
वीथीषु विभ्रमेषु भ्रमणं कुरुते स्वयं शोधः ।।

[५५]

त्रैमासिकार्धवार्षिक वार्षिकपत्राणि चालयते ।
अनियतकालानामपि पत्राणां सम्प्रवर्तकः शोधः ।।

[५६]

शोधार्थि छात्रनिवहेष्वासादित वैभवः सोऽयम् ।
तेषामथवा तासां वृत्तीनां वर्षकः शोधः ।।

[५७]

हर्षादुच्छालयते क्षणमात्रेणैव मोहितांश्छात्रान् ।
पंजीयनविनिबद्धानद्यत्वे स्वीकृतः शोधः ।।

[५८]

विश्वविभिन्नविभागव्यक्ति व्यक्ति पृथग् भूतः ।
ऐक्यं तेषां तनुते विस्तारित वैभवः शोधः ।।

[५९]

नमयति यो निजरूपे सर्वेषां मस्तकानि भूयांसि ।
सर्वेषां सन्देशान् सश्रृणुतेऽयं समादृतः शोधः ।।

[६०]

आक्रामकरूपाणामपि नित्यं सर्जनं कुरुते ।
सर्वस्वार्जनमथवा केषांचित् कल्पयति शोधः ।।

[६१]

सांसारिकभोगानामपि संयोगं समादिशति ।
सर्वाश्चर्यमयीमथ मुद्रां तां तां दिशति शोधः ।।

[६२]

सर्वं निभाल्यमानं या कृपया भाति विनिगूढ़म् ।
सर्वं रहस्यपूर्णं मत्वा संशोभते शोधः ।।

[६३]

कस्या अपि वार्तायाः समुद्भवः कुत्र संजातः।
सत्याऽस्ति काऽथ वार्ता सत्यं सर्वं विशोधयति शोधः॥

[६४]

नवनिर्माणे किं किं पुरातनं सत्यमायातम्।
कस्मिन् रूपं प्रकटं तत्सर्वं शोधयति शोधः॥

[६५]

प्रकटे विरूपभावे सौन्दर्यं यो विलोकयति।
सर्वं सुन्दररूपं नीरूपं वा समादिशति शोधः॥

[६६]

रम्याञ्चितसत्पीठे निर्देशकवर्यं संगतः सोऽयम्।
विभुतामयतां स्वीयां वैभवयुक्तां विभावयति शोधः॥

[६७]

परिपठन - मनन - चिन्तन-लेखनरूपेषु संलग्नः।
त्यक्तान्यसर्वविषयः परिपूर्णः शोभते शोधः॥

[६८]

आदौ सूक्ष्मः क्रमशो विपुले रूपे प्रकाशमायातः।
पर्यन्ते पुनरपि तत् सूक्ष्मं रूपं प्रकाशयति शोधः॥

[६९]

नानापाण्डुलिपीनां परिग्रहे जागरूकोऽयम्।
तासां छायाचित्राण्यद्यत्वे संश्रयति शोधः॥

[७०]

मायाविनां समस्तां मायां सद्यः समापयति।
वागाडम्बरपूर्णां विज्ञैर्विज्ञापितः शोधः॥

[७१]

अङ्गीकृतविषयाणां यद् दारिद्र्यम् समुल्लसति।
पूर्वोत्तरपक्षाभ्यां तद्वै सर्वं विलोपयति शोधः॥

[७२]

पाण्डुलिपीनां प्रथने नानाविध पाठभेदे च ।
पूर्णप्रज्ञपुरातनपुरुषाणां देशिकः शोधः ॥

[७३]

योऽसौ श्रुतिस्मृतीनां नानाविधसत्पुराणानाम् ।
इतिहासानां निर्णयकरणेऽविचलो विलोक्यते शोधः ॥

[७४]

हर्षाणां यो वर्षा इव कुरुते विज्ञवर्याणाम् ।
चेतस्सु सर्वसुषमा सौभाग्यैः संभृतः शोधः ॥

[७५]

सम्मति विभति विभागैर्निष्कर्षे भिन्नतां यातः ।
परिषत्प्रगुणितरूपे निष्कर्षं संप्रतीक्षते शोधः ॥

[७६]

नानायन्त्रपरीक्षितवस्तूनां गुणगणनिकायाम् ।
नव्यानां वस्तूनां निर्माणेऽवातरत् शोधः ॥

[७७]

सत्यान्वेषणकार्ये सर्वसमर्पितसुपरिवेशः ।
सन्देहं भ्रान्ति वा मिथ्यात्वं वा विदूरयति शोधः ॥

[७८]

सिद्धान्तव्याख्यानैरेवाऽयं नास्ति संतुष्टः ।
पूर्णप्रमाणपुष्टैस्तैः संतुष्टो भवति शोधः ॥

[७९]

मूर्तीनां पात्राणां धातूनां च प्रणालीनाम् ।
प्रोत्खनने मिलितानां सुस्वागतमादिशति शोधः ॥

[८०]

भित्तीनां कासांचित् केषांचिद् भित्तिचित्राणाम् ।
शास्त्राणां मुद्राणां परीक्षणे प्रोद्यतः शोधः ॥

[८१]

व्यर्थं किमपि न मनुते बह्वल्पं सर्वमाद्रियते ।
कोणे प्रतिष्ठितं यत् तत् सम्मुमाधरति शोधः ॥

[८२]

अज्ञाताल्पज्ञातप्रथा प्रवाहे निपतितानाम् ।
रचयितॄणां विषये पूर्णं श्रममादिशति शोधः ॥

[८३]

राज्ञा पुरातननामितिवृत्तं यो निभालयते ।
सामाजिकसंरचना विकासमालोचयति शोधः ॥

[८४]

आपाततः सुमधुराकृतिभिर्नीराजमानानाम् ।
घटनानामपि मध्ये विषबीजं दर्शयति शोधः ॥

[८५]

शत - शत संस्था मध्ये शुग्रोदयवीक्षितस्वान्तः ।
नैकसहस्त्रजनानां वृत्तिं स्वेष्टां सुचालयति शोधः ॥

[८६]

नानानवपत्राणां प्रकाशने शूरतां यातः ।
सम्पादनचातुर्यं नूतनमुद्भावयति शोधः ॥

[८७]

नूतननियुक्तिकाले प्राध्यापकपदभिलाषितवर्गस्य ।
स्वीयोपाध्यनिवार्यग्रहणेच्छां दर्शयति शोधः ॥

[८८]

नानाऽनिवार्यनियमैर्नियमितशरीरोऽयम् ।
नानादोषच्छिद्रानप्यद्यत्वे विधास्यति शोधः ॥

[८९]

नानाविधसंभावितवित्तग्रहणे सुजागरूकाणाम् ।
शोधार्थिनां प्रतिष्ठामथ बुद्धिं लोपयति शोधः ॥

[९०]

निर्देशकवर्याणां मानविवृद्धिं परां तनुते।
केषांचित् पुनरेषामपमानान्यपि समीहते शोधः॥

[९१]

शोधे सर्वं शुद्धं यद्यन्निर्देशकेन संदिष्टम्।
अस्वीकृते निबन्धे निर्देशकदैन्यमावहति शोधः॥

[९२]

संगोष्ठीवेलायां शोधार्थिनमर्थसद्व्ययं कर्तुम्।
गोष्ठीनिविष्टसज्जन जलपानादीन्निदेशयति शोधः॥

[९३]

अन्यैर्लिखितं तदिदं चान्यैः संशोधितं सम्यक्।
अतिरिन्द्रव्यलाभे विदुषोऽपि प्रेरयति शोधः॥

[९४]

अस्तव्यस्तदशायां कैश्चित्संप्राप्यमाणोऽपि।
केषांचित्तु परेषां परिनिष्ठितभक्तिमीक्षते शोधः॥

[९५]

यैरध्यापकवर्यैः पाठनकार्ये परिश्रमो विहितः।
शोधेऽनादरयुक्तास्तदुन्नतिं रोधयति शोधः॥

[९६]

रूपाणां बाहुल्ये पुरातनानां नवीनत्वम्।
स्फूर्तिप्रदत्वमेषां सम्पादयतीह सत्वरं शोधः॥

[९७]

भूयो नवप्रबन्धैः शोधोत्तरशोधमाभरितः।
प्रतिशोधशोधपूर्णैर्निजसीमावर्धकः शोधः॥

[९८]

सर्वासां भाषाणां साहित्ये भाषमाणानाम्।
नैकट्यं वर्धयितुं साहित्यं शोधयति शोधः॥

[९९]

केन्द्रीयात्प्रान्तीयात् शासनचक्रात् सुपुष्टिमायातः।
पोषणमखिलं यच्छति शिष्येभ्यः स्वीकृतः शोधः॥

[१००]

प्राचीनां परिपाटीं नवनवरचनासुजाग्रतां कुर्वन्।
सत्प्रेरणां प्रयच्छति निर्माणेऽङ्गीकृतः शोधः॥

[१०१]

शोधशतक सम्पूजितविभवो नीराजमानोऽयम्।
शिवदत्तेन कथंचिद् संवर्णित एव दृश्यते शोधः॥

१७४४+१०१=१८४५

: २२ :

नारीशिक्षासर्गः

[१]

भारतवर्षे नारी शिक्षाऽऽसीदादिमे काले ।
मन्त्राणां द्रष्टृत्वं सुसिद्धमेवार्य ललनानाम् ।।

[२]

शास्त्र-विचार-सभायां राजर्षीणां पुरःस्थिता नारी ।
शास्त्रार्थे प्रावर्तत शुचिभिर्ब्रह्मर्षिभिः सार्धम् ।।

[३]

कल्पनमपि नो कर्तुं शक्यं नारीं विना स्वधर्माणाम् ।
यज्ञादिसाधनविधौ नारी स्वार्धासनस्थैव ।।

[४]

स्वातन्त्र्यं स्त्री नार्हति यदेतदुक्तं महाग्रन्थे ।
रक्षाविधौ समीक्षा परिसीमा विद्यते तत्र ।।

[५]

नारी पूज्या जगतां यदि स्वयं स्वीयरक्षायाम् ।
समुपार्जनादि कर्म प्रवृत्तिमासेवते ननु धिक् ।।

[६]

सेयं भावाऽधारा विचारसारा सुरम्य परिपाटी ।
स्त्रीसम्बद्धविचारान् संकुचितान् वा कथं कथयेत् ।।

[७]

यद्यप्युग्रा दोषा दीर्घे परतन्त्रता काले ।
देशेऽस्माभिर्दृष्टा नारी परतन्त्रताऽपि तत्राऽस्ते ।।

[८]

परतन्त्रता प्रभावो विषवद् व्याप्नोति सर्वजनमध्ये ।
सर्वे गुणास्तदात्वे दोषा एव प्रजायन्ते ॥

[९]

अपयात्युज्ज्वलरूपं परितो व्याप्नोति तामसः पक्षः ।
विज्ञा अपि धीरा अपि मोमुह्यन्ते तदा काले ॥

[१०]

परतन्त्रता-निगड़िते काले नारी गृहस्थैव ।
भोग्या जनयित्री वा कार्याणां पालिका जाता ॥

[११]

स्वातन्त्र्यार्थं युद्धे सन्नद्धे भारते देशे ।
नारी-जागरणानां प्रभा परीवाह आयातः ॥

[१२]

दुर्गा-लक्ष्मीबाई चरित्र चित्रावलिः काचित् ।
रोमाञ्चितं प्रकुरुते निखिले जगतीतले मनुजान् ॥

[१३]

नारी-जागरणार्थं नारीशिक्षा प्रदानार्थम् ।
नानाविद्याशालाः प्रारब्धादेशनेतृभिः सद्यः ॥

[१४]

आचार्या अपि चैते परकरुणाऽऽपूरितस्वान्ताः ।
नारी जागरणानामभियानेऽग्रेसरा आसन् ॥

[१५]

वैदेशिक-विश्वस्मिन् या काचिद् वा समुन्नतेः परमा ।
काष्ठा दृष्टा नारी केन्द्रस्था तत्र सर्वत्र ॥

[१६]

स्वातन्त्र्यस्य सफलता पूर्णेयं दृश्यमानाऽस्ते ।
नो नारी क्रीडनकप्रख्याऽद्यत्वे विचार्यते लोके ॥

[१७]

स्वान्तन्त्र्यान्प्राङ्नारी विषये यद् ध्यातमपि नाऽसीत् ।
अद्य समुज्ज्वलरूपं नारी तत्तद् विधारयति ॥

[१८]

नारी प्रधानमन्त्री नारीयं राज्यपालाऽपि ।
शासनविविधविधानां नारी परिचालिका युगेऽद्यत्वे ॥

[१९]

सेनायाः संगठने सैनिकरूपेषु निखिलेषु ।
वैमानिक-संसेवामध्ये क्वाऽस्ते न नारीयम् ॥

[२०]

सर्वविधापि समुन्नतिरद्यत्वे स्वीकृता नार्या ।
शिक्षायाः सर्वेषु क्षेत्रेष्वेषा प्रतिष्ठिता जाता ॥

[२१]

सर्वस्यामप्यस्यां समुन्नतौ सम्प्रजातायाम् ।
अपलपितुं नो शक्या साऽदर्शाणां विकुण्ठिता धारा ॥

[२२]

भौतिकसमृद्धिमयतासम्भारोत्तेजिते काले ।
भारतमूलधनं नो गच्छेद्दूरेति चिन्तयामि मुहुः ॥

[२३]

संस्कृतविद्यैवाऽस्ते सर्वेषां श्रेयसां मूलम् ।
तस्यां सर्वे मंगलविषया नूनं समाऽरचिताः ॥

[२४]

सर्वोन्नतमेतद्वा संस्कृतमध्ये तु दर्शनं शास्त्रम् ।
आचार्या अत्रत्या वैचारिकभूतिमातेनुः ॥

[२५]

सेयं संस्कृतविद्याऽद्यत्वे ह्रासस्वरूपेषु ।
निपतन्ती सन्दृष्टा स्वातन्त्र्ये चापि संजाते ॥

[२६]

यदि चेन्नारीशिक्षा संस्कृतविद्यामयी भूयात् ।
नूनं ह्रासे रूपं तदिदं परिवर्तितं भूयात् ।।

[२७]

यद्यपि भारतराष्ट्रं बहुभाषायुक्तमित्येतत् ।
नूनं शूलायितमपि तोषकरं वा कुतो न स्यात् ।।

[२८]

संस्कृतविद्या सैषा भाषास्वेतास्वनुस्यूता ।
ऐक्यं नाम रसायनमद्याप्यापादयति पूर्णम् ।।

[२९]

एतच्चैक्यविधानं यदि संस्कृतभाषया सुकरम् ।
तत्रोपेक्षा चेयं केषां नोद्वेजयेच्चेतः ।।

[३०]

स्वाहा कृत्वा स्वीयं सर्वं यदि सर्वमपरेषाम् ।
संग्राह्यतां प्रयातं नूनमियं साऽत्महत्यैव ।।

[३१]

स्थायित्वे त्वात्मीयं संचारित्वे परेषां चेत् ।
संगृह्यते स्वरूपं पुष्टिस्तुष्टिस्तदा दृश्या ।।

[३२]

अद्यत्वे नेतारो वैदेशिकभ्रमणवेलासु ।
तत्रत्यं ननु सर्वं स्वर्गीयं धारयन्त्याहो ।।

[३३]

तत्तुलनायां स्वीयं सर्वविधं वैभवं ध्यात्वा ।
तस्याधःकरणेनैवात्मानं तोषयन्त्येते ।।

[३४]

नारीणामपि शिक्षा तथाविधैवेप्सिता तेषाम् ।
यया समुत्तेजकता नारीरू प्रदृपेश्येत ।।

[३५]

किन्त्वस्माकं देशे नारी सर्वात्मिकज्योतिः ।
नारीमूला सर्वा सुषमाऽऽस्ते भारतीयानाम् ।।

[३६]

देवा अपि च रमन्ते नारी सम्पूज्यते यत्र ।
सर्वविधश्रद्धानामाधारा विद्यते नारी ।।

[३७]

सोऽयं विभूतियोगो भारतदेशस्य सर्वस्वम् ।
तेनैवात्र नितान्तं यतमाना नन्दिता नित्यम् ।।

[३८]

सौशील्यैः सौभाग्यैरावेदितसारसर्वस्वा ।
निखिलमिदं संसारं समुद्धरेत् सत्वरं नारी ।।

[३९]

नारीशिक्षणकार्ये यतमाना ये च याश्च विद्यन्ते ।
पुनरुत्थानं तैर्ननु संस्क्रियते सर्वदेशस्य ।।

[४०]

संस्कृतविद्याभिर्वा नूनं नवशिक्षिता नारी ।
दिव्याऽऽदर्शैर्भरितं कुरुते जीवनमहो पूर्णम् ।।

[४१]

शिक्षाविचारमध्ये शिक्षा सर्वासु चेष्टासु ।
शिक्षा श्वासे - श्वासे शिक्षैवेदं जगत्सर्वम् ।।

[४२]

सर्वविधव्यवहाराऽवलिमध्ये साऽथ शिक्षैव ।
सर्वविधामपि शान्तिं समृद्धिमयतां समादिशति ।।

[४३]

भूलोके या स्वर्गं समाह्वयति सा तु शिक्षैव ।
विनयैर्या परिपूर्णा कर्तव्योन्मेषदायिनी याऽसौ ।।

[४४]

सर्वाऽप्यभावपूर्तिः शिक्षाया एव जाग्रतो धर्मः।
मनुते मनुजोऽभावेष्वपि परिपूर्णं सदाऽऽत्मानम् ॥

[४५]

पुरुषाणां तु सदैवाऽयत्ता शिक्षा भवत्येव।
किन्तु स्त्रीणां शिक्षा पुरुषाऽधारा प्रवर्ततेऽद्यापि ॥

[४६]

पुरुषा एव तु नित्यं स्त्रीशिक्षादेशिका दृष्टाः।
सामाजिकमथजीवनमुन्नेतुं ये दृढव्रता जाताः ॥

१८४५+४६=१८९१

: २३ :

यावत्-तावत्सर्गः

[१]

मैत्री सत्याऽमन्दा व्यवहारे स्थितिमती यावत् ।
रत्नं परमविचित्रं हृद्देशे धार्यतां तावत् ॥

[२]

पाश्चात्या विद्वांसः संस्कृतसेवां प्रकुर्वते यावत् ।
नवशोधानां सुषमा पुरातनं शोधयति तावत् ॥

[३]

सन्देहानां सर्पा भयदाने प्रोद्यता यावत् ।
मन्त्राक्षर-जपकालः समीपमुपतिष्ठते तावत् ॥

[४]

अधिकारमदोन्मादो नेतॄणां वर्धते यावत् ।
सुनियतचुनावसमयः समीपमायात्यहो तावत् ॥

[५]

भारं मानसमाराद्दधती कन्या प्रवर्धिता यावत् ।
सद्भूतिकार्ये लग्ना द्रव्योत्पादनकरी तावत् ॥

[६]

रूढीनां साम्राज्यं श्वासानां रोधकं यावत् ।
मिथ्याभ्रममालेयं खण्डितभावं गता तावत् ॥

[७]

नानाविधकुण्ठानामस्वास्थ्यं दृश्यते यावत् ।
कुण्ठाभञ्जनकार्ये समुत्सुकं नो मनो तावत् ॥

[८]

रिक्तोदरे बुभुक्षा सततं संभुक्षिता यावत् ।
क्रान्तिः काऽपि नितान्तोन्माथं गमिता चिरं तावत् ॥

[९]

तत् प्रियतमामुखाब्जं क्लेषं नो शोषयति यावत् ।
नानाकष्टाऽकुलितं चेतो व्यथयति चिरं तावत् ॥

[१०]

प्रचुरधनागमकालो न स्यात् समुपस्थितो यावत् ।
सैषा कलत्रचिन्ता धत्ते चेतसि पदं तावत् ॥

[११]

मतगणनानिर्घोषः संपूर्णो नो भवेत् यावत् ।
प्रत्याशिनां चुनावे चिन्ता महती स्थिता तावत् ॥

[१२]

सर्वेषामपि यूनामुपद्रवो दृश्यते यावत् ।
पथनिर्देष्टा तेषां सम्यङ् नो लभ्यते तावत् ॥

[१३]

अत्यादरमाधुर्यं विलोक्यते नूनमिह यावत् ।
स्वार्थमयी परिचर्चा महती नैव कृताऽऽस्पदा तावद् ॥

[१४]

संश्लिष्टा परिचर्चा सेयं संक्षेपिता यावत् ।
वैदेशिकमाह्वानं सद्यः समुपस्थितं तावत् ॥

[१५]

सामूहिकगोष्ठीनामाह्लादो मोदमावहेद् यावत् ।
नवराजनीतिचर्चा स्वीयौ पादौ प्रसारयेत् तावत् ॥

[१६]

आयत्याः परिपाटी सैषाऽन्तिमरूपमागता यावत् ।
रोगाक्रमणं विषमं निखिलां तां लोपयति तावत् ॥

[१७]

सोऽयं पुरन्ध्रिवर्गो रूढीनां भञ्जको यावत् ।
व्यभिचारचौर्यलुण्ठनगाथेयं सम्प्रवर्धिता तावत् ॥

[१८]

दारिद्र्यं नाशयितुं विचेष्टते शासनं यावत् ।
मध्यस्थानां नेत्रे दीप्तिः संदृश्यते तावत् ।।

[१९]

भवनानां निर्माणं गगनं परिचुम्बते यावत् ।
खनने कर्मकराणां मृत्युः संजायते तावत् ।।

[२०]

सर्वोत्तमपरिणामः पत्रे सम्मुद्रितो यावत् ।
दुर्घटनायां छात्रो मृत्युमुखं चुम्बते तावत् ।।

[२१]

आसादितवाग्विभवा जनताशिक्षणरता यावत् ।
प्रतिपक्षे कोलाहलमयता सर्वं गिलति तावत् ।।

[२२]

सांगीतिकरसधारा हृदयं प्रोन्मादयति यावत् ।
ध्वनिविस्तारकयन्त्रं विफलं संजायते तावत् ।।

[२३]

प्राभातिकवेलायां स्फूर्तिः संजायते यावत् ।
पत्रे वृत्तं दृष्ट्वा सर्वा सेयं विलुप्यते तावत् ।।

[२४]

सौदामिनीव काचित् सहसा परिदृश्यते यावत् ।
परिवारजलदमध्ये दृष्टेर्दूरं गता तावत् ।।

[२५]

भक्तौ किञ्चित् किञ्चिन्मनोमिलिन्दं लगति यावत् ।
तीव्राघातोन्मन्थनवैषम्यं जायते तावत् ।।

[२६]

एकस्मिन् करणीये समुद्यतं स्यान्मनो यावत् ।
गुरुतरमेतस्मादपि मूर्च्छयते प्राक्तनं तावत् ।।

[२७]

लोकाराधनकार्ये प्रतिष्ठितं चेतसा यावत् ।
उत्कोचेन धनाऽऽगमलोभो विक्षोभयति तावत् ॥

[२८]

कृतिरेषा कमनीया पूर्णा संजायते यावत् ।
पत्रे प्रकाशनं वा तस्याः खेदावहं तावत् ॥

[२९]

वेतनवृद्धेर्घोषणमेतत्संजायते यावत् ।
बहु-बहु-बहु-बहुगुणिता महार्घता वर्धते तावत् ॥

[३०]

सुस्वास्थ्यस्याशेयं काचित् संजायते यावत् ।
सिद्धचिकित्सकमूल्यं पत्रस्थं दृश्यते तावत् ॥

[३१]

निद्रायाः प्राप्त्यर्थं नेत्रौ स्वीयौ निमीलितौ यावत् ।
खेलनस्पर्धाया वीक्षणकोलाहलस्तावत् ॥

[३२]

अवरुद्धवित्तलाभस्याशा संजायते यावत् ।
क्लर्कविलिखिताऽऽपत्या पुनरपि दूरंगता तावत् ॥

[३३]

कन्याविवाहचर्चाऽन्तिमरूपे संगता यावत् ।
नव-नव-यौतकयाच्ञाविघ्नं संपद्यते तावत् ॥

[३४]

द्रुतगामि वाष्पयानं नव्यं परिचालितं यावत् ।
नानालुण्ठनसरणिः सद्यः परिवर्धिता तावत् ॥

[३५]

कठिनपरिश्रमसरणिवित्तं प्रगुणं समानयति यावत् ।
न्यायालयस्वराणां घोषः संश्रूयते तावत् ॥

[३६]

एकस्मिन् संस्थाने प्रभावभावः स्थितो यावत् ।
सेवासंस्थायाः खलु परिवर्तनसूचना तावत् ।।

[३७]

आन्दोलनविस्फोटे सर्वाघातः प्रतीक्षितो यावत् ।
नेतृणां विक्रयणे शान्तिः काचित् प्रजायते तावत् ।।

[३८]

यात्रायां संस्फूर्तिः सकला समुपार्जिता यावत् ।
सर्वोपकरणचौर्यं विषमं समुपस्थितं तावत् ।।

[३९]

स्वस्वामित्वे बहुमतमसमं संसाधितं यावत् ।
केन्द्रादेशाद् भग्नं मन्त्रित्वं जायते तावत् ।।

[४०]

भव्योद्यानसमागमसमुत्सवः संगतो यावत् ।
क्रूराशीविषदर्शनमुल्लासं लोपयति तावत् ।।

[४१]

अद्य श्वस्तनदाने चलितं चित्तं पुरो यावत् ।
श्वासस्यान्तिमभागो देहं विक्षोभयति तावत् ।।

[४२]

शुद्धानां भावानामुन्मेषो जायते यावत् ।
दैवं प्रतिकूलं सद् मार्गानवरोधयति तावत् ।।

[४३]

नानाक्लेशविपाके धैर्यं संजायते यावत् ।
स्वीयाऽस्तित्वविलोपाऽऽशङ्का प्रोन्माथयति तावत् ।।

[४४]

सुन्दरभाषापठनं मानसमुन्मादयति यावत् ।
भावानां काठिन्यं दूरीकुरुते मनस्तावत् ।।

[४५]

नवपत्रपत्रिकाणां प्रकाशनं जायते यावत् ।
सामग्री-सौलभ्यं कठिनतरं जायते तावत् ॥

[४६]

नानाविशेषताभिर्मण्डितमेतद् गृहं यावत् ।
चौराणां प्राचुर्यं विलोपयति साहसं तावत् ॥

[४७]

अद्भुततरस्वरूपं नव्यं सन्दृश्यते यावत् ।
सैषाऽऽकल्पितबाधा नैराश्यं सन्दिशति तावत् ॥

[४८]

नूतनकाव्योन्मेषो विमलीकुरुते मनो यावत् ।
गालीप्रवाहपातः समलीकुरुते मनस्तावत् ॥

[४९]

प्रोत्साहनप्रचुरता परितः संप्राप्यते यावत् ।
यानस्य प्रस्थानं नैराश्यं सन्दिशति तावत् ॥

[५०]

प्राचीना परिचर्चा मञ्चे सञ्चालिता यावत् ।
नव्या विचारधारा सकलमिदं भञ्जयति तावत् ॥

[५१]

घोरा विद्रूपेयं मानसमुन्माथयति यावत् ।
चन्दनसदृशी लीला हर्षं सञ्चारयति तावत् ॥

[५२]

वैषम्यस्य समुद्रस्तरंगमालाऽऽकुलो यावत् ।
साम्यं सजीवतायां सारल्यं बोधयति तावत् ॥

[५३]

तीक्ष्णतरैर्वाग्बाणैर्विद्धं विद्धं मनो यावत् ।
परिसान्त्वनाऽनुलेपनजीवनदानं भवति तावत् ॥

[५४]

कष्टानां स्मृतिपटली सर्वं संछादयति यावत् ।
काचिदमृतरसधारा दूरीकुरुते व्यथां तावत् ॥

[५५]

मिथ्याव्यवहारोऽयं मानुषमुन्मादयति यावत् ।
दुर्दान्तिवज्रपातः पक्षाघाते प्रदृश्यते तावत् ॥

[५६]

कालान्धकारपटली श्वासानवरोधयति यावत् ।
स्फूर्जन्नवप्रकाशः स्फूर्ति विपुलां समर्पयति तावत् ॥

[५७]

नेत्रोन्मादकसुषमा चित्तं मोहयति नो यावत् ।
चित्राणां संरचने तूलीयं नो चलति तावत् ॥

[५८]

कक्षे द्वारपिधानं सम्यक् संजायते यावत् ।
कामकपाटोद्घाटनसमुत्सवो जायते तावत् ॥

[५९]

पाणिन्यादिविरचितं व्याकरणं घोटितं यावत् ।
भाषायां निष्कण्टकसाम्राज्यं वर्धितं तावत् ॥

[६०]

रात्रिप्रहरापगमः शनैः शनैर्जायते यावत् ।
प्राच्यामरुणोदयमयवेला निकटस्थिता तावत् ॥

[६१]

भागीरथीप्रवाहो मन्दं मन्दं चलति यावत् ।
ऋतुपरिवर्तनवेला प्रत्यक्षं दृश्यते तावत् ॥

[६२]

गोविन्ददर्शनानां वेला निकटस्थिता यावत् ।
जयगोविन्देति ध्वनिरुल्लासं दर्शयति तावत् ॥

[६३]

विषमेषुबाणविद्धा पतन्ति विषमे चिरं यावत् ।
हृत्परिवर्तनघटना काचित्संदृश्यते तावत् ॥

[६४]

नवचित्रपटं तदिदं नगरे सन्दर्शितं यावत् ।
जनसम्मर्दो भूयान् द्रष्टुं तदिदं गतस्तावत् ॥

[६५]

चक्षुर्नवनैपुण्यं विपुलं विस्तार्यते यावत् ।
नवविलसिततारुण्यं सकलान्यङ्गानि शोभयति तावत् ॥

[६६]

अज्ञातेयं शोभा मानसमुन्मादयति यावत् ।
चक्षुषि विद्युन्नर्तनमसमं संशोभते तावत् ॥

[६७]

अहमहमिका च सैषा कार्यारम्भे स्थिता यावत् ।
मुख्ये पुरुषे मौनं नूनं विस्मापकं तावत् ॥

[६८]

सर्वत्र घोषणायां चुनावचर्चा गता यावत् ।
नानादलसंरम्भः सन्दृष्टः सत्वरं तावत् ॥

[६९]

शासननवपरिवर्तनसंघोषः संश्रुतो यावत् ।
नानोपद्रवहिंसाऽऽकुलता संजायते तावत् ॥

[७०]

वृत्तानां बाहुल्यप्रकाशने नव्यता यावत् ।
वृत्तेषु कल्पनानां योगः प्रोच्चैः स्थितस्तावत् ॥

[७१]

कटुता सैषा नव्या चरमं भावं गता यावत् ।
नव्यैः पुरुषैर्मैत्री नूनं संवर्धते तावत् ॥

[७२]

भावानां परिपोषे प्राचुर्यं संगतं यावत्।
मानसिकं स्थूलत्वं दुःखं संचारयति तावत्॥

[७३]

दिव्यचरित्रोद्याने नूत्नं पुष्पं प्रफुल्लितं यावत्।
सर्वाश्चर्यसमुद्रे लोकः सर्वो निमज्जितस्तावत्॥

[७४]

बाधादूरीकरणे यत्नं संजायते यावत्।
बाधानामथ बाधा स्वतः समुत्पद्यते तावत्॥

[७५]

दृष्टावसंगतं तत्कथनं संश्रूयते यावत्।
स्वमतविरोधः सततं स्पष्टतया कथ्यते तावत्॥

[७६]

नानामतसंघातो बुद्धिं प्रोत्साहयति यावत्।
सा पक्षपातमयता कुण्ठां कामप्युदञ्चयति तावत्॥

[७७]

प्रोद्यन्नवनिर्घोषो मेघानामुन्नतो यावत्।
प्रबलः पवनाऽऽवेगोऽस्तव्यस्तत्वं समादिशति तावत्॥

[७८]

नव्योऽयं जलधारावेगः संप्लावयति यावत्।
अधिकारिवायुयानं नभःप्रदेशे प्रदृश्यते तावत्॥

[७९]

रोमाञ्चोत्थानमिदं हर्षं सम्यक् प्रकाशयति यावत्।
प्रतिपक्षे रोषाणामावेशो दृश्यते तावत्॥

[८०]

वृष्टीनामाक्रमणे जनताकष्टं प्रवर्धते यावत्।
शासनसहायतायां वृद्धिः संजायते तावत्॥

[८१]

एकैकनिम्नतायाः कपाटमुद्घाट्यते यावत् ।
समधिकहर्षैः सोऽयं विशते तत्रैव सत्वरं तावत् ॥

[८२]

व्यवहारनिम्नतायां तीव्रैर्वेगैर्विशति यावत् ।
अन्योलूकीकरणे प्रयासमासेवते तावत् ॥

[८३]

स्वीयं लाभं दृष्ट्वा भक्तं रूपं प्रदर्शयति यावत् ।
सर्वाऽपि कपटमाला सत्वरमुद्घाटिता तावत् ॥

[८४]

भ्रातस्तव प्रतिज्ञापूरणकालः समागतो यावत् ।
नानास्वार्थमयीयं तव हृदये भूमिका तावत् ॥

[८५]

वृद्धाऽवस्थावृद्धिः शनैःशनैर्जायते यावत् ।
नवपापानां गणमा नानारूपेषु वर्धते तावत् ॥

[८६]

वैषम्यं व्यवहारे तव सहसा वर्धितं यावत् ।
नवविदितक्लेशानां परिपाटी वर्धते तावत् ॥

[८७]

एका ललाटरेखा शतधा संकुञ्चिता यावत् ।
वाचि तथा चाङ्गानां संचालनवर्धनं तावत् ॥

[८८]

बुद्धिस्थं कौटिल्यं पुरतः सर्वं समागतं यावत् ।
सर्वेषां निम्नत्वं तव मस्तिष्केन कल्पितं तावत् ॥

[८९]

अर्धा बुद्धिस्त्वयि वा नूनं मनसा विनिश्चितं यावत् ।
अर्धे निखिलो लोकस्तव संस्कारे प्रतिष्ठितस्तावत् ॥

[९०]

पूर्वपुरुषपरिपाटीं वाचा संघोषयसि यावत् ।
नवनाटकाश्रुपातस्तव सर्वेदृश्यते तावत् ।।

[९१]

सन्तोषिता भणितयः कालवशाद् विस्मृता यावत् ।
नूतनकाव्यविपाको बुद्धौ सम्यग् विलासितस्तावत् ।।

[९२]

राष्ट्रपतिशासनमिदं प्रान्तविशेषे प्रघोषितं यावत् ।
मन्त्रीणामुन्मादो सहसैवाऽस्तंगतस्तावत् ।।

[९३]

शिक्षासंस्थाऽऽन्दोलनदुःखस्थितिरुन्नता यावत् ।
अभिभावकजनचिन्ता स्वसुतभविष्ये गता तावत् ।।

[९४]

नवभाषायां भावे व्यवहारेष्वपि नवीनता यावत् ।
प्राचीनानां कुण्ठा पदे पदे प्रोद्धता तावत् ।

[९५]

विश्वस्तधूर्तभावो बुद्धौ सम्यक् प्रतिष्ठितो यावत् ।
हृद्रोगाऽऽक्रमणानां परम्परैषा समागता तावत् ।।

[९६]

जातिगतं वैषम्यं समाजमध्ये प्रतिष्ठितं यावत् ।
दोषाणमपि पटली कृताऽऽस्पदा प्रोद्धता तावत् ।।

[९७]

सौन्दर्योन्मादकताऽन्तरमान्दोलितवती यावत् ।
'नहि नहि नहि नहि' माधुर्यं वाणीनामविषयं तावत् ।।

[९८]

सर्वसमर्पणशोभासम्भारः प्रोद्यतो यावत् ।
कृष्णा मिलिन्दलेखा गुञ्जति परितश्चिरं तावत् ।।

[९९]

परकीया सम्बुद्धिः सद्यः सन्दूरिता यावत् ।
समधिकपैशून्यानां सर्पाः फूत्कारसंगतास्तावत् ॥

[१००]

निखिलब्रह्माण्डानामधीश्वरी सा कृपावती यावत् ।
पापानां मलपटली लुप्ता नो दृश्यते तावत् ॥

[१०१]

यावत्तावद्घटितं शतकं काव्यं समर्पितञ्चैतत् ।
शिवदत्तेन बुधानां सेवायां तन्मुदं तनुताम् ॥

१८९१ + १०१ = १९९२

: २४ :

हा-हा हू-हूसर्गः

[१]

नानाशास्त्राऽम्भोधीनाचम्यापि प्रकर्षमायाताः ।
अयि ते ते ते ते ते ह्यसमञ्जसतामुपागता हा हा ॥

[२]

कथमस्मदीयमेतत्संकल्पितमिति भवेत् कार्यम् ।
कथमस्मद्बुद्धिरियं दूरीभूयाद् ह हा हा हा ॥

[३]

संमानशिखरपरिरोहणगाथानां यः परीपाकः ।
जनजनसंवेद्योऽयं मुखतो जल्पनमहा हा हा ॥

[४]

कार्याणां समवायः कियानयं तुन्दिलो जातः ।
कार्याऽधिक्यविचारे यातः कालो ह हा हा हा ॥

[५]

शीते यद्यदभीष्टं ग्रीष्मे व्यर्थं तदेवाऽभूत् ।
ग्रीष्मे या सामग्री शीते ननु सा ह हा हा हा ॥

[६]

शिखरस्थिताऽपि वार्ता विफलैवाद्यापि जायमानेयम् ।
कोटिव्ययेषु कुरुते केवलमेषा अहो हा हा ॥

[७]

नित्याऽभ्यासनिगीर्णा दुर्घटनैषा पुनर्जाता ।
किं तत्कारणमासीत्पुनरपि समितिः पुनर्हाहा ॥

[८]

श्रीरामस्यैवेयं जन्मधरित्री परमपूज्या ।
कूर्चानां क्रोधानां विषये प्रत्युत्तरं हा हा ॥

[९]

गंगाविमलीकरणे फ्रांसः साहाय्यमाचरति ।
भारतभोजनकर्मणि नव्या वृद्धिः पुनर्हाहा ॥

[१०]

मातङ्गसदृशकायं काठिन्येनैव चालयन्तोऽमी ।
विषमेषुबाणपीडा पीडितकाया अहो हा हा ॥

[११]

विद्युद्गत्या वर्तनमेतेषां नित्यमेव सन्दृष्टम् ।
किन्तु स्वीये कार्ये, परकीये दृश्यते हा हा ॥

[१२]

आज्ञाप्रदानवेलासहस्रजिह्वाः प्रदृश्यन्ते ।
स्वयमणुमात्रे साध्ये केवलमेषा ह हा हा हा ॥

[१३]

सर्वपुरस्काराऽवलिरेषाऽन्येषां ललाटस्था ।
एतेषां च मुखेऽस्मिन् गालीदानं ह हा हा हा ॥

[१४]

एते ते विद्वांसो द्वित्रैः शब्दैः प्रसिद्धिमायाताः ।
वयमेव तत्र तावत्तत्तद्गुरवो ह हा हा हा ॥

[१५]

दिव्यमहोत्सवसुभगः समागमोऽयं विभाव्यते विदुषाम् ।
अर्थानां व्ययकरणे क्षिप्रा वृत्तिर्ह हा हा हा ॥

[१६]

नानानवसद्ग्रन्थप्रकाशने या रुचिर्जाता ।
प्राचीनग्रन्थावलिरस्माकं जायते हा हा ॥

[१७]

किञ्चिच्छ्रमेण विपुलं त्वन्येषां जायते स्वीयम् ।
धनवर्षणमपि पुष्कलरूपं संजायते हा हा ॥

[१८]

"नूनं कः प्रतिषेद्धा" यत्रैवैषा मतिर्जाता।
एका लज्जा त्यक्ता विजितो लोको ह हा हा हा ॥

[१९]

ये बिभ्यति ते समधिकभावेनैवाद्य भर्त्सनीया स्युः।
येऽस्मदुपरिवर्तन्ते तेषामग्रे अहो हा हा ॥

[२०]

"सर्वमहं जानामी" त्येषा या प्रस्तुतिर्व्यक्ता।
विदुषां न तत्र चिन्ता "इतरे मूर्खा" ह हा हा हा ॥

[२१]

विद्यैषा ननु विलयति यतो वयं नैव सन्तुष्टाः।
यद्यस्मत्सम्मानं सा विद्योन्नतिरहा हा हा ॥

[२२]

विद्याऽस्मत्पर्यायः पर्यावरणं च विद्यैव।
विद्या वाऽथ वयं वाऽर्थोस्त्येकः केवलं हा हा ॥

[२३]

सामान्येन समन्तात्संन्तोषः शीघ्रमायाति।
विप्रे वपुषि च विपुलोऽसन्तोषोऽयं अहो हा हा ॥

[२४]

गणिकासिद्धचरित्रं भृतिविद्वद्भिः समीक्ष्यते।
भोक्तव्यं द्रष्टव्यं ग्राह्यम् सर्वं अहो हा हा ॥

[२५]

मा नाम भूत्कदाचित्स्मरणं शंभोः सुनिर्मलं तदिदम्।
अन्यप्रदर्शनार्थं लिङ्गार्चनवैभवं आ हा ॥

[२६]

आलोचना तु काचिद्गुणदोषोभयसमारूढा।
केवलविभवश्लाघैवालोचनमित्यपि तु हा हा ॥

[२७]

यदि गन्धोऽप्यपकर्षे कश्चन शब्दे समायातः ।
नेत्रेऽरुणिमा वाचां विस्फारस्फूर्जनं हा हा ॥

[२८]

एतावच्छ्रमकार्याऽऽलोचनमाद्यः पुरस्कारः ।
यत्रापीत्थं जातं द्वन्द्वस्तत्रैव दृश्यते हा हा ॥

[२९]

यल्लिखितं ननु तस्माच्छतगुणितं संचितं ज्ञानम् ।
प्राचीनेयं वार्ताऽधुनिकी या अहो हा हा ॥

[३०]

किं मम पुस्तकमध्ये मुद्रितमेतन्न जानेऽहम् ।
अन्ये कथयन्ति यदा तदेव संज्ञायते हा हा ॥

[३१]

मन्दितवाचामपि वा योऽयं विभवान्वितो भोगः ।
कथमेतत् प्राग्जन्मार्जितमेतच्चोत्तरं हा हा ॥

[३२]

कृशकाया अपि चैते गज इव पुष्टैर्विनम्यन्ते[1] ।
तदिदं रहस्यजातं नाद्याप्यायाति संमुखे हा हा ॥

[३३]

या माननीयमुद्राशुभ्रेणाऽनेन साधिता सर्वा ।
फलदानेऽनन्तेयं संजाता दृश्यते हा हा ॥

[३४]

करतलदृश्यामलकीफलतुल्यं ज्ञानमेतस्य ।
विद्वत्संघे दृष्टं हो हो हो हो ह हा हा हा ॥

[३५]

सूर्यस्तव वा मम वा नो कर्तुं पृथक्-पृथक् शक्यः ।
तत्राऽपि व्यामोहे तव चैतस्मिन् ह हा हा हा ॥

---

१. ‘गजपुष्टैरपि विनम्यन्ते’ इति पाठान्तरम् ।

[३६]

सांसारिके समुदयेऽप्येतन्नाट्यं कुतः सिद्धम् ।
जन्मस्मृतिरवरुद्धा सर्वा चैषा ह हा हा हा ॥

[३७]

भोक्तव्यं तेनेत्थं कियदद्यापीति चिन्तेयम् ।
नवसंकल्पविकल्पेप्येषा घटना ! ह हो हा हा ॥

[३८]

मिथ्याश्रमः स सर्वोऽप्यवसरसल्लाभ एव वा सर्वः ।
स्वमुखव्यापाराणां स्वयं विभावेष्वहो हा हा ॥

[३९]

शब्दावलीयमेकाप्याम्रेडनवैभवैर्लसिता ।
मन्त्रत्वं सम्प्राप्ता निखिलैवेयं ह हा हा हा ॥

[४०]

गृहपर्यायं स्वां ननु प्रतिपदमुद्घोषयन्तीयम् ।
स्वात्मार्थे यदभीष्टं सदसद् गृह एव हा हा हा ॥

[४१]

गालीदानान्दोलनवेलायां सहजसौन्दर्या ।
यत्प्रतिभा प्राचुर्ये न्यक्कुरुते निखिलमेव वा हा हा ॥

[४२]

क्षणमात्रे विपरीता यस्याश्चेयं विचारवाणी वा ।
स्वस्थं दुःस्थं कुरुते दुस्थं चैवाऽपि हा हा हा ॥

[४३]

एषा भाषणमाला नितान्तवैदुष्यपरिपूर्णा ।
शुद्धबलीवर्दानां मध्ये दत्ता ह हो हा हा ॥

[४४]

श्रुत्वा दिव्यं भाषणमेकः श्रोता तु कश्चिदाहेत्थम् ।
एतस्मात्सुन्दरतरमहं भणामीत्यहो हा हा ॥

[४५]

यस्य तु पितामहाद्यैरपि नो कविता परामृष्टा ।
श्लथयति निखिलां कवितामेषोऽद्यत्वे त्वहो हा हा ॥

[४६]

इयमद्यवर्णसंकरसंसृष्टिर्नवविकासमायाता ।
परिवर्तयते निखिलं सिद्धान्तं सर्वतो हा हा ॥

[४७]

बुद्धौ नास्ति विशुद्धिर्निश्चयभावः कुतो लभ्यः ।
बौद्धानां क्षणवादो निखिलेऽद्यत्वे विलोक्यते हा हा ॥

[४८]

सम्मानकवचमध्ये ह्यापादं मस्तकं सुरक्षायाम् ।
स्थित्वा प्रहरणपटवो विलोक्यतां नित्यमेव वा हा हा ॥

[४९]

स्वीये प्रकोष्ठमध्ये स्थिता इमे विश्वनिन्दका नूनम् ।
अधिकारिणां पुरस्तात् स्तुतिकर्तारः परं हा हा ॥

[५०]

सर्वविधैर्वैदुष्यैर्नितरामपि दूरतोऽप्यसंस्पृष्टाः ।
सर्वेषामपि विदुषामाज्ञा संचालका हा हा ॥

[५१]

आत्मप्रशंसनपरा वाणी कतमोऽस्त्यलंकारः ।
सदलंकारेष्वस्या लुप्तिर्हा हा ह हो हा हा ॥

[५२]

तावन्नास्ति नु शंसा स्वीया यावन्ननिन्दास्या ।
दन्येषामिति कार्या विद्वद्भिः साम्यं हो हा हा ॥

[५३]

कृतमेतत्तन्न कृतं कारितमथ तेन तेन वा तेन ।
पुनरप्यणुमात्रं वा न किमपि जातं ह हो हा हा ॥

[५४]

विच्छिन्नैवेयं सा जाता सर्वाऽपि सुव्यवस्थाऽसीत् ।
अस्वस्थावस्थायामपि भैर्यं हा ह हा हा ॥

[५५]

माधुर्योद्रिकाणां निष्यन्देषु प्रजायमानेषु ।
सावच्छेदकभाषा न्यायविदां हो ह हा हा हा ॥

[५६]

मर्तव्यं ननु सर्वैर्विद्वद्भिश्चाथ जडमूर्खैः ।
दन्तानां व्यथनं तन्नूनं व्यर्थं ह हा हा हा ॥

[५७]

विजयो भूयान्नित्यं विरोधिनां सन्मनुष्याणाम् ।
तथाकथितनेतॄणां विजयो भूयाद् ह हा हा हा ॥

[५८]

अधिकारपदं लब्ध्वा चैते विजयान्विताः पुरुषाः ।
जनताशोषणपटुतां प्रदर्शयन्तां परां हा हा ॥

[५९]

हाहाकारे परितः प्रजायमानेऽपि ते धीराः ।
येषां दृष्टिर्मृतके स्वर्णे निहिता अहो हा हा ॥

[६०]

अतिसुन्दरमणीयं गौरवपूर्णं च विद्यते रूपम् ।
सर्वेषु सर्गेषु च्युतिं न लभतेतरां हा हा ॥

[६१]

आयोजना सुगठिता परिपूर्णेयं सुपरिपुष्टा ।
किन्तु तदीयं मूलं क्वाऽस्ते हो हो ह हा हा हा ॥

[६२]

पाण्डेयानां कर्णे द्विवेदिकथितं किमपि चित्रम् ।
दीक्षितवर्यश्चकितो हा हा ही ह ही हो हा हा ॥

[६३]

शुक्लस्य गृहगमने त्रिपाठिवर्यस्तरङ्गितो भूत्वा।
मार्गे मिलिते मिश्रे प्रेमोन्माथी परं हा हा॥

[६४]

अस्वस्थोऽयमवस्थी सर्वानपि चिन्तितानकरोत्।
चिन्ताचिन्तितमुद्रो दीक्षित एषोऽत्र संस्थितो हा हा॥

[६५]

श्रीमानेष चटर्जी बनर्जिना धारितस्नेहः।
स्वमुखोपाध्यायेऽपि स्निह्यति नितरामहो हा हा॥

[६६]

कियती चैषा दिल्ली 'बिल्ली' वद् या विभाति भूवलये।
बालविनोदावल्यामचला भाषा ह हो हा हा॥

[६७]

गौड़ोऽयं द्रविडेऽस्मिन् मैथिलबुद्धिं निबध्नाति।
तदुपरि तैलङ्गोऽयं विहसति पुरतो ह हो हा हा॥

[६८]

'यद्यागरे का पेडा' 'मथुरे का क्यों नहीं पेड़ा'।
'मथुरा का क्यों पेड़ा' किमुत्तरं दीयतां हा हा॥

[६९]

प्रकृतिहिताय नितान्तं राष्ट्रपतिर्वा प्रवर्ततां नित्यम्।
सन्मन्त्रिमण्डलं तत्प्रवर्ततां हो ह हा हा हा॥

[७०]

नित्यं चुनावचर्चा चिन्हितमाभाति मानसं सत्यम्।
वृत्तानां चित्राणामेषादीप्तिर्हहं हा हा हा॥

[७१]

उष्ट्रोऽयं ननु नीत्वा पिपीलिकां वा प्रयाति निजपृष्ठे।
पृष्टे चैतस्यार्थे गुरोर्मुखे दृश्यते हा हा॥

[७२]

ननु नायमस्ति नियमः सर्वे नियमाः समानाङ्काः।
निर्लिप्तस्तु भवानथ सर्वैर्नियमैर्ह हा हा हा।!

[७३]

अधिकारोऽयं प्राप्तः केनायं दत्त अधिकारः।
खल्वीश्वरेण नियतं त्वदुपर्यपि सोऽस्त्यहो हा हा॥

[७४]

तव पक्षे ह्यद्यत्वे संसिद्धो विद्यते भगवान्।
तव रूपेऽद्यत्वेऽसौ संदृश्य सर्वथा हा हा॥

[७५]

त्वं मित्र, सर्वथाऽपि व्यर्थीभूतस्त्वमेवाऽसि।
सार्थक्यं मन्वानः सर्वस्यापीत्यहो हा हा॥

[७६]

जगदीश्वरेण सर्वा सामग्रीयं समर्पिता तुभ्यम्।
नतमां सा विज्ञाता त्वया कुतोऽपीत्यहो हा हा॥

[७७]

दिव्यं तेजस्तदिदं मनोविनोदैर्युतं लसति।
वार्धक्येऽपि समृद्धिर्नितरां सुस्वागतम् हो हो॥

[७८]

अद्यत्वेषा वार्ता सुप्रकटा साधु संजाता।
याऽसीन्निभृतं गुप्ता, लुप्तं सर्वं ह हा हा हा॥

[७९]

मध्यमनिकायमध्ये बौद्धानां याऽस्ति परिपाटी।
मध्यम एव तु मार्गः साधीयान् भो ह हा हा हा॥

[८०]

प्राणायामपरायणभावे तेषां सुखं सुप्तिः।
सद्यःपाते प्रकटा हो हो हो हो ह हा हा हा॥

[८१]

नामापि तु लुप्तं स्यात्तेषां ये पापमयपुरुषाः ।
रामेत्यादि विधारितनामानस्तादृशा हा हा ॥

[८२]

सन्तो नाम नितान्तं विचरन्तो दुःखभंगाय ।
लोकानां, ते सन्तोऽद्यत्वे जाता सुदुःखदा हा हा ॥

[८३]

स्तुतिरेव केवलेयमवशिष्टा साधु संगमने ।
भो भो अहो भवन्तो शुष्कध्वनिरेव दीयते हा सा ॥

[८४]

सुन्दरतरपरिवेशे सोऽसौ धूर्तः समायातः ।
पश्चात्तु यदा ज्ञातं तदाऽवशिष्टं पुनर्हा हा ॥

[८५]

लुण्ठनकर्मणि दक्षा एतेऽपि तु स्वगृहेऽभ्येत्य ।
तनये स्नेहप्रवणा संजायन्ते विलोक्यतां हा हा ॥

[८६]

सर्वाश्चर्यमयीयं सृष्टिर्वा दृष्टिरेव वा नितराम् ।
सजगा सहजापीयं क्रूरताऽऽलोक्यते हा हा ॥

[८७]

नन्वियमेवाऽशक्तिर्यद्यभविष्यत् सुनिर्ध्याता ।
कालेऽस्मिन् संप्राप्ते तु नाऽभविष्यत्स्वतो हा हा ॥

[८८]

धनशक्तिः पदशक्तिर्नातिमानं [illegible] कुर्यात् ।
क्षणिकं [illegible] चैतत्पर्यन्ते जायते हा हा ॥

[८९]

योऽयं कृपया प्राप्तो भाग्यानां सत्परिश्रमेऽवसरः ।
परिवारव्यतिरिक्तोपकारपरिहारणे हा हा ॥

[९०]

उदराऽभ्यन्तरकरणे मुखारविन्देषु दीप्तिरायाता ।
प्रातस्तत्परिणामे मुखतो निस्सरति केवलं हा हा ॥

[९१]

'डैडी' तथा 'पिताजी' त्यादौ सम्बोधने कलहः ।
सन्ततिरेषा खिन्ना शिरसि दधाना करौ हा हा ॥

[९२]

हिन्दीलेखनभाषणरचनायाः क्षेत्रमद्यत्वे ।
रशियादिभिः प्रभावितमास्ते विदुषामहो हा हा ॥

[९३]

एकोऽयं सत्पिण्डो ब्रह्माण्डानुदरसात्कर्तुम् ।
सततं विचेष्टमानो गृह्णात्येवाऽभितो हा हा ॥

[९४]

मित्राणामपि संख्या सततं सवर्धमानेयम् ।
धनबुद्धिश्रमसमयानां हानौ परिणता हा हा ॥

[९५]

इदमस्त्येकं मित्रं मित्रत्वे भूतपूर्वतां यातम् ।
तुच्छादपि तुच्छतरं संजातं दृश्यते हा हा ।

[९६]

एतावतापि समयेन न तावत्सा करगता शिक्षा ॥
परिवर्तनशीलत्वं सर्वत्रैव प्रदृश्यतां हा हा ॥

[९७]

आसीदपशब्दानामुपहारे यः सुविख्यातः ।
छायेवाद्य स तेषामनुगमने दृश्यते हा हा ॥

[९८]

[illegible] दृष्ट्वा नो गर्जति नो पराक्रमते ।
साहाय्यार्थं पश्यति [illegible] हा हा ॥

[९९]

नीतीनां नैवायं कोऽपि विचारप्रचारसंचारः ।
वैयक्तिकं तदेतत्सर्वं कोलाहलादिकं हा हा ॥

[१००]

मानेनोन्नतकायो दिव्यप्रभयान्वितः पुरुषः।
मायाऽहंकाराणां मध्ये पतितश्चिराय हा हा हा ॥

[१०१]

यत् त्यक्तं तत् त्यक्तं नो वाऽऽयातं करे किञ्चित्।
नानाऽऽयोजनकरणेऽद्याप्ययं शूर इति हा हा ॥

[१०२]

यजमानानां पक्षे ह्याहुतिरद्यापि देयैव।
किन्तु स्वाहा स्वाहा मध्ये संश्रूयते हा हा ॥

[१०३]

शिवनिर्माल्यमपीदं सम्यक् संभुज्यतां नाम।
येयं त्रिशूलबाधा कुतो न सा निस्सरेत् हा हा ।

[१०४]

अद्यत्वे तु पलायनवादोऽयं निखिलवादमूर्धन्यः।
यावत् कोणे दृष्टं ततः पलायनमहो हा हा ॥

[१०५]

भवतां पराजयेऽहं पराजितं स्वं सदैव कलयामि।
तत्रापि च नो विश्वासो भवदीयः किमुच्यते हा हा ॥

[१०६]

सर्वसमर्थो नेता केवलमर्थार्थमाभ्रमति।
जन्मान्तरीयमेतत्सर्वं बत विद्यते हा हा ॥

[१०७]

संसारक्लेशानां तरणं सच्चिन्मयीभवनम्।
उपदेष्टरि नो दृष्टं श्रोतृसमाजेऽपि जायते हा हा ॥

[१०८]

अहमेव धन्य धन्यश्चान्ये सर्वे मदान्धा वा।
परिगणनीया एते एतेषामुपरि जायतां हा हा ॥

[१०९]

जीवनमेव समापितमेताभिर्नो कृतः प्रणयः।
परिणयपरिणतिरपि सा सदैव दूरस्थिता हा हा ॥

[११०]

एकेन वैकया वा सहबन्धो जीवने कारा ।
नैकैर्नैकाभिर्ननु संश्लेषे किं सुखं हा हा ॥

[१११]

गन्धर्वाणां संज्ञा हा हा हू हू मता कोशे ।
गन्धर्वत्वं निखिले लोके संदृश्यते हा हा ॥

[११२]

मतमेतद्विपरीतं यद्यपि, स्वर्णोपहारयुतम् ।
तस्मादथ संजातं कमनीयं चैतदपि हा हा ॥

[११३]

पूर्वपुरुषभणितीनां गाथा चैषा पुरातनी जाता ।
तस्यै सर्वस्यै वा प्रदीयतामद्य केवलं हा हा ॥

[११४]

अनवीकृतदेहानां पुरातनानां शवत्वं स्यात् ।
दुर्गन्धैः परिपूर्णास्ते स्युस्तद्दर्शने हा हा ॥

[११५]

कायाकल्पात्तावत् पुरातने नूतनत्वमायातम् ।
तच्च धनव्ययसाध्यं नो सर्वत्रेत्यतो हा हा ॥

[११६]

सेयं क्रिकेटक्रीडाऽन्ताराष्ट्रीया सुसंजाता ।
पुरातनक्रीडाभ्योऽद्यत्वे संजायते हा हा ॥

[११७]

गोलीध्वन्याघातात्प्राणाघाते युगे ह्यस्मिन् ।
धनुषामथ बाणानां खड्गानां जायते हा हा ॥

[११८]

बाष्पानां यानानामद्यत्वे क्षिप्रकारिता येयम् ।
रथशकटीनरयानेष्वद्येयं जायते हा हा ॥

[११९]

स्थायीभावत्वस्यावाप्त्यर्थं यः श्रमः क्रियते ।
व्यभिचारिणां विलुप्तिस्तेनेयं जायते हा हा ॥

१९९२+११९=२१११

ग्रन्थकार-परिचयः

नाम — डॉ० शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी

पितृनाम — म० म० पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी

जन्मस्थान — ८८६ गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी मार्ग [पानों का दरीबा] जयपुर (राजस्थान)

जन्मतिथि — १६ अप्रैल १९३४,

उपार्जितयोग्यता — व्याकरणाचार्य, साहित्याचार्य, बी. ए., एम्. ए., पी-एच्.डी.

१२ स्वर्ण तथा रजत पदक प्राप्त ।

कार्य — रीडर एवं अध्यक्ष - साहित्य विभाग, संस्कृत संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी ।

प्रकाशित कृतियाँ —

संस्कृत — (१) गोस्वामितुलसिदासशतकम् (२) स्फूर्ति
(३) संस्कृते नारीशब्दचित्रावलिः (४) राष्ट्र
(५) (हिन्दी) चतुर्दिक् (६) चरण
(७) वाल्मीकि रामायण में राजनीति

सम्पादन — (८) साहित्यिक निबन्ध (९) अ
(१०) चतुर्वेदिसंस्कृतरचनावलिः (११) निबन्धादर्शः
(१२) अलंकारों का क्रमिक विकास (१३) छवि की किरणें
(१४) भगवान् श्रीकृष्ण और शिवतत्त्व (१५) सहस्रनामसंग्रहः
(१६) देवीसहस्रनामसंग्रहः (१७) प्रत्यालोचन
(१८) संस्कृत वाङ्मय में त्रैगुण्य (१९) गीताव्याख्यानमाला
(२०) उपनिषद् परिशीलन (२१) अश्वधाटीघटा
(२२) योग विशेषांक (२३) गोरक्षा विशेषांक
(२४) हनुमान् विशेषांक (२५) कलाधर अभिनन्दन ग्रंथ
(२६) रेखा । (२७) मासिक पत्रिका 'ललिता'

अनुवाद — (२८) भारतीय दर्शनों में आत्मा (२९) सिद्धान्त रहस्यम्
(३०) गुरुनक्षत्रमाला ।

विभिन्न पत्रों में संस्कृत तथा हिन्दी में प्रायः १५० निबन्ध प्रकाशित ।

संस्थापक सदस्य — (१) गिरिधर साहित्यिक शोध संस्थान ।
(२) गीर्वाणवाग्वर्धिनी परिषद्, जयपुर ।
(३) वाराणसेय संस्कृत संसद् ।
(४) कवि भारती । (५) आन्वीक्षिकी, वाराणसी ।

सुदर्शन मुद्रक, ६३/४२, उत्तर बेनिया बाग, वाराणसी । फोन : ६५७०८

१५०/=